नवंबर, 2020
I.S.S.N. : 2457-0486

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग, प्रभारी वि.सा.प्र.

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन, विधि
संकाय लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

ISSN 2457-0486

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2020 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0486

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

नवंबर, 2020 अंक - 11

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

असलम खान

(2020) 2 दा. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.

दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

हमारे देश में बलात्संग की घटनाएं अभी भी प्रायः देखने को मिलती हैं और यह अपराध भारतीय समाज में एक महामारी के रूप में सामने आया है । यद्‌यपि इस अपराध को रोकने के लिए विधानमंडल और न्यायालयों द्‌वारा भरसक प्रयास किए गए हैं किंतु अपराध में कमी आने की संभावना दिखाई नहीं देती है । "स्टेटिस्टा डॉट कॉम" के अनुसार वर्ष 2013 में 33707 और वर्ष 2016 में 38947 तथा वर्ष 2019 में 32032 बलात्संग के मामले पाए गए । इस प्रकार यदि वर्ष 2005 से लेकर 2019 तक का औसत निकाला जाए तो प्रतिवर्ष बालत्संग के 30000 मामले सामने आते हैं । फिर भी यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि बलात्संग संबंधी कानून का दुरुपयोग भी किया जाता है और अनावश्यक ही किसी पुरुष को अपराध में फंसा दिया जाता है जिससे उसकी आर्थिक स्थिति को ही नहीं अपितु उसके मान-सम्मान को भी क्षति पहुंचती है । इस अंक में **उत्तम सिंह** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य,** (2020) 2 दा. नि. प. 727 वाला मामला इस स्थिति को बखूबी प्रकट करता है ।

दूसरी ओर नशीले पदार्थों का सेवन और उनकी तस्करी के अपराध भी देश में बढ़ते दिखाई दे रहे हैं । "द ट्रिब्यून" के अनुसार महाराष्ट्र राज्य में वर्ष 2017 से 2019 के बीच 40987 मामले अधिकतम संख्या के रूप में सामने आए हैं और पंजाब राज्य दूसरे स्थान पर आंका गया है जहां इस अवधि के दौरान कुल 35546 मामले पाए गए । इन मामलों में कार्यवाही किए जाने के लिए स्वापक ओषधि और मन: प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 50 का अनुपालन किया जाना अत्यंत आवश्यक है जिसके अनुसार यह आज्ञापक है कि अभियुक्त की तलाशी किसी मजिस्ट्रेट या किसी राजपत्रित अधिकारी के समक्ष ली जानी चाहिए और केवल अभिग्रहण ज्ञापन आदि पर अभियुक्त के हस्ताक्षर या अंगूठे की छाप ले लेने से धारा 50 की औपचारिकता पूर्ण नहीं मानी जा सकती । इस स्थिति को **नंदन कुमार महंता** बनाम **ओडिशा राज्य,** (2020) 2 दा. नि. प. 587 वाले मामले में ठीक प्रकार स्पष्ट किया गया है ।

इस अंक में दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 के अतिरिक्त अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी है जिसका आप परिशीलन करें और अपने अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं । इस अंक में सामाजिक कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है । यह अंक विधि-विद्‌यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

असलम खान
संपादक

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

नवंबर, 2020

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
उत्तम सिंह **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	727
कन्हैया लाल **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	715
करुणा डेका **बनाम** असम राज्य और अन्य	627
कुप्पुसामी और अन्य **बनाम** तमिलनाडु राज्य	681
टी. आर. कुंजम **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य	659
ठाकोर किंजलबेन रगनाथभाई मार्फत हंसाबेन रगनाथभाई ठाकोर **बनाम** गुजरात राज्य	607
नंदन कुमार महंता **बनाम** ओडिशा राज्य	587
पूनम रानी और अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य और अन्य	600

संसद् के अधिनियम

दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1–17

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम, 1971 (1971 का 34)

– धारा 3 – अधिनियम के अधीन यथा अनुबंधित की अवधि से परे गर्भ का चिकित्सीय समापन – अनुमति – एक 14 वर्षीय बालिका द्वारा बलात्संग के परिणामस्वरूप गर्भधारण करना – गर्भ का 20 सप्ताह और 6 दिन की अवधि का होने के कारण गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम के अधीन गर्भ के समापन हेतु उच्च न्यायालय की विशेष अनुमति का अपेक्षित होना – बालक को अपनी कोख में रखने, उसे जन्म देने तथा उसकी परवरिश के कारण माता, जो स्वयं अभी बालिका है, को अत्यधिक शारीरिक और मानसिक वेदना, कष्ट और अनेक प्रकार की सामाजिक तथा आर्थिक समस्याएं आने की संभावना – जन्म लेने वाले बालक में भी शारीरिक और मानसिक अप्रसमानताएं होने की संभावना – याची की चिकित्सीय रिपोर्टों, उसकी साथ घटी बलात्संग की घटना और पारिणामिक गर्भाधान के कारण उसे होने वाले सतत् मनस्ताप तथा सर्वोत्तम हित के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय ने गर्भ समाप्त करने की अनुमति प्रदान की ।

ठाकोर किंजलबेन रगनाथभाई मार्फत हंसाबेन रगनाथभाई ठाकोर बनाम **गुजरात राज्य** 607

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 439 के अधीन जमानत याचिका – याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 452, धारा 376, धारा 506, धारा 323 और धारा

पृष्ठ संख्या

34 के अधीन मामला रजिस्टर किए जाने पर याची को गिरफ्तार किया जाना – अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से पीड़िता (आयु लगभग 45 वर्ष) के कक्ष में घुसकर उस पर यौन हमला किया जाना – इसी दौरान अभियुक्त की पत्नी का एक अन्य महिला के साथ पीड़िता के कक्ष में प्रवेश करना और पीड़िता की पिटाई करना – पीड़िता की चीख-पुकार सुनकर उसकी पुत्रवधु द्वारा उसके कक्ष से आकर उसे बचाया जाना – परिस्थितियों से यह प्रतीत होता है कि पीड़िता और अभियुक्त के बीच पूर्व में निकट संबंध थे क्योंकि पीड़िता हमले के समय घर पर अकेली नहीं थी और उसकी पुत्रवधु घर पर मौजूद थी और इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि यौन हमले के समय पीड़िता ने कोई चीख-पुकार नहीं की थी अन्यथा उसकी पुत्रवधु पहले ही उसके कक्ष में आ जाती – इसके अतिरिक्त चिकित्सा रिपोर्ट में भी प्रवेशनात्मक यौन हमले की संभावना से इनकार किया गया है और न्यायालय में चालान भी प्रस्तुत कर दिया गया है तथा अभियुक्त से किसी प्रकार की बरामदगी भी नहीं की जानी है अतः इन सभी परिस्थितियों में अभियुक्त को जमानत दिया जाना साधारण नियम है और जमानत से इनकार करना एक अपवाद और साथ ही न्यायशास्त्र के इस सिद्धांत को भी सर्वोपरि रखते हुए कि कोई व्यक्ति तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक उसका अपराध साबित न कर दिया जाए, अभियुक्त को जमानत मंजूर करना न्यायोचित है ।

उत्तम सिंह बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 727

पृष्ठ संख्या

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 212 – किसी अपराधी को संश्रय देना और उसे दंड से प्रतिच्छादित करना – हत्या के मामले में संलिप्त अभियुक्त का फरार हो जाना – फरार अपराधी के पिता/वर्तमान अपीलार्थी पर अपने पुत्र को संश्रय दिए जाने का आरोप लगाया जाना – केवल यह तथ्य कि अपीलार्थी, अभियुक्त का पिता है, यह उपधारणा बनाए जाने का आधार नहीं हो सकता कि उसने अपने पुत्र को संश्रय देकर उसे दंड से प्रतिच्छादित करने का प्रयास किया है – अत: अभियोजन पक्ष दंड संहिता की धारा 212 के अधीन समुचित रूप से अपराध का गठन करने में असफल रहा है और अभियुक्त दोषमुक्ति का हकदार है ।

कन्हैया लाल बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 715

– धारा 364 – फिरौती के लिए व्यपहरण – अभिकथित रूप से घरेलू नौकर द्वारा अन्य अभियुक्तों के साथ मिलकर इत्तिलाकर्ता के ढ़ाई वर्षीय पुत्र का अपहरण किया जाना – फिरौती की मांग – पुलिस द्वारा अभियुक्त को अपहृत बालक के साथ गिरफ्तार किया जाना – अभियोजन पक्ष द्वारा केवल तीन साक्षियों की परीक्षा किया जाना – अनेक सारवान्/प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों, अर्थात् बालक को छुड़ाने गए पुलिस उप अधीक्षक, बालक के दादा आदि की परीक्षा न किया जाना – अन्वेषण अधिकारी द्वारा मामले के अनेक सारवान् पहलुओं के संबंध में अन्वेषण न करना, जैसे कि अपहरण के स्थल के आस-पास के किसी व्यक्ति या बालक को छुड़ाए जाने के स्थल के आस-पास के किसी

पृष्ठ संख्या

व्यक्ति से पूछताछ न करना – फिरौती की रकम को बालक के छुड़ाए जाने के स्थल तक ले जाने और अपहरण के पश्चात् बालक के घर पर लैंडलाइन पर आई और रिकार्ड की गई फिरौती संबंधी कॉलों संबंधी साक्ष्य को अभिलेख पर न लाया जाना – अभियुक्त के साथ गिरफ्तार किए गए व्यक्ति से अभिगृहीत कागज पर लिखे टेलीफोन नंबर को अभिनिश्चित नहीं किया जाना – बालक के माता-पिता द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य का केवल अनुश्रुत साक्ष्य होने के कारण स्वीकार्य न होना – इन सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए माननीय उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अभियोजन पक्ष सभी सुसंगत संदेहों से परे अभियुक्त का दोष साबित करने में असफल रहा है – अतः, दोषसिद्धि को अपास्त किया गया ।

करुणा डेका बनाम **असम राज्य और अन्य** 627

– धारा 494 और 120ख [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 482] – के अधीन कार्यवाहियों को अभिखंडित करने का अनुरोध – पति द्वारा यह आरोप लगाया जाना कि विवाह के समय अभियुक्त पत्नी का एक जीवित पति विद्यमान था – सह-अभियुक्तों पर यह आरोप लगाया जाना कि उन्होंने अभियुक्त को, उसका पति जीवित होते हुए भी दूसरे विवाह हेतु तैयार किया – सह-अभियुक्तों द्वारा स्वयं यह तथ्य स्वीकार किया जाना कि उक्त विवाह अभियुक्त पत्नी का दूसरा विवाह था – इन तथ्यों को विचार में लेते हुए यह स्पष्ट है कि अभियुक्त पत्नी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 494 के अधीन दांडिक मामला

पृष्ठ संख्या

बनता है और अन्य सह-अभियुक्तों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 494 और 120ख के अधीन दांडिक मामला बनता है और इस प्रकार कार्यवाहियां विखंडित किए जाने की दायी नहीं हैं ।

पूनम रानी और अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य और अन्य** 600

– धारा 498क और धारा 304ख – दुर्व्यवहार की मांग – दुर्व्यवहार, क्रूरता और प्रताड़ना – मृतका द्वारा विवाह के छह माह के भीतर फांसी लगाकर आत्महत्या किया जाना – दहेज मृत्यु का आरोप – मृतका के माता-पिता द्वारा यह आरोप लगाया जाना कि उनकी पुत्री ने अपने ससुराल पक्ष की ओर से दहेज की मांग पूरा न किए जाने के कारण किए जा रहे दुर्व्यवहार के कारण आत्महत्या की – मृतका के माता-पिता द्वारा यह स्वीकार किया जाना कि उन्होंने विवाह के समय स्वेच्छा दहेज दिया – उनके द्वारा यह प्रकथन किया जाना कि उन्होंने दहेज के रूप में 40 स्वर्ण मुद्राएं और पांच लाख रुपए की नकद राशि का संदाय किया था – किन्तु वर्तमान मामले के संस्थित होने के पश्चात् पक्षकारों के बीच पंचायत के समक्ष एक करार किया जाना जिसके अनुसार अभियुक्तों द्वारा दहेज में दी गई सभी सामग्रियों को मृतका के माता-पिता को लौटा दिया गया है – उक्त करार में केवल पचास हजार रुपए की नकद राशि का उल्लेख किया जाना – पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा उक्त करार के संबंध में विवाद न उठाया जाना – इसके अतिरिक्त मृतका के माता-पिता और भाई द्वारा दहेज की मांग के संबंध में अस्पष्ट आरोप लगाना

पृष्ठ संख्या

क्योंकि इस प्रकार के आरोप पूर्व में न तो आरडीओ के समक्ष लगाए गए थे और न ही प्रतिपरीक्षा में उनकी समुचित रूप से पुष्टि की गई – अभियुक्त द्वारा यह अभिवाक् किया जाना कि उसकी पत्नी ने उदर में पीड़ा के बने रहने के कारण हताशा में आत्महत्या की है – अभियोजन पक्ष का अभियुक्तों द्वारा दहेज की मांग के कारण मृतका के दुर्व्यवहार को साबित करने के लिए अभिलेख पर समुचित साक्ष्य प्रस्तुत करने में असमर्थ रहना – अभियुक्तों द्वारा भी यह साबित करने हेतु पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहना कि मृतका ने उदर-पीड़ा के कारण आत्महत्या की है – केवल इस कारण से कि मृतका ने विवाह के अनुष्ठापन के छह माह के भीतर आत्महत्या की है, यह उपधारणा नहीं की जा सकती कि दहेज मृत्यु कारित की गई है – उपरोक्त परिस्थितियों में अभियुक्त संदेह का लाभ दिए जाने हेतु हकदार हैं – अत: दोषसिद्धि उचित नहीं है और अपास्त किए जाने की दायी है ।

कुप्पुसामी और अन्य बनाम **तमिलनाडु राज्य** 681

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49)

– धारा 13(1)(ङ) – लोक सेवक पर भ्रष्टाचार का आरोप – लोक सेवक के पास अभिकथित रूप से आय के ज्ञात स्रोतों से अननुपातिक रूप में संपत्ति का पाया जाना – लोक सेवक द्वारा पाई गई संपत्ति के संबंध में लेखा-जोखा दिया जाना – लोक सेवक द्वारा आरोप पत्र फाइल किए जाने से पूर्व सुनवाई का एक अवसर प्रदान करने का अनुरोध किया जाना – अनुरोध की अनदेखी

पृष्ठ संख्या

करते हुए अन्वेषण अभिकरण द्वारा आरोप पत्र फाइल किया जाना – इससे व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा वर्तमान रिट याचिका फाइल किया जाना – उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि किसी लोक सेवक के विरुद्ध भ्रष्टाचार के मामले में आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व लोक सेवक को सुनवाई का अवसर प्रदान करना आवश्यक नहीं है ।

टी. आर. कुंजम बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 659

स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61)

– धारा 20(ख)(ii)(इ) और धारा 50 – अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से 30 किलोग्राम विनिषिद्ध गांजे को अविधिपूर्ण रूप से कब्जे में रखा जाना – सार्वजनिक स्थान पर तलाशी का लिया जाना और अभिग्रहण किया जाना – स्वतंत्र साक्षियों द्वारा अभियोजन पक्षकथन का समर्थन न किया जाना – अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर भारतोलन चार्ट, पीतल की मुद्रा और विनिषिद्ध पदार्थ के द्वितीय नमूना पैकेट को प्रस्तुत न किया जाना – इत्तिलाकर्ता और अन्वेषण अधिकारी का समान व्यक्ति होने के कारण प्रतिरक्षा पक्षकथन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना – एनडीपीएस अधिनियम के अन्य आज्ञापक उपबंधों के साथ उसकी धारा 50 के अधीन उपबंधित आज्ञापक प्रक्रिया का अनुपालन न किया जाना, जिसके निबंधनानुसार यह आज्ञापक है कि तलाशी अनिवार्य रूप से किसी मजिस्ट्रेट या किसी राजपत्रित अधिकारी की उपस्थिति में ली जाए – किन्हीं पूर्व-मुद्रित प्ररूपों पर अभियुक्त के अंगूठे के निशान प्राप्त कर लेने

पृष्ठ संख्या

मात्र से धारा 50 का अनुपालन स्थापित नहीं होता तथा धारा 50 का अननुपालन अभियोजन पक्षकथन के लिए घातक है – इस प्रकार अभियोजन पक्ष सभी सुसंगत संदेहों से परे अपने पक्षकथन को साबित करने में असफल रहा है, अतः अभियुक्त दोषमुक्ति का हकदार है ।

नंदन कुमार महंता बनाम **ओडिशा राज्य** 587

नंदन कुमार महंता

बनाम

ओडिशा राज्य

(2017 की दांडिक अपील सं. 562)

तारीख 12 मार्च, 2020

न्यायमूर्ति बी. पी. रौतरे

स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61) – धारा 20(ख)(ii)(इ) और धारा 50 – अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से 30 किलोग्राम विनिषिद्ध गांजे को अविधिपूर्ण रूप से कब्जे में रखा जाना – सार्वजनिक स्थान पर तलाशी का लिया जाना और अभिग्रहण किया जाना – स्वतंत्र साक्षियों द्वारा अभियोजन पक्षकथन का समर्थन न किया जाना – अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर भारतोलन चार्ट, पीतल की मुद्रा और विनिषिद्ध पदार्थ के द्वितीय नमूना पैकेट को प्रस्तुत न किया जाना – इत्तिलाकर्ता और अन्वेषण अधिकारी का समान व्यक्ति होने के कारण प्रतिरक्षा पक्षकथन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना – एनडीपीएस अधिनियम के अन्य आज्ञापक उपबंधों के साथ उसकी धारा 50 के अधीन उपबंधित आज्ञापक प्रक्रिया का अनुपालन न किया जाना, जिसके निबंधनानुसार यह आज्ञापक है कि तलाशी अनिवार्य रूप से किसी मजिस्ट्रेट या किसी राजपत्रित अधिकारी की उपस्थिति में ली जाए – किन्हीं पूर्व-मुद्रित प्ररूपों पर अभियुक्त के अंगूठे के निशान प्राप्त कर लेने मात्र से धारा 50 का अनुपालन स्थापित नहीं होता तथा धारा 50 का अननुपालन अभियोजन पक्षकथन के लिए घातक है – इस प्रकार अभियोजन पक्ष सभी सुसंगत संदेहों से परे अपने पक्षकथन को साबित करने में असफल रहा है, अत: अभियुक्त दोषमुक्ति का हकदार है ।

अपील का निपटारा करने हेतु संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 3 नवंबर, 2014 को प्रात: 7.45 बजे जब अभि. सा. 3, उत्पाद शुल्क निरीक्षक, कटक अपने कर्मचारिवृंद के साथ अपनी पेट्रोल ड्यूटी निभा रही थी तो उसने अभियुक्त को कटक रेलवे स्टेशन के द्वार सं. 2 के सामने त्रिनाथ मंदिर के समीप दो भरे हुए जेरी बस्तों के ऊपर बैठे हुए देखा । उन्हें देखकर अपीलार्थी ने वहां से भागने की चेष्टा की तब अभि. सा. 3 ने अभि. सा. 1, जो उत्पाद शुल्क सहायक उप निरीक्षक के पद पर तैनात है, के साथ उसके पीछे दौड़ी और उन्होंने उसे इस संदेह के आधार पर निरुद्ध किया कि उसने उन दो जेरी बस्तों के भीतर कोई विनिषिद्ध पदार्थ रखा है । तद्नुसार तलाशी की सभी औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् उसने कुल 30 किलोग्राम विनिषिद्ध गांजे, अर्थात् प्रत्येक जेरी बस्ते में 15 किलोग्राम गांजे का अभिग्रहण किया जो अपीलार्थी के कब्जे में था । उसके पश्चात् अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया और अभि. सा. 3 ने उसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया तथा तदुपरांत उसने स्वयं इस मामले का अन्वेषण आरंभ किया । अभि. सा. 3 ने अपनी अंतिम पीआर तारीख 1 मई, 2015 को प्रस्तुत की और उसके पश्चात् अभियुक्त का विचारण आरंभ हुआ । विद्वान् विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी उस पर लगाए गए आरोपों संबंधी अपराध का दोषी है और तद्नुसार उपरोक्तानुसार उसे सिद्धदोष ठहराया गया । उक्त निर्णय तथा आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में वर्तमान अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोजन पक्षकथन यह है कि कुल 30 किलोग्राम वजन वाले गांजे का अभिग्रहण दो जेरी बस्तों से किया गया था और उनका भारतोलन करने के पश्चात् उसे उन्हीं बस्तों में सीलबंद कर दिया गया था तथा उन पर अभि. सा. 3 की पीतल मुद्रा को चिह्नित किया गया था । उक्त पीतल मुद्रा समय पर स्वतंत्र साक्षी अभि. सा. 4 को

उपलब्ध कराई गई थी किंतु अभि. सा. 4 ने अभियोजन के इस पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है और न ही कोई पीतल मुद्रा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई है । जब अभिग्रहण किसी सार्वजनिक स्थल पर किया गया है और भारतोलन चार्ट को प्रस्तुत नहीं किया गया है और न ही पीतल मुद्रा को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है तथा स्वतंत्र साक्षी ने भी अभियोजन पक्ष की कहानी का समर्थन नहीं किया है तो किसी विशिष्ट मात्रा में विनिषिद्ध पदार्थ के अभिग्रहण संबंधी अभियोजन पक्षकथन के संबंध में गंभीर संदेह उत्पन्न होते हैं । अभियोजन पक्ष का यह कर्तव्य है कि वह स्पष्ट और अकाट्य साक्ष्य प्रस्तुत करके अभियुक्तों के कब्जे में विनिषिद्ध पदार्थ होने के तथ्य और उसके अभिग्रहण को साबित करे । किंतु वर्तमान मामले में ऐसा नहीं किया गया है । अभियोजन पक्षकथन को आगे और जोखिम में डालते हुए यह तथ्य सामने आता है कि विनिषिद्ध पदार्थ के द्वितीय नमूना पैकेट को भी अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है तथा इस संबंध में अभियोजन पक्ष की ओर से कोई स्पष्टीकरण भी उपलब्ध नहीं कराया गया है । अभियोजन पक्षकथन के विरुद्ध एक अन्य महत्वपूर्ण बिंदु जो अभिलेख के परिशीलन पर सामने आया है, यह भी है कि वर्तमान मामले में इत्तिलाकर्ता ही अन्वेषण अधिकारी है । अभि. सा. 3 वही अधिकारी है जिसने अभियुक्त के पास विनिषिद्ध पदार्थ होने के तथ्य का पता लगाया था, उसने ही तलाशी ली तथा अभिग्रहण भी उसके द्वारा किया गया, इसके अतिरिक्त उसी ने ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की और साथ ही संपूर्ण अन्वेषण का भी संचालन किया । वर्तमान मामले में जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 के आज्ञापक उपबंधों का अनुपालन नहीं किया गया है और साथ ही विनिषिद्ध पदार्थ के भारतोलन, पीतल मुद्रा को प्रस्तुत न किए जाने और द्वितीय नमूना (विनिषिद्ध पदार्थ) पैकेट को प्रस्तुत न किए जाने से संबंधित गंभीर संदेह भी विद्यमान हैं । अत: उपरोक्त परिस्थितियों के अधीन सुरक्षित रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि निश्चित रूप से अभि. सा. 3 के आचार, जिसमें वह इत्तिलाकर्ता होते हुए भी मामले की अन्वेषण अधिकारी बन गई, के कारण अपीलार्थी

के पक्षकथन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । अभियुक्त के हितों पर पड़े इस प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव को ध्यान में रखते हुए और साथ ही अन्य त्रुटियों तथा एनडीपीएस अधिनियम के अधीन विहित आज्ञापक उपबंधों के अननुपालन को विचार में लेते हुए यह निष्कर्ष नहीं निकला जा सकता कि अभियोजन ने सभी युक्तियुक्त संदेहों से परे अपने पक्षकथन को साबित किया है और इस प्रकार विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि न्यायोचित प्रतीत नहीं होती है । अत: वह अपास्त किए जाने के लिए दायी है । इसके परिणामस्वरूप अपील मंजूर की जाती है, दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है और यह निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी को अभिरक्षा से तुरंत निर्मुक्त किया जाए । (पैरा 10, 11, 13, 14 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 170 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 एस. सी. 570 : **वरिन्दर कुमार** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ;	12
[2018]	(2018) 18 एस. सी. सी. 380 = ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 2123 : **आरिफ खान** उर्फ **आगा खान** बनाम **उत्तराखंड राज्य** ;	9
[2018]	ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 3853 = 2019 क्रिमिनल ला जर्नल 420 (एस. सी.) : **मोहन लाल** बनाम **पंजाब राज्य** ।	12

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2017 की दांडिक अपील सं. 562.

तृतीय अपर सेशन न्यायाधीश, कटक के न्यायालय द्वारा 2014 के दांडिक मामला सं. 15 में तारीख 5 जुलाई, 2017 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध अपील ।

याचिओं की ओर से जे. कामिला

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एस. के. नायक, अपर सरकारी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति बी. पी. रौतरे – वर्तमान अपील के माध्यम से अपीलार्थी ने तृतीय अपर सेशन न्यायाधीश, कटक के न्यायालय द्वारा 2014 के 2(क) दांडिक मामला सं. 15 में तारीख 5 जुलाई, 2017 को पारित दोषसिद्धि के उस निर्णय और दंडादेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को, जो इस मामले में एकमात्र अभियुक्त है, स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'एनडीपीएस अधिनियम' कहा गया है) की धारा 20(ख)(ii)(इ) के अधीन दंडनीय अपराध को कारित करने के लिए 10 वर्ष के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया था और 1,00,000/- रुपए का जुर्माना भी अधिरोपित किया था ।

2. संक्षेप में अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि तारीख 3 नवंबर, 2014 को प्रात: 7.45 बजे जब अभि. सा. 3, उत्पाद शुल्क निरीक्षक, कटक अपने कर्मचारिवृंद के साथ अपनी पेट्रोल ड्यूटी निभा रही थी तो उसने अभियुक्त को कटक रेलवे स्टेशन के द्वार सं. 2 के सामने त्रिनाथ मंदिर के समीप दो भरे हुए जेरी बस्तों के ऊपर बैठे हुए देखा । उन्हें देखकर अपीलार्थी ने वहां से भागने की चेष्टा की तब अभि. सा. 3 ने अभि. सा. 1, जो उत्पाद शुल्क सहायक उप निरीक्षक के पद पर तैनात है, के साथ उसके पीछे दौड़ी और उन्होंने उसे इस संदेह के आधार पर निरुद्ध किया कि उसने उन दो जेरी बस्तों के भीतर कोई विनिषिद्ध पदार्थ रखा है । तद्नुसार तलाशी की सभी औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् उसने कुल 30 किलोग्राम विनिषिद्ध गांजे, अर्थात् प्रत्येक जेरी बस्ते में 15 किलोग्राम गांजे का अभिग्रहण किया जो अपीलार्थी के कब्जे में था । उसके पश्चात् अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया और अभि. सा. 3 ने उसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया तथा तदुपरांत उसने स्वयं इस मामले का अन्वेषण आरंभ किया । अभि. सा. 3 ने अपनी अंतिम पीआर तारीख 1 मई, 2015 को प्रस्तुत की और उसके पश्चात् अभियुक्त का विचारण आरंभ हुआ ।

3. दूसरी ओर अपीलार्थी ने इस घटना से पूर्णतया इनकार करने तथा मिथ्या आरोप लगाए जाने का अभिवाक् किया ।

4. आरोपों को सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष ने 4 साक्षियों की परीक्षा की तथा 4 प्रदर्शों को न्यायालय के समक्ष चिह्नित करके प्रस्तुत किया । दूसरी ओर प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से एक साक्षी की परीक्षा की गई और उन्होंने कुल 9 दस्तावेजों को चिह्नित किया ।

5. विद्वान् विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी उस पर लगाए गए आरोपों संबंधी अपराध का दोषी है और तद्नुसार उपरोक्तानुसार उसे सिद्धदोष ठहराया गया ।

6. उक्त निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने वर्तमान अपील के माध्यम से यह प्रतिवाद किया है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने सुसंगत संदेहों से परे सबूत की अनुपस्थिति में उसे उस पर लगाए गए आरोपों संबंधी अपराध हेतु सिद्धदोष ठहरा कर गंभीर रूप से अविधिपूर्ण कार्य किया है । अपीलार्थी द्वारा सर्वप्रथम यह प्रतिवाद किया गया है कि वर्तमान मामले में अपराध का पता लगाने वाली अधिकारी-सह-इत्तिलाकर्ता व्यक्ति स्वयं ही इस मामले की अन्वेषण अधिकारी है और इस कारण से अपीलार्थी के पक्ष/हित पर गंभीर रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । इसके अतिरिक्त अपीलार्थी ने यह भी प्रतिवाद किया है कि स्वतंत्र साक्षियों ने अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है और अन्वेषण में भी अनेक त्रुटियां/दोष विद्यमान हैं जो अपीलार्थी प्रतिरक्षा के पक्ष में युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न करते हैं । अत: यह प्रार्थना की जाती है कि उसकी उक्त दोषसिद्धि को अपास्त किया जाए तथा उसे दोषमुक्त किया जाए ।

7. विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्रियों की गहन समीक्षा से यह तथ्य प्रकट होता है कि अभियोजन पक्ष की ओर से प्रस्तुत किए गए 4 साक्षियों में से 2 साक्षी स्वतंत्र साक्षी हैं और शेष 2 साक्षी अर्थात् अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 शासकीय साक्षी हैं । जैसा कि ऊपर कथन किया गया है अभि. सा. 3 इस मामले में

इत्तिलाकर्ता भी है तथा अन्वेषण अधिकारी भी स्वयं ही है । उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के अनुसार सुसंगत समय और तारीख पर कटक रेलवे स्टेशन के समीप अपनी पेट्रोल ड्यूटी करते समय उसने संयोगवश से अपीलार्थी को 2 जेरी बस्तों के साथ देखा । अतः वर्तमान मामले में एनडीपीएस अधिनियम की धारा 42 के अधीन आज्ञापक अपेक्षा का अनुपालन किया जाना अपेक्षित नहीं है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 के साक्ष्यों की समीक्षा करने पर यह पता चलता है कि वे एक-दूसरे से संगत हैं तथा दोनों ही साक्षियों को घटनास्थल से उक्त विनिषिद्ध पदार्थ पाए जाने की प्रत्याशा संबंधी कोई पूर्व जानकारी नहीं थी । किंतु इस प्रक्रम पर यदि प्रतिरक्षा पक्षकथन पर विचार किया जाए तो प्रति. सा. 1, जो एक अन्य उत्पाद शुल्क सहायक उप निरीक्षक है और जो घटनास्थल, अर्थात् कटक रेलवे स्टेशन के द्वार सं. 2 के सामने मौजूद था, द्वारा यह बात स्वीकार की गई है कि उसी स्थल पर दो अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के संबंध में पता चला था जिनके कब्जे में 90 किलोग्राम विनिषिद्ध गांजा था । वर्तमान मामले में प्ररूप सं. सी-2 के अधीन पीआरओ प्रदर्श-5 के रूप में चिह्नित किया गया है । प्रतिरक्षा द्वारा यथा प्रस्तुत अन्य मामले की प्ररूप सं. सी-2 में प्रस्तुत की गई पीआर की प्रमाणित प्रति को प्रदर्श-एफ के रूप में चिह्नित किया गया है । प्रदर्श-5 और प्रदर्श-एफ की परस्पर तुलना करने पर यह तथ्य प्रकट होता है कि उनमें समय को क्रमशः प्रातः 7.45 बजे से 9.00 बजे तथा 6.45 बजे से 8.55 बजे तक के रूप में दर्शित किया गया है । इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि प्रदर्श-5 पर हस्ताक्षर करने वाले स्वतंत्र साक्षी (अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4) वही साक्षी हैं जिन्होंने प्रदर्श-एफ पर भी हस्ताक्षर किए हैं । जब दोनों मामलों में मुख्य रूप से उल्लिखित समयावधि एकसमान है तो वर्तमान मामले में अभियोजन पक्षकथन के अनुसार तलाशी और अभिग्रहण के लिए लाए गए दोनों स्वतंत्र साक्षियों, अर्थात् अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 की उपस्थिति संदेहास्पद हो जाती है क्योंकि न तो अभि. सा. 1 और न ही अभि. सा. 3 ने उसके विभाग के एक अन्य निरीक्षक द्वारा ढूंढे गए अन्य प्रपुंज मात्रा में गांजे की तलाशी और अभिग्रहण में अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4

की उपस्थिति के संबंध में कोई उल्लेख किया है । इस प्रकार तलाशी और अभिग्रहण के दौरान घटनास्थल पर अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 की उपस्थिति संदेहास्पद हो जाती है । इसके अतिरिक्त अपने साक्ष्य में इन दोनों स्वतंत्र साक्षियों ने अभि. सा. 3 द्वारा की गई तलाशी और अभिग्रहण के दौरान अपनी उपस्थिति से पूर्णतया इनकार किया है और उनके अनुसार उन्होंने किसी भिन्न स्थान और समय पर उत्पाद शुल्क पदधारियों के अनुदेशों के अनुसार दस्तावेजों पर अपने हस्ताक्षर अंकित किए थे ।

8. प्रति. सा. 1 के साक्ष्य और प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से प्रस्तुत किए गए प्रदर्शों को ध्यान में रखते हुए और साथ ही अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 द्वारा किए गए इन कथनों को मिथ्या नहीं ठहराया जा सकता कि वे तलाशी और अभिग्रहण के समय घटनास्थल पर उपस्थित नहीं थे । अतः अपीलार्थियों के कब्जे से विनिषिद्ध पदार्थों की तलाशी और अभिग्रहण के संबंध में अभियोजन पक्षकथन के बारे में युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न होता है ।

9. आगे हमें यह देखना होगा कि क्या वर्तमान मामले में एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 का आज्ञापक अनुपालन किया गया है । अभि. सा. 3 के अनुसार अभियुक्त को प्रदर्श-1 के अनुसार विकल्प प्रदान किया गया था और इस संबंध में अभियुक्त द्वारा दिया गया उत्तर प्रदर्श-2 के रूप में चिह्नित है । प्रदर्श-1 और प्रदर्श-2 का परिशीलन यह प्रकट करता है कि वे दोनों मुद्रित प्रारूप में हैं और अभियोजन का पक्षकथन इस संबंध में यह है कि अभियुक्त ने किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट या राजपत्रित अधिकारी के समक्ष अपनी तलाशी के विकल्प का प्रयोग करने से इनकार किया था और वह स्वयं अभि. सा. 3 द्वारा तलाशी लिए जाने से सहमत हुआ था । अभियुक्त ने अपने बाएं हाथ के अंगूठे के निशान प्रदर्श-1 और प्रदर्श-2 तथा अन्य दस्तावेजों पर अंकित किए हैं । प्रदर्श-3 के अधीन वस्तु सूची में इस बात का कोई उल्लेख नहीं है कि अभि. सा. 3 के पास ऐसे मुद्रित प्ररूप मौजूद थे और उसमें विनिर्दिष्ट रूप से इस बात का भी उल्लेख नहीं है कि अभि. सा. 3

के पास कोई मुद्रण मशीन मौजूद थी । इस प्रकार इससे स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि अभि. सा. 3 ने घटना के पश्चात् अभियुक्त के बाएं हाथ के अंगूठे के निशान प्रदर्श-1 और प्रदर्श-2 पर प्राप्त किए थे । अतः इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 के अधीन आज्ञापक अपेक्षा का सम्यक् रूप से अनुपालन नहीं किया गया है । चूंकि एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 के अधीन उपबंधित अपेक्षाओं का अनुपालन आज्ञापक प्रकृति का है । इसलिए शायद अभियोजन पक्ष ने इन दोषों को दूर करने के लिए प्रदर्श-1 और प्रदर्श-2 पर अपीलार्थी के बाएं हाथ के अंगूठे के निशान प्राप्त किए हैं । इसके अतिरिक्त अभियोजन पक्षकथन में इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि अपीलार्थी की निजी तलाशी अभि. सा. 3 द्वारा ली गई थी और इसलिए अभियोजन पक्ष के लिए वास्तविक रूप से एनडीपीएस की धारा 50 का अनुपालन आज्ञापक हो जाता है । **आरिफ खान** उर्फ **आगा खान** बनाम **उत्तराखंड राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन पक्ष के लिए यह साबित करना आज्ञापक है कि अपीलार्थी की तलाशी और उससे की गई बरामदगी किसी मजिस्ट्रेट या किसी राजपत्रित अधिकारी की उपस्थिति में की जाती है ।

वर्तमान मामले में केवल यह किया गया है कि एक पूर्व मुद्रित प्ररूप पर अभियुक्त के बाएं हाथ के अंगूठे के निशान प्राप्त किए गए हैं और यह तथ्य एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 के सम्यक् अनुपालन की अपेक्षा का समाधान नहीं करता है । उक्त प्रयोजन के लिए अपराध का पता लगाने वाले अधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह किसी एनडीपीएस मामले की दशा में अभियुक्त की तलाशी किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट या राजपत्रित अधिकारी की उपस्थिति में ले जैसा कि एनडीपीएस अधिनियम द्वारा आज्ञापक बनाया गया है । तद्नुसार इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान मामले में एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 की अपेक्षाओं का सम्यक् अनुपालन नहीं किया गया है और

---

[1] (2018) 18 एस. सी. सी. 380 = ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 2123.

विचारण न्यायालय इस पहलू पर समुचित रूप से विचार करने में असफल रहा है ।

10. अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 के साक्ष्य से यह तथ्य भी सामने आता है कि विनिषिद्ध गांजे का भारतोलन घटनास्थल पर ही किया गया था किंतु अभिलेख पर कोई भारतोलन चार्ट अंतर्विष्ट नहीं है । अभियोजन पक्षकथन यह है कि कुल 30 किलोग्राम वजन वाले गांजे का अभिग्रहण दो जेरी बस्तों से किया गया था और उनका भारतोलन करने के पश्चात् उसे उन्हीं बस्तों में सीलबंद कर दिया गया था तथा उन पर अभि. सा. 3 की पीतल मुद्रा को चिह्नित किया गया था । उक्त पीतल मुद्रा समय पर स्वतंत्र साक्षी अभि. सा. 4 को उपलब्ध कराई गई थी किंतु अभि. सा. 4 ने अभियोजन के इस पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है और न ही कोई पीतल मुद्रा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई है । जब अभिग्रहण किसी सार्वजनिक स्थल पर किया गया है और भारतोलन चार्ट को प्रस्तुत नहीं किया गया है और न ही पीतल मुद्रा को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है तथा स्वतंत्र साक्षी ने भी अभियोजन पक्ष की कहानी का समर्थन नहीं किया है तो किसी विशिष्ट मात्रा में विनिषिद्ध पदार्थ के अभिग्रहण संबंधी अभियोजन पक्षकथन के संबंध में गंभीर संदेह उत्पन्न होते हैं । अभियोजन पक्ष का यह कर्तव्य है कि वह स्पष्ट और अकाट्य साक्ष्य प्रस्तुत करके अभियुक्तों के कब्जे में विनिषिद्ध पदार्थ होने के तथ्य और उसके अभिग्रहण को साबित करे । किंतु वर्तमान मामले में ऐसा नहीं किया गया है । अभियोजन पक्षकथन को आगे और जोखिम में डालते हुए यह तथ्य सामने आता है कि विनिषिद्ध पदार्थ के द्वितीय नमूना पैकेट को भी अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है तथा इस संबंध में अभियोजन पक्ष की ओर से कोई स्पष्टीकरण भी उपलब्ध नहीं कराया गया है ।

11. अभियोजन पक्षकथन के विरुद्ध एक अन्य महत्वपूर्ण बिंदु जो अभिलेख के परिशीलन पर सामने आया है, यह भी है कि वर्तमान मामले में इत्तिलाकर्ता ही अन्वेषण अधिकारी है । अभि. सा. 3 वही अधिकारी है जिसने अभियुक्त के पास विनिषिद्ध पदार्थ होने के तथ्य का

पता लगाया था, उसने ही तलाशी ली तथा अभिग्रहण भी उसके द्वारा किया गया, इसके अतिरिक्त उसी ने ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की और साथ ही संपूर्ण अन्वेषण का भी संचालन किया । अभियोजन का पक्षकथन यह नहीं है कि सुसंगत समय पर अन्वेषण का संचालन करने हेतु कोई अन्य अधिकारी उपलब्ध नहीं था और न ही अभियोजन का पक्षकथन यह है कि किन्हीं अन्य कारणों से अभि. सा. 3 ने मजबूरीवश अन्वेषण किया था । साधारण रूप से इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं कराया गया है ।

12. **मोहन लाल** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इत्तिलाकर्ता के अन्वेषण अधिकारी होने के प्रभाव संबंधी प्रश्न का विनिश्चय किया है । उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :–

> "*** *** ***
>
> 5. हमने पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत की गई दलीलों पर विचार किया है । वर्तमान अपील में हमारे विचारार्थ मुख्य प्रश्न यह है कि क्या किसी दांडिक अभियोजन में यह तथ्य न्याय, निष्पक्षता और निष्पक्ष अन्वेषण के सिद्धांतों के अनुरूप होगा कि अपराध का इत्तिलाकर्ता और अन्वेषण अधिकारी एक ही व्यक्ति हो । ऐसी किसी दशा में अभियुक्त के लिए यह आवश्यक होगा कि वह कार्यवाहियों के उसके प्रतिकूल होने के प्रभाव को उपदर्शित करे विशेष रूप से एनडीपीएस अधिनियम जैसी विधियों के अधीन जहां सबूत का भार विलोमतः होता है ।
>
> *** *** ***
>
> 25. .... अतः यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि निष्पक्ष अन्वेषण जो निष्पक्ष विचारण का मूल आधार है, अनिवार्य रूप से यह अनुबंधित करता है कि इत्तिलाकर्ता और अन्वेषण करने वाला व्यक्ति समान व्यक्ति नहीं होने चाहिएं । न्याय न केवल किया

---

[1] ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 3853 = 2019 क्रिमिनल ला जर्नल 420 (एस. सी.).

जाना चाहिए अपितु यह प्रतीत होना भी आवश्यक है कि न्याय किया गया है । भेदभाव या पूर्व अवधारित निष्कर्षों की किसी भी संभावना को अपवर्जित करना होगा । यह अपेक्षा ऐसी विधियों में और अधिक आवश्यक हो जाती है जिनमें सबूत का भार विलोमतः होता है ।

26. परिणामतः अपील सफल होती है और उसे मंजूर किया जाता है । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अभियोजन इस कारण से दोषपूर्ण है क्योंकि निष्पक्ष अन्वेषण एक सांविधानिक गारंटी है । यह निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी को तुरंत निर्मुक्त किया जाए जब तक कि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता न हो ।"

माननीय उच्चतम न्यायालय ने **वरिन्दर कुमार** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह भी अभिनिर्धारित किया है कि :-

"*** *** ***

18. दांडिक न्याय परिदान प्रणाली को इस बात की अनुमति नहीं दी जा सकती कि वह अनन्य रूप से अपराधी के हित में कार्य करे और इस प्रकार वह एक ही दिशा में केंद्रित कार्यवाही बन जाए । अतः दांडिक न्याय परिदान प्रणाली का समुचित प्रशासन यह अपेक्षा करता है कि अभियुक्त और अभियोजन के अधिकारों में संतुलन कायम किया जाए जिससे **मोहन लाल** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि दोषमुक्ति का साधन न बन सके, विशेष रूप से अन्य सभी विचारार्थ तथ्यों और प्रश्नों पर ध्यान न देते हुए अभियोजन कार्यवाहियों के पूरा होने से पूर्व ही अभियुक्तों को दोषमुक्ति प्राप्त हो जाए । अतः हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि **मोहन लाल** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि से पूर्व लंबित सभी दांडिक अभियोजन, विचारण और अपीलें विशिष्ट मामले के व्यष्टिक तथ्यों से शासित होती रहेंगी ।

---

[1] (2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 170 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 एस. सी. 570.

*** *** ***"

13. वर्तमान मामले में जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है एनडीपीएस अधिनियम की धारा 50 के आज्ञापक उपबंधों का अनुपालन नहीं किया गया है और साथ ही विनिषिद्ध पदार्थ के भारतोलन, पीतल मुद्रा को प्रस्तुत न किए जाने और द्वितीय नमूना (विनिषिद्ध पदार्थ) पैकेट को प्रस्तुत न किए जाने से संबंधित गंभीर संदेह भी विद्यमान हैं । अतः उपरोक्त परिस्थितियों के अधीन सुरक्षित रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि निश्चित रूप से अभि. सा. 3 के आचार, जिसमें वह इत्तिलाकर्ता होते हुए भी मामले की अन्वेषण अधिकारी बन गई, के कारण अपीलार्थी के पक्षकथन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ।

14. अभियुक्त के हितों पर पड़े इस प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव को ध्यान में रखते हुए और साथ ही अन्य त्रुटियों तथा एनडीपीएस अधिनियम के अधीन विहित आज्ञापक उपबंधों के अननुपालन को विचार में लेते हुए यह निष्कर्ष नहीं निकला जा सकता कि अभियोजन ने सभी युक्तियुक्त संदेहों से परे अपने पक्षकथन को साबित किया है और इस प्रकार विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि न्यायोचित प्रतीत नहीं होती है । अतः वह अपास्त किए जाने के लिए दायी है ।

15. इसके परिणामस्वरूप अपील मंजूर की जाती है, दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है और यह निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी को अभिरक्षा से तुरंत निर्मुक्त किया जाए यदि किसी अन्य मामले में उसे निरुद्ध रखा जाना अपेक्षित नहीं है ।

निचले न्यायालय के अभिलेख को लौटा दिया जाए ।

अपील मंजूर की गई ।

पु.

पूनम रानी और अन्य

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य

(2018 का दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 892)

तारीख 3 जनवरी, 2020

न्यायमूर्ति रविन्द्र मैथानी

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 494 और 120ख [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 482] – के अधीन कार्यवाहियों को अभिखंडित करने का अनुरोध – पति द्वारा यह आरोप लगाया जाना कि विवाह के समय अभियुक्त पत्नी का एक जीवित पति विद्यमान था – सह-अभियुक्तों पर यह आरोप लगाया जाना कि उन्होंने अभियुक्त को, उसका पति जीवित होते हुए भी दूसरे विवाह हेतु तैयार किया – सह-अभियुक्तों द्वारा स्वयं यह तथ्य स्वीकार किया जाना कि उक्त विवाह अभियुक्त पत्नी का दूसरा विवाह था – इन तथ्यों को विचार में लेते हुए यह स्पष्ट है कि अभियुक्त पत्नी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 494 के अधीन दांडिक मामला बनता है और अन्य सह-अभियुक्तों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 494 और 120ख के अधीन दांडिक मामला बनता है और इस प्रकार कार्यवाहियां विखंडित किए जाने की दायी नहीं हैं ।

याचिका का निपटारा करने हेतु संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने याचियों और एक अन्य व्यक्ति बालक राम वर्मा के विरुद्ध अपर सिविल न्यायाधीश, तृतीय (जे. डी.), देहरादून के न्यायालय में दंड संहिता की धारा 120ख, धारा 406, धारा 420, धारा 383, धारा 504 और धारा 506 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक परिवाद फाइल किया था जिसे वर्ष 2015 के परिवाद सं. 3518 के रूप

में रजिस्ट्रीकृत किया गया । उक्त परिवाद के अनुसार याची सं. 2 और याची सं. 3 ने प्रत्यर्थी सं. 2 को याची सं. 1 से विवाह करने हेतु तैयार किया । याची सं. 2, याची सं. 1 की माता है और याची सं. 3 उसका पिता तथा याची सं. 4 उसका भाई है । तारीख 8 मार्च, 2014 को जल्दबाजी में याची सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 का विवाह कर दिया गया । विवाह के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह पाया कि याची सं. 1 देर रात्रि या असंगत समय पर किसी व्यक्ति से बातें करती है । काफी जांच-पड़ताल के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 को यह पता चला कि वस्तुतः याची सं. 1 का विवाह पहले ही मोनु पुत्र चंद्र लाल **उर्फ** चंद्र पाल नामक व्यक्ति के साथ हो चुका है और वह बार-बार उसी से ही बातें करती है । उसके पश्चात् पक्षकारों के बीच जो कुछ भी घटित हुआ उससे संबंधित ब्यौरों को विस्तृत रूप से परिवाद में स्पष्ट किया गया है । संहिता की धारा 200 और धारा 202 के अधीन जांच-पड़ताल करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने तारीख 9 मार्च, 2016 के आदेश के माध्यम से उक्त परिवाद को खारिज कर दिया । प्रत्यर्थी सं. 2 ने उसके परिवाद को खारिज करने वाले आदेश को विद्वान् छठे अपर सेशन न्यायाधीश, देहरादून के न्यायालय में वर्ष 2016 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 66 के रूप में चुनौती दी जिसे हेमंत चौधरी बनाम श्रीमती पूनम रानी और अन्य के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । उक्त पुनरीक्षण याचिका का विनिश्चय 7 मई, 2018 को किया गया तथा इसके द्वारा तारीख 9 मार्च, 2016 के आक्षेपित आदेश जिसे प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा फाइल किए गए परिवाद का विनिश्चय करते हुए पारित किया गया था, को अपास्त कर दिया गया तथा विद्वान् विचारण न्यायालय को यह निदेश दिया गया कि वह उक्त आदेश में किए गए संप्रेक्षणों को ध्यान में रखते हुए मामले के संबंध में पुनः विचार करे और उसका नए सिरे से निपटारा करे । आदेश के पैरा सं. 9, 10 और 11 में पुनरीक्षण न्यायालय ने याचियों की ओर से सामने रखे गए साक्ष्य और उनके द्वारा किए कथनों को निर्दिष्ट किया है । वस्तुतः याचियों की ओर से पुनरीक्षण मामले में प्रस्तुत किए

गए तर्कों के दौरान इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि याची सं. 1 का पूर्व में विवाह हो चुका था और प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ उसका विवाह एक द्वितीय विवाह था । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए दंड संहिता की धारा 494 के अधीन प्रथमदृष्ट्या रूप से मामला बनता है । उक्त निर्णय को याचियों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष वर्तमान याचिका के माध्यम से चुनौती दी गई । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इन सभी सामग्रियों पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि विद्वान् पुनरीक्षण न्यायालय ने यह संप्रेक्षण करते हुए कोई अविधिपूर्ण बात नहीं की है कि दंड संहिता की धारा 494 के अधीन दंडनीय अपराध बनता है । प्रथमदृष्ट्या रूप से याची सं. 1 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 494 के अधीन तथा याची सं. 2, याची सं. 3 और याची सं. 4 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित दंड संहिता की धारा 494 के अधीन प्रथमदृष्ट्या रूप से दंडनीय अपराध बनते हैं । अतः वर्तमान याचिका खारिज किए जाने योग्य है । तद्नुसार याचिका को खारिज किया जाता है । (पैरा 9)

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2018 का दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 892.

छठे अपर सेशन न्यायाधीश, देहरादून के न्यायालय द्वारा 2016 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 66, हेमंत चौधरी बनाम श्रीमती पूनम रानी और अन्य वाले मामले में तारीख 7 मई, 2018 को पारित आदेश के विरुद्ध दांडिक प्रकीर्ण याचिका ।

याचियों की ओर से	श्री पवन मिश्रा
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री एस. एस. अधिकारी, अपर सरकारी अधिवक्ता और शैलेन्द्र नोरियाल

न्यायमूर्ति रविन्द्र मैथानी – वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'संहिता' कहा गया है) की धारा 482 के अधीन छठे अपर सेशन

न्यायाधीश, देहरादून के न्यायालय द्वारा 2016 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 66, हेमंत चौधरी बनाम श्रीमती पूनम रानी और अन्य वाले मामले (इस मामले को इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'पुनरीक्षण मामला' कहा गया है) में तारीख 7 मई, 2018 को पारित आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

2. प्रत्यर्थी सं. 2 ने याचियों और एक अन्य व्यक्ति बालक राम वर्मा के विरुद्ध अपर सिविल न्यायाधीश, तृतीय (जे. डी.), देहरादून के न्यायालय में भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 120ख, धारा 406, धारा 420, धारा 383, धारा 504 और धारा 506 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक परिवाद फाइल किया था जिसे वर्ष 2015 के परिवाद सं. 3518 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । उक्त परिवाद के अनुसार याची सं. 2 और याची सं. 3 ने प्रत्यर्थी सं. 2 को याची सं. 1 से विवाह करने हेतु तैयार किया । याची सं. 2, याची सं. 1 की माता है और याची सं. 3 उसका पिता तथा याची सं. 4 उसका भाई है । तारीख 8 मार्च, 2014 को जल्दबाजी में याची सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 का विवाह कर दिया गया । विवाह के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह पाया कि याची सं. 1 देर रात्रि या असंगत समय पर किसी व्यक्ति से बातें करती है । काफी जांच-पड़ताल के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 को यह पता चला कि वस्तुतः याची सं. 1 का विवाह पहले ही मोनु पुत्र चंद्र लाल **उर्फ** चंद्र पाल नामक व्यक्ति के साथ हो चुका है और वह बार-बार उसी से ही बातें करती है । उसके पश्चात् पक्षकारों के बीच जो कुछ भी घटित हुआ उससे संबंधित ब्यौरों को विस्तृत रूप से परिवाद में स्पष्ट किया गया है । संहिता की धारा 200 और धारा 202 के अधीन जांच-पड़ताल करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने तारीख 9 मार्च, 2016 के आदेश के माध्यम से उक्त परिवाद को खारिज कर दिया । प्रत्यर्थी सं. 2 ने उसके परिवाद को खारिज करने वाले आदेश को विद्वान् छठे अपर सेशन न्यायाधीश, देहरादून के न्यायालय में वर्ष 2016 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 66 के रूप में चुनौती दी जिसे हेमंत चौधरी बनाम

श्रीमती पूनम रानी और अन्य के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । उक्त पुनरीक्षण याचिका का विनिश्चय 7 मई, 2018 को किया गया तथा इसके द्वारा तारीख 9 मार्च, 2016 के आक्षेपित आदेश जिसे प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा फाइल किए गए परिवाद का विनिश्चय करते हुए पारित किया गया था, को अपास्त कर दिया गया तथा विद्वान् विचारण न्यायालय को यह निदेश दिया गया कि वह उक्त आदेश में किए गए संप्रेक्षणों को ध्यान में रखते हुए मामले के संबंध में पुन: विचार करे और उसका नए सिरे से निपटारा करे । आदेश के पैरा सं. 9, 10 और 11 में पुनरीक्षण न्यायालय ने याचियों की ओर से सामने रखे गए साक्ष्य और उनके द्वारा किए कथनों को निर्दिष्ट किया है । वस्तुत: याचियों की ओर से पुनरीक्षण मामले में प्रस्तुत किए गए तर्कों के दौरान इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि याची सं. 1 का पूर्व में विवाह हो चुका था और प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ उसका विवाह एक द्वितीय विवाह था । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए दंड संहिता की धारा 494 के अधीन प्रथमदृष्ट्या रूप से मामला बनता है ।

3. आज जब इस मामले के संबंध में बहस की जा रही थी तो उस समय न्यायालय ने याचियों के विद्वान् काउंसेल से यह प्रश्न किया कि क्या याची सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 के बीच विवाह के अनुष्ठापन से पूर्व याची सं. 1 का विवाह हो चुका था ? इसके उत्तर में याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह कथन किया कि वह इस संबंध में कोई कथन नहीं कर सकता ।

4. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क सामने रखा है कि यह साबित करने के लिए कि याचियों द्वारा दंड संहिता की धारा 494 के अधीन कोई अपराध कारित किया गया है प्रथमदृष्ट्या रूप से कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है ।

5. दूसरी ओर प्रत्यर्थी सं. 2 के विद्वान् काउंसेल ने यह कथन किया है कि अभिलेख पर ऐसी सामग्रियां विद्यमान हैं जो यह प्रकट

करती हैं कि याची सं. 1 ने दंड संहिता की धारा 494 के अधीन दंडनीय अपराध कारित किया है और उक्त अपराध को कारित करने में अन्य याचियों ने उसका सहयोग और सहायता की है तथा उक्त अपराध के लिए योजना और षड्यंत्र रचा है ।

6. बहस के अनुक्रम के दौरान प्रत्यर्थी सं. 2 के विद्वान् काउंसेल ने इस बात पर बल दिया कि याची सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 के बीच अनुष्ठापित विवाह को पहले ही विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, देहरादून के न्यायालय द्वारा वर्ष 2015 के मूल वाद सं. 836, जिसे हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) की धारा 11 के अधीन फाइल किया गया था, में इस आधार पर बातिल कर दिया गया था कि याची सं. 1 का पहले से ही एक जीवित पति उस समय मौजूद था जब उसका विवाह प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ अनुष्ठापित हुआ था ।

7. दांडिक मामलों में सबूत का मानक भिन्न-भिन्न प्रक्रमों पर परिवर्तित होता है । अपराध का संज्ञान लिए जाने के समय तथा अभियुक्त को समन भेजते समय मात्र प्रथमदृष्ट्या मामला अपेक्षित होता है । प्रथमदृष्ट्या मामले को स्थापित करने के लिए पर्याप्त सामग्री प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है ।

8. वर्तमान मामले में परिवादी के अनुसार याची सं. 1, प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ उसका विवाह अनुष्ठापित किए जाने के समय पहले से ही विवाहित थी और उस समय उसका पति जीवित था । अन्य सभी याचियों ने मिलकर प्रत्यर्थी सं. 2 को याची सं. 1 से विवाह करने के लिए तैयार किया । याचियों में से किसी ने भी कभी भी प्रत्यर्थी सं. 2 के समक्ष इस तथ्य को प्रकट नहीं किया कि याची सं. 1 का विवाह पहले ही हो चुका है । प्रत्यर्थी सं. 2 ने संहिता की धारा 200 के अधीन जांच-पड़ताल के प्रक्रम पर इस संबंध में कथन किया था । विचारण न्यायालय के तारीख 9 मार्च, 2016 के आदेश के पैरा 5 में कतिपय फोटोग्राफों और कुछ रिकार्ड की गई बातचीत के संबंध में प्रतिनिर्देश

किया गया है । जैसा कि ऊपर कथन किया गया है पुनरीक्षण के दौरान कुछ और अधिक सामग्रियां भी अभिलेख पर प्रस्तुत की गई । इसके संबंध में पुनरीक्षण मामले में पारित निर्णय के पैरा 10 में उल्लेख किया गया है । अत्यधिक महत्वपूर्ण रूप से पुनरीक्षण न्यायालय के निर्णय के पैरा सं. 11 में याची सं. 1 के दूसरे विवाह के संबंध में स्वीकारोक्ति के तथ्य को लेखबद्ध किया गया है । स्वयं याचियों की ओर से यह स्वीकार किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ अनुष्ठापित विवाह याची सं. 1 का द्वितीय विवाह था ।

9. इन सभी सामग्रियों पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि विद्वान् पुनरीक्षण न्यायालय ने यह संप्रेक्षण करते हुए कोई अविधिपूर्ण बात नहीं की है कि दंड संहिता की धारा 494 के अधीन दंडनीय अपराध बनता है । प्रथमदृष्ट्या रूप से याची सं. 1 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 494 के अधीन तथा याची सं. 2, याची सं. 3 और याची सं. 4 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित दंड संहिता की धारा 494 के अधीन प्रथमदृष्ट्या रूप से दंडनीय अपराध बनते हैं । अत: वर्तमान याचिका खारिज किए जाने योग्य है ।

10. तदनुसार याचिका को खारिज किया जाता है ।

याचिका खारिज की गई ।

पु.

ठाकोर किंजलबेन रगनाथभाई मार्फत **हंसाबेन रगनाथभाई ठाकोर**

बनाम

गुजरात राज्य

(2020 का विशेष दांडिक आवेदन सं. 2437)

तारीख 15 जून, 2020

न्यायमूर्ति अशोक कुमार सी. जोशी

गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम, 1971 (1971 का 34) – धारा 3 – अधिनियम के अधीन यथा अनुबंधित की अवधि से परे गर्भ का चिकित्सीय समापन – अनुमति – एक 14 वर्षीय बालिका द्वारा बलात्संग के परिणामस्वरूप गर्भधारण करना – गर्भ का 20 सप्ताह और 6 दिन की अवधि का होने के कारण गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम के अधीन गर्भ के समापन हेतु उच्च न्यायालय की विशेष अनुमति का अपेक्षित होना – बालक को अपनी कोख में रखने, उसे जन्म देने तथा उसकी परवरिश के कारण माता, जो स्वयं अभी बालिका है, को अत्यधिक शारीरिक और मानसिक वेदना, कष्ट और अनेक प्रकार की सामाजिक तथा आर्थिक समस्याएं आने की संभावना – जन्म लेने वाले बालक में भी शारीरिक और मानसिक अप्रसमानताएं होने की संभावना – याची की चिकित्सीय रिपोर्टों, उसकी साथ घटी बलात्संग की घटना और पारिणामिक गर्भाधान के कारण उसे होने वाले सतत् मनस्ताप तथा सर्वोत्तम हित के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय ने गर्भ समाप्त करने की अनुमति प्रदान की ।

वर्तमान विशेष दांडिक आवेदन के निपटारे हेतु संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि याची की आयु 14 वर्ष है और वह अपने माता-पिता के साथ फारम में श्रमिक के रूप में कार्य कर रही है । याची नानजीजी कुंपाजी पटेल नामक व्यक्ति के बनासकांठा जिले में स्थित परिसर में अपने माता-पिता और भाई के साथ निवास कर रही है । यह भी कथन किया गया है कि अभियुक्त याची के घर के साथ वाले घर में

निवास कर रहा है और वह याची के पिता का मित्र था । मई, 2020 से 4 माह पूर्व जब याची अपने केस्टर फारम पर मौजूद थी तो अभियुक्त ने बलपूर्वक याची के साथ बलात्संग किया था और इस प्रकार की धमकियां दी थीं कि यदि उसने इस घटना के संबंध में अपने माता-पिता से शिकायत की तो वह याची और उसके माता-पिता को मार डालेगा । भय, आतंक और आघात के कारण याची ने इस घटना की सूचना अपने माता-पिता को नहीं दी । उसके पश्चात् जब याची को 3 माह तक मासिक रजोधर्म नहीं हुआ तो याची की माता ने अपनी पुत्री से इस संबंध में पूछताछ की । उसके पश्चात् याची ने अपनी माता को उसके साथ हुई बलात्संग की घटना के बारे में बताया । अत: याची के माता-पिता उसे लेकर अस्पताल गए जहां डाक्टर ने चिकित्सीय रूप से याची की परीक्षा करने के पश्चात् उसकी माता को यह सूचित किया कि याची गर्भवती है । उसके पश्चात् याची की माता ने तारीख 24 मई, 2020 को थरड़ पुलिस थाना, जिला बनासकांठा में अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 376(3) और धारा 506(2) तथा बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम 2012 (2012 का 32) की धारा 4 और धारा 6 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की जो वर्ष 2020 की आई. सी. आर. सं. 111950200429 के रूप में रजिस्ट्रीकृत है । यह सत्य है कि याची गर्भ धारण कर रही है और वह अत्यधिक मानसिक और साथ ही शारीरिक पीड़ा से भी गुजर रही है । उसका गर्भ 20 सप्ताह और 6 दिन की अनुबंधित अवधि से अधिक का है और उक्त गर्भ का समापन एमटीपी अधिनियम के अनुसार अनुमति प्राप्त करने के पश्चात् ही किया जा सकता है । इसके अतिरिक्त, याची ने अपने कुटुंब के सभी सदस्यों की सहमति से ही गर्भ के समापन हेतु याचिका फाइल करने और इस प्रभाव के अनुतोष की ईप्सा करने का विनिश्चय किया है और इस विनिश्चय में विशिष्ट रूप से याची/पीड़िता की मानसिक और शारीरिक स्थिति को भी ध्यान में रखा गया है । यह भी सत्य है कि गर्भ संकटकालीन प्रक्रम पर है और उक्त गर्भधारण पीड़िता के साथ हुए बलात्संग के कारण हुआ है

जिससे याची के मानसिक स्वास्थ्य को अत्यधिक क्षति पहुंची है । इस प्रकार गर्भ का समापन याची के सर्वोत्तम हित में है । इसके अलावा गर्भ धारण करने वाली महिला का मानसिक स्वास्थ्य और यह तथ्य कि वह उसके साथ हुए बलात्संग के परिणामस्वरूप अपनी कोख में एक बालक को धारण कर रही है, याची को उसके संपूर्ण जीवन के लिए अत्यधिक मानसिक संताप कारित करेगा और इसके अतिरिक्त उसके सामने इस गर्भ के कारण सामाजिक-आर्थिक समस्याएं भी आ सकती हैं । पीड़ित लड़की के माता-पिता ने स्पष्ट रूप से इस बात को दोहराया है कि उनकी पीड़ित पुत्री ने उसके साथ हुए बलात्संग के कारण गर्भ धारण किया है जिसके परिणामस्वरूप उसने अत्यधिक शारीरिक और मानसिक रूप से कष्ट को झेला है । इस गर्भ के बने रहने के कारण उनकी पुत्री में क्रोध, सदमे की भावना हमेशा के लिए प्रवेश कर सकती है और इसके कारण उसे अत्यधिक मानसिक, शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक पीड़ा का सामना करना पड़ेगा । अत: यह अपेक्षित है कि न्याय के बृहत हित में गर्भ का समापन किया जाए । उच्च न्यायालय द्वारा आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – याचिका की अंतर्वस्तु, लागू विधियों के उपबंधों, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा ऊपर विनिर्दिष्ट मामलों में अधिकथित अनुपात, याची की निजता के अधिकार, चिकित्सा रिपोर्टों पर विचार करते हुए तथा यहां ऊपर चर्चा किए गए अनुसार सर्वोत्तम हित के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय का यह मत है कि याची के गर्भ का समापन न्याय के हित को सिद्ध करेगा । अत: यह अपेक्षित है कि याची को उसका गर्भ समाप्त करने की अनुमति दी जाए और तद्नुसार उक्त अनुमति प्रदान की जाती है । अत: उसे शीघ्रातिशीघ्र गर्भ समाप्त करने की अनुमति प्रदान की जाती है । संबद्ध डाक्टर एएनसी प्रोफाइल रिपोर्ट के पश्चात् सम्यक् जोखिम और साथ ही अन्य चिकित्सा विशेषज्ञ ऐसी उचित देखभाल जो चिकित्सा न्याय शास्त्र के अनुसार पीड़ित के जीवन की सुरक्षा के लिए अपेक्षित है, के साथ गर्भ का समापन करेंगे । इस प्रक्रिया के परिणाम और याची के स्वास्थ्य संबंधी रिपोर्ट एक सप्ताह के भीतर इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की

जाएगी । बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान, पालनपुर के चिकित्सा अधीक्षक भ्रूण से निष्कर्षित ऊतकों को वैज्ञानिक रीति में डीएनए की पहचान हेतु याची द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध थरड़ पुलिस थाना, जिला बनासकांठा में रजिस्ट्रीकृत अपराध के संबद्ध अन्वेषण अधिकारी को सौंप देगा जो उसे संबद्ध न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला को समुचित परीक्षणों हेतु अग्रेषित करेगा । रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह विद्वान् सहायक लोक अभियोजक को आदेश की प्रति उपलब्ध कराए जिसे वह आगे संसूचित करेगा और साथ ही इस आदेश की एक प्रति याची के विद्वान् अधिवक्ता, संबद्ध अन्वेषण अधिकारी और संबद्ध चिकित्सा अधीक्षक, बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान, पालनपुर को ईमेल/फैक्स संदेश/या किसी अन्य समुचित इलेक्ट्रोनिक पद्धति से उपलब्ध कराए जिससे वे अनुवर्ती कार्रवाई कर सकें । तद्नुसार उपरोक्त निदेशों के साथ वर्तमान याचिका का निपटारा किया जाता है । इस नियम को आत्यंतिक बनाया जाता है । (पैरा 13, 14, 15, 16 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 13 एस. सी. सी. 339 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. (अनु.) 957 = (2017) 7 स्केल 389 : **शर्मिष्ठा चक्रबर्ती** बनाम **भारत संघ** ;	12.5
[2015]	2015 ए. आई. आर. सी. सी. 3387 (गुजरात) : **आशाबेन पत्नी दिनेशभाई जस्सुभाई तलसानिया (देवीपूजक)** बनाम **गुजरात राज्य** ;	11
[2015]	2015 (8) एस. सी. सी. 721 : **चंद्रकांत जयंतीलाल सुथर** बनाम **गुजरात राज्य** ;	9, 11
[2009]	(2009) 3 जी. एल. एच. 468 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 235 : **सुचिता श्रीवास्तव और अन्य** बनाम **चंडीगढ़ प्रशासन** ।	11

मूल दांडिक अधिकारिता : **2020 का विशेष दांडिक आवेदन सं. 2437.**

वर्तमान विशेष दांडिक आवेदन भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन बलात्संग की पीड़िता की विधिक संरक्षक, उसकी माता के माध्यम से उसके गर्भ के समापन हेतु अनुरोध करते हुए फाइल किया था ।

आवेदक की ओर से श्री आर. बी. ठाकोर

प्रत्यर्थी की ओर से श्री चिंतन दवे, सहायक लोक अभियोजक

न्यायमूर्ति अशोक कुमार सी. जोशी – आवेदक का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री आर. बी. ठाकोर और प्रत्यर्थी राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् सहायक लोक अभियोजक को वीडिओ कांफ्रेंस के माध्यम से सुना । मामले की विशिष्ट प्रकृति को ध्यान में रखते हुए इस मामले को अंतिम सुनवाई के लिए चुना गया है ।

2. वर्तमान आवेदन, आवेदक द्वारा जो बलात्संग की पीड़िता है, उसकी विधिक संरक्षक उसकी माता के माध्यम से भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल किया था जिसके द्वारा गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम, 1971 (1971 का 34) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'एमटीपी अधिनियम' कहा गया है) के अधीन गर्भ का समापन करने का अनुरोध किया गया है ।

3. आवेदक ने आवेदन के पैरा 8(क) और (ख) के निबंधनानुसार अनुतोष की ईप्सा की है जो निम्नानुसार है :–

> "(क) माननीय न्यायाधीश से यह अनुरोध किया जाता है कि वह शीघ्रातिशीघ्र प्रत्यर्थी प्राधिकारी को उपयुक्त रिट या आदेश या निदेश जारी करें जिससे कि याची-पीड़िता किंजल जो मात्र 14 वर्ष की आयु की अप्राप्तवय लड़की है, के गर्भ को, उसकी अल्पायु, शारीरिक स्वास्थ्य उसके मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर क्षति पहुंचाने वाली उसके साथ हुई बलात्संग की घटना को ध्यान में रखते हुए, समाप्त किया जा सके क्योंकि ऐसा किया जाना पीड़िता के

सर्वोत्तम हित में है और इसके अतिरिक्त माननीय न्यायाधीश से यह भी अनुरोध किया गया है कि वह न्याय के हित में प्रत्यर्थी सं. 3 को यह निदेश भी जारी करें कि वह गर्भ से निष्कर्षित किए गए ऊतकों को वैज्ञानिक रीति में डीएनए की पहचान करने हेतु पुलिस उप निरीक्षक, थरड़ पुलिस थाने को सौंप दें जिससे वह उन्हें आगे संबद्ध न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला को जांच हेतु अग्रेषित कर सके ।

(ख) माननीय न्यायाधीश से यह भी अनुरोध किया जाता है कि इस याचिका को स्वीकार किए जाने, उसकी सुनवाई किए जाने तथा अंतिम रूप से निपटारा किए जाने संबंधी प्रक्रिया के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थी सं. 1 से प्रत्यर्थी सं. 3 को यह निदेश दिया जाए कि न्याय के हित में अप्राप्तवय पीड़िता के गर्भ के चिकित्सीय समापन के संबंध में दो अर्हित शल्य-चिकित्सकों जिनके अंतर्गत महिला रोग विशेषज्ञ और प्रसूति रोग विशेषज्ञ भी हैं और साथ ही एक अर्हित चिकित्सक की उपस्थिति में सम्यक् देखभाल और सावधानी से आवश्यक चिकित्सीय जांच करने के पश्चात् कार्यवाही करें जिससे कि अप्राप्तवय पीड़िता किंजल के शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को किसी भी प्रकार की क्षति न पहुंचे ।”

4. इस मामले के तथ्य निम्नानुसार हैं –

4.1 आवेदन में यह कथन किया गया है कि याची की आयु 14 वर्ष है और वह अपने माता-पिता के साथ फारम में श्रमिक के रूप में कार्य कर रही है । याची नानजीजी कुंपाजी पटेल नामक व्यक्ति के बनासकांठा जिले में स्थित परिसर में अपने माता-पिता और भाई के साथ निवास कर रही है ।

4.2 यह भी कथन किया गया है कि अभियुक्त याची के घर के साथ वाले घर में निवास कर रहा है और वह याची के पिता का मित्र था । मई, 2020 से 4 माह पूर्व जब याची अपने केस्टर फारम पर मौजूद थी तो अभियुक्त ने बलपूर्वक याची के साथ बलात्संग किया था और इस प्रकार की धमकियां दी थीं कि यदि उसने इस घटना के संबंध में अपने माता-पिता से शिकायत की तो वह याची और उसके माता-पिता को मार डालेगा । भय, आतंक और आघात के कारण याची ने इस घटना

की सूचना अपने माता-पिता को नहीं दी । उसके पश्चात् जब याची को 3 माह तक मासिक रजोधर्म नहीं हुआ तो याची की माता ने अपनी पुत्री से इस संबंध में पूछताछ की । उसके पश्चात् याची ने अपनी माता को उसके साथ हुई बलात्संग की घटना के बारे में बताया । अत: याची के माता-पिता उसे लेकर अस्पताल गए जहां डाक्टर ने चिकित्सीय रूप से याची की परीक्षा करने के पश्चात् उसकी माता को यह सूचित किया कि याची गर्भवती है । उसके पश्चात् याची की माता ने तारीख 24 मई, 2020 को थरड़ पुलिस थाना, जिला बनासकांठा में अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 376(3) और धारा 506(2) तथा बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम 2012 (2012 का 32) की धारा 4 और धारा 6 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की जो वर्ष 2020 की आई. सी. आर. सं. 111950200429 के रूप में रजिस्ट्रीकृत है । यह सत्य है कि याची गर्भ धारण कर रही है और वह अत्यधिक मानसिक और साथ ही शारीरिक पीड़ा से भी गुजर रही है । उसका गर्भ 20 सप्ताह और 6 दिन की अनुबंधित अवधि से अधिक का है और उक्त गर्भ का समापन एमटीपी अधिनियम के अनुसार अनुमति प्राप्त करने के पश्चात् ही किया जा सकता है ।

4.3 यह भी कथन किया गया है कि उसने याचियों के कुटुंब के सभी सदस्यों की सहमति से ही गर्भ के समापन हेतु याचिका फाइल करने और इस प्रभाव के अनुतोष की ईप्सा करने का विनिश्चय किया है और इस विनिश्चय में विशिष्ट रूप से याची/पीड़िता की मानसिक और शारीरिक स्थिति को भी ध्यान में रखा गया है । यह भी सत्य है कि गर्भ संकटकालीन प्रक्रम पर है और उक्त गर्भधारण पीड़िता के साथ हुए बलात्संग के कारण हुआ है जिससे याची के मानसिक स्वास्थ्य को अत्यधिक क्षति पहुंची है । इस प्रकार गर्भ का समापन याची के सर्वोत्तम हित में है ।

4.4 यह भी कथन किया गया है कि गर्भ धारण करने वाली महिला का मानसिक स्वास्थ्य और यह तथ्य कि वह उसके साथ हुए बलात्संग के परिणामस्वरूप अपनी कोख में एक बालक को धारण कर रही है,

याची को उसके संपूर्ण जीवन के लिए अत्यधिक मानसिक संताप कारित करेगा और इसके अतिरिक्त उसके सामने इस गर्भ के कारण सामाजिक-आर्थिक समस्याएं भी आ सकती हैं । पीड़ित लड़की के माता-पिता ने स्पष्ट रूप से इस बात को दोहराया है कि उनकी पीड़ित पुत्री ने उसके साथ हुए बलात्संग के कारण गर्भ धारण किया है जिसके परिणामस्वरूप उसने अत्यधिक शारीरिक और मानसिक रूप से कष्ट को झेला है । इस गर्भ के बने रहने के कारण उनकी पुत्री में क्रोध, सदमे की भावना हमेशा के लिए प्रवेश कर सकती है और इसके कारण उसे अत्यधिक मानसिक, शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक पीड़ा का सामना करना पड़ेगा । अत: यह अपेक्षित है कि न्याय के बृहत हित में गर्भ का समापन किया जाए ।

5. आवेदक के विद्वान् अधिवक्ता ने यह भी तर्क प्रस्तुत किया है कि एमटीपी अधिनियम की धारा 3 गर्भपात की अनुमति केवल उस समय प्रदान करती है यदि विनिर्दिष्ट शर्तों को पूरा किया जाता है । इसके अतिरिक्त किसी महिला का प्रजनन संबंध विकल्प लेने का अधिकार और साथ ही उसकी तुलना में भारत के संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों के अधीन भिन्न-भिन्न रूप में निर्वचित निजी स्वतंत्रता के आयाम, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए यह दिशा-निर्देश कि "इस बात को मान्यता देना अत्यंत महत्वपूर्ण है कि प्रजनन संबंध विकल्पों का प्रयोग किसी बालक को जन्म देने और साथ ही किसी को भी जन्म न देने के विकल्प के प्रयोग को भी अंतर्विष्ट करता है", इन सब तथ्यों को भी विचार में लेना होगा ।

6. इस न्यायालय (गणपूर्ति : न्यायमूर्ति संगीता के. विशन) ने तारीख 10 जून, 2020 को नीचे उल्लिखित आदेश को पारित किया है जो निम्नानुसार है :-

> "1. याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री आर. बी. ठाकोर और प्रत्यर्थी राज्य के लिए विद्वान् अपर लोक अभियोजक सुश्री निशा ठाकोर को वीडियो कांफ्रेंसिंग के माध्यम से सुना ।
>
> 2. याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री ठाकोर ने वर्तमान याचिका के माध्यम से दलीलें प्रस्तुत करते हुए इस संबंध में प्रत्यर्थी

प्राधिकारी को आवश्यक निदेश जारी करने का अनुरोध किया है कि वह 14 वर्षीय याची-पीड़िता के गर्भ का समापन करे । इसके पश्चात् यह दलील दी गई है कि गर्भ धारण करने वाली महिला का मानसिक स्वास्थ्य और यह तथ्य कि वह उसके साथ हुए बलात्संग के परिणामस्वरूप अपनी कोख में एक बालक को धारण कर रही है, याची को उसके संपूर्ण जीवन के लिए अत्यधिक मानसिक संताप कारित करेगा और इसके अतिरिक्त उसके सामने इस गर्भ के कारण सामाजिक-आर्थिक समस्याएं भी आ सकती हैं । याची के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा यह भी दलील दी गई है कि इस न्यायालय ने एक समान तथ्यों वाले मामले में जिसमें एक 14 वर्षीय अप्राप्तव्य बालिका संलिप्त थी, 2016 के विशेष दांडिक आवेदन (निदेश) सं. 3679 में पारित अपने तारीख 8 जून, 2016 के आदेश द्वारा 20 सप्ताह की अनुबंधित अवधि से परे गर्भ का समापन करने हेतु अनुमति प्रदान की है । अतः यह अनुरोध किया जाता है कि वर्तमान मामले में भी समान प्रकार का निदेश जारी किया जाए ।

3. विद्वान् अपर लोक अभियोजक ने यह दलील प्रस्तुत की है कि इस मामले को जनरल अस्पताल, पालनपुर को निर्दिष्ट किया जाए और वहां से पीड़िता के गर्भ को जारी रखने/उसका समापन करने की साध्यता के विषय में आवश्यक विशेषज्ञ राय प्राप्त की जाए । विद्वान् अपर लोक अभियोजक ने अनुदेश दिए जाने पर कुछ डाक्टरों के नामों का भी सुझाव दिया है, डाक्टर एम. वी. पटेल, विभागाध्यक्ष, बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय, डाक्टर मधुसूदन गड़वी, पूर्णकालीन स्त्री रोग विशेषज्ञ, डाक्टर श्वेता गुप्ता, स्त्री रोग विशेषज्ञ ।

4. इस न्यायालय ने वर्ष 2016 के विशेष दांडिक आवेदन (निदेश) सं. 3679 में पारित अपने तारीख 8 जून, 2016 के आदेश के पैरा 15, पैरा 16 और पैरा 17 में निम्नानुसार संप्रेक्षण किया है –

> '15. चूंकि याची ने अनुतोष हेतु अनुरोध अपने माता-पिता की सहमति से स्वयं किया है इसलिए उसकी अल्पायु

और उसके साथ हुई बलात्संग की घटना और उसके परिणामस्वरूप हुए उसके गर्भाधान के कारण उसके मानसिक स्वास्थ्य को पहुंची गंभीर क्षति के संबंध में अनुमान लगाया जा सकता है । उसका नाजुक स्वास्थ्य और निम्न हिमोग्लोबीन स्तर यह अपेक्षा करता है कि उसकी एक बार पुन: डाक्टरों के दल द्वारा जांच कराए जाने की आवश्यकता है और साथ ही उसकी सुरक्षा को भी सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है क्योंकि इस न्यायालय की यह राय है कि पीड़िता के सर्वोत्तम हित में गर्भ के समापन की अनुमति दिया जाना अपेक्षित है, यदि अन्यथा डाक्टरों के दल द्वारा एक मत से इस प्रभाव की राय दी जाती है कि गर्भ का समापन सुरक्षित रूप से किया जा सकता है ।

16. अत: यह उचित होगा कि अभियोजिका-याची के साथ परस्पर क्रिया करने वाले वरिष्ठ विशेषज्ञ डाक्टर और उसके माता-पिता इस न्यायालय को कोई प्रतिनिर्देश किए बिना सर्वोत्तम हित के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए विनिश्चय लें और यथासंभव शीघ्र उसके गर्भ का समापन करें ।

17. इसके परिणामों और याची के स्वास्थ्य के संबंध में इस न्यायालय को एक सप्ताह के भीतर रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए । संबद्ध डाक्टर हिमोग्लोबीन के स्तर की जांच करेंगे और गर्भ के समापन संबंधी प्रक्रिया करने से पूर्व सभी अन्य आवश्यक परीक्षण भी करेंगे । गर्भ के समापन के पश्चात् याची-अप्राप्तवय बालिका दल के वरिष्ठतम डाक्टर द्वारा आवश्यक समझी जाने वाली समयावधि के लिए उपचार लेना जारी रखेगी ।'

5. पूर्वोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए और विशिष्ट रूप से इस बात को ध्यान में रखते हुए कि जब याची ने अपनी विधिक संरक्षक और माता हंसाबेन रगनाथभाई ठाकोर के माध्यम से प्रत्यर्थी प्राधिकारी को यह निदेश देने का अनुरोध किया है कि याची

के गर्भ का समापन किया जाए तो ऐसी स्थिति में गर्भ समापन की अनुमति प्रदान किए जाने से पूर्व पीड़िता की एक ब्योरेवार चिकित्सा रिपोर्ट प्राप्त करना आवश्यक है । अत: चिकित्सीय अधीक्षक, पालनपुर जनरल अस्पताल को यह निदेश दिया जाता है कि वह वरिष्ठतम स्त्री रोग विशेषज्ञों के एक पैनल जिसमें डाक्टर एम. वी. पटेल, विभागाध्यक्ष, बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय, डाक्टर मधुसूदन गड़वी, पूर्णकालीन स्त्री रोग विशेषज्ञ, डाक्टर श्वेता गुप्ता, स्त्री रोग विशेषज्ञ सम्मिलित होंगे, के माध्यम से याची की पूर्ण परीक्षा कराए । डाक्टरों का दल 12 जून, 2020 को पीड़ित बालिका की परीक्षा करेगा और उसके साथ बातचीत करने के पश्चात् शीघ्रातिशीघ्र पीड़ित बालिका के गर्भाधान के अग्रिम प्रक्रम और उसकी शारीरिक और मानसिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस संबंध में अपनी लिखित राय प्रस्तुत करेगा कि क्या यदि बालक का जन्म होता है तो उसके कारण याची के जीवन को कोई सारवान् जोखिम हो सकता है या क्या बालक ऐसी शारीरिक या मानसिक अप्रसामान्यताओं के साथ जन्म लेगा जो उसे गंभीर रूप से विकलांग बना देंगी ।

6. चिकित्सीय अधीक्षक, पालनपुर जनरल अस्पताल शीघ्रातिशीघ्र याची को अस्पताल में दाखिल करेगा और उसे केवल न्यायालय के आदेश के पश्चात् ही अस्पताल से छुट्टी दी जाएगी ।

7. रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह इस आदेश की प्रति संबंधित पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ताओं को अनुवर्ती कार्रवाई हेतु प्रदान करे । मामले की अगली सुनवाई तारीख 15 जून, 2020 को होगी ।"

7. उपरोक्त आदेश के अनुसरण में इस न्यायलय को डांक्टर सुनील आर. जोशी, चिकित्सीय अधीक्षक, जनरल अस्पताल, बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान, पालनपुर से विशेषज्ञ डाक्टरों के एक पैनल की राय तारीख 13 जून, 2020 के पत्र सं. जीएनपीसीटी/बीएमसीआरआई/एमएस/2020106/13/03 के माध्यम से प्राप्त हुई है जो उप रजिस्ट्रार, गुजरात उच्च न्यायालय को संबोधित है और जिसमें

मामले से संबद्ध दस्तावेजों को संलग्न किया गया जिन्हें अभिलेख पर लिया गया है । उपरोक्त राय निम्नानुसार है :-

"माननीय गुजरात उच्च न्यायालय के तारीख 10 जून, 2020 के आदेश के अनुसार हमने बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान तथा जनरल अस्पताल, पालनपुर के स्त्री रोग विशेषज्ञों का एक पैनल तैयार किया था जिसमें निम्नलिखित व्यक्ति सम्मिलित हैं -

(1) डाक्टर एम. यू. पटेल (विभागाध्यक्ष, स्त्री रोग विभाग, बीएमसीआरआई)

(2) डाक्टर मधुसूदन गड़वी (स्त्री रोग विशेषज्ञ)

(3) डाक्टर श्वेता गुप्ता (स्त्री रोग विशेषज्ञ)

उपरोक्त पैनल ने पूर्वोक्त विषय के संबंध में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है जिसे इस पत्र के साथ संलग्न किया गया है ।

चूंकि तारीख 12 जून, 2020 को गर्भाधान की अवधि 20 सप्ताह और 6 दिन हो गई है इसलिए एमटीपी अधिनियम, 1971 तथा गर्भ का चिकित्सीय समापन नियम, 2003 के अधीन की गई अपेक्षा के अनुसार गर्भ के समापन हेतु माननीय गुजरात उच्च न्यायालय की विशेष अनुमति अपेक्षित है ।"

8. आवेदक के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि डाक्टरों ने स्पष्ट रूप से यह राय प्रस्तुत की है कि गर्भ को जारी रखे जाने से पीड़िता के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है । इसलिए एएनसी प्रोफाइल रिपोर्ट के पश्चात् सम्यक् जोखिम के साथ गर्भ के समापन के संबंध में सलाह दी जाती है । यह और दलील दी गई है कि गर्भावस्था का जारी रहना पीड़िता की मानसिक और शारीरिक स्थिति को और अधिक प्रभावित करेगा । यहां अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न याची के स्वास्थ्य का है । विद्वान् अधिवक्ता ने यह अनुरोध किया है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा विहित 'सर्वोत्तम हित' का सिद्धांत इस संबंध में एक अपेक्षास्वरूप है कि क्या लिया गया विनिश्चय प्रश्नगत व्यक्ति के हित को सिद्ध करेगा और न्यायालय का

विनिश्चय केवल पीड़ित व्यक्ति के हितों द्वारा ही मार्गदर्शित होना चाहिए और न कि अन्य पणधारियों के । विद्वान् अधिवक्ता ने यह भी कथन किया है कि पीड़िता के माता-पिता भी अपनी पुत्री की दशा को देखकर मानसिक आघात की स्थिति से गुजर रहे हैं । यह भी तर्क दिया गया है कि निजी स्वतंत्रता के रूप में भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन याची का यह अधिकार है कि वह स्वयं इस संबंध में विनिश्चय कर सकती है कि क्या उसे अपनी गर्भावस्था को जारी रखना है अथवा नहीं । उसने कतिपय निर्णयों का भी अवलंब लिया है जिनके संबंध में आगे चर्चा की गई है ।

9. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान् सहायक लोक अभियोजक ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि न्यायालय को यह निर्णय डाक्टरों के दल के विवेकाधिकार पर छोड़ देना चाहिए जैसा कि **चंद्रकांत जयंतीलाल सुथर** बनाम **गुजरात राज्य**[1] (वर्ष 2015 के विशेष दांडिक आवेदन सं. 4255 से उद्भूत होने वाली विशेष इजाजत अपील (दांडिक) सं. 6013/2015) वाले मामले में किया गया था जिसमें यह संप्रेक्षण किया गया कि यदि डाक्टरों के दल का मत यह है कि पीड़िता के जीवन की रक्षा करने के लिए गर्भ का तुरंत समाप्त किया जाना आवश्यक है तो सिविल अस्पताल का संबद्ध डाक्टर आवश्यक शल्य-क्रिया करेगा । इसके अतिरिक्त यह तर्क भी प्रस्तुत किया गया है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और साथ ही भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में यथा-अंतर्विष्ट निजी स्वतंत्रता की अवधारणा को ध्यान में रखते हुए उन्होंने एक न्यायोचित तथा साम्यापूर्ण आदेश पारित करने का अनुरोध किया है ।

10. वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करने से पूर्व यह अपेक्षित है कि एमटीपी अधिनियम के सुसंगत उपबंधों का परिशीलन किया जाए जो निम्नानुसार हैं :–

"3. गर्भ रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा-व्यवसायिओं द्वारा कब समाप्त किया जा सकता है – (1) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) में

---

[1] 2015 (8) एस. सी. सी. 721.

किसी बात के होते हुए भी, यदि कोई गर्भ किसी रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा-व्यवसायी द्वारा इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार समाप्त किया जाए तो वह चिकित्सा-व्यवसायी उस संहिता के अधीन या किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन किसी अपराध का दोषी नहीं होगा ।

(2) उपधारा (4) के उपबंधों के अधीन रहते हुए यह है कि –

(क) जहां गर्भ 12 सप्ताह से अधिक का न हो, वहां यदि ऐसे चिकित्सा-व्यवसायी ने, अथवा

(ख) जहां गर्भ बारह सप्ताह से अधिक का हो किंतु बीस सप्ताह से अधिक का न हो, वहां यदि दो से अन्यून रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा-व्यवसायियों ने,

सद्भावपूर्वक यह राय कायम की हो कि –

(i) गर्भ के बने रहने से गर्भवती स्त्री का जीवन जोखिम में पड़ेगा अथवा उसके शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर क्षति की जोखिम होगी : अथवा

(ii) इस बात की पर्याप्त जोखिम है कि यदि बच्चा पैदा हुआ तो वह ऐसी शारीरिक या मानसिक अप्रसामान्यताओं से पीड़ित होगा कि वह गंभीर रूप से विकलांग हो,

तो वह गर्भ रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा-व्यवसायी द्वारा समाप्त किया जा सकेगा ।

स्पष्टीकरण 1 – जहां किसी गर्भ के बारे में गर्भवती स्त्री द्वारा यह अभिकथन किया जाए कि वह बलात्संग द्वारा हुआ है तो ऐसे गर्भ के कारण होने वाले मनस्ताप के बारे में यह उपधारणा की जाएगी कि वह गर्भवती स्त्री के मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर क्षति है ।

स्पष्टीकरण 2 – जहां किसी विवाहिता स्त्री या उसके पति द्वारा बच्चों की संख्या सीमित रखने के प्रयोजन से उपयोग में

लाई गई किसी प्रयुक्ति या व्यवस्था की असफलता के फलस्वरूप कोई गर्भ हो जाए वहां ऐसे अवांछित गर्भ के कारण होने वाले मनस्ताप के बारे में यह उपधारणा की जा सकेगी कि वह गर्भवती स्त्री के मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर क्षति है ।

(3) इस बात का अवधारण करने में कि गर्भ के बने रहने से उपधारा (2) में यथावर्णित स्वास्थ्य की क्षति की जोखिम होगी या नहीं, गर्भवती स्त्री की वास्तविक या उचित रूप से पूर्वानुमेय परिस्थितियों का विचार किया जा सकेगा ।

(4) (क) किसी ऐसी स्त्री का गर्भ, जिसने अठारह वर्ष की आयु प्राप्त न की हो, अथवा जिसने अठारह वर्ष की आयु प्राप्त कर ली हो किंतु जो मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति हो, उसके संरक्षक की लिखित सम्मति से ही समाप्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(ख) खंड (क) में अन्यथा उपबंधित के सिवाय, कोई गर्भ गर्भवती स्त्री की सम्मति से ही समाप्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

11. इस न्यायालय ने दोनों पक्षकारों द्वारा उद्धृत निम्नलिखित निर्णयों पर विचार किया है :-

(क) सुचिता श्रीवास्तव और अन्य **बनाम** चंडीगढ़ प्रशासन, (2009) 3 जी. एल. एच. 468 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 235 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया है –

"11. ऊपर उद्धृत उपबंध को पढ़ने मात्र से ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारतीय विधि गर्भपात के लिए केवल उस समय अनुज्ञा प्रदान करती है यदि विनिर्दिष्ट शर्तों को पूरा किया जाता है । जब एमटीपी अधिनियम को पहली बार वर्ष 1971 में अधिनियमित किया गया था तो उसे मुख्य रूप से वर्ष 1967 के गर्भपात अधिनियम के आधार पर प्रारूपित किया गया था जिसे युनाइटेड किंगडम में पारित किया गया था । इस विधान के पीछे विधायी आशय एक अर्हित 'गर्भपात

के अधिकार' को उपलब्ध कराना था तथा गर्भ धारण करने वाली माताओं के लिए गर्भ के समापन को इससे पूर्व कभी भी एक सामान्य प्रक्रिया के रूप में मान्यता प्रदान नहीं की गई थी । इस बात में कोई संदेह नहीं है कि किसी महिला के प्रजनन संबंधी विकल्पों को चयन करने का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन अनुष्ठापित 'निजी स्वतंत्रता' का एक आयाम है । इस तथ्य को मान्यता प्रदान करना आवश्यक है कि प्रजनन संबंधी विकल्पों का प्रयोग बालक को जन्म देने का विनिश्चय करने के साथ ही किसी बालक को जन्म न देने का विनिश्चय करने के लिए भी किया जा सकता है । इस संबंध में विचारार्थ महत्वपूर्ण विषय यह है किसी महिला की निजता, आत्म-सम्मान और उसकी शारीरिक अक्षमता को सम्मान दिया जाना चाहिए । इसका तात्पर्य यह है कि प्रजनन संबंधी विकल्पों के प्रयोग के संबंध में कोई भी निर्बंधन नहीं होना चाहिए जैसे कि किसी महिला के किसी लैंगिक क्रिया-कलाप में भागीदारी से इनकार करने का अधिकार या वैकल्पिक रूप से गर्भ निरोधक पद्धतियों के उपयोग पर बल देना है । इसके अतिरिक्त, महिलाएं गर्भ निरोधक पद्धतियों का चयन करने के लिए भी स्वतंत्र हैं जैसे कि वन्ध्यीकरण संबंधी प्रक्रियाओं के अध्यधीन होना । इस संबंध में तर्कपूर्ण निष्कर्ष यह है कि किसी महिला के प्रजनन संबंधी अधिकारों ने किसी महिला द्वारा उसके गर्भ को पूर्ण अवधि तक धारण करने, किसी बालक को जन्म देने और पश्चात्वर्ती रूप से उसकी परवरिश करने का अधिकार भी सम्मिलित है । तथापि, किसी गर्भवती महिला की दशा में राज्य का एक बाध्यकारी हित भी अंतर्वलित है कि बालक के जीवन की रक्षा की जाए । अत: गर्भ के समापन की केवल उस समय अनुज्ञा प्रदान की जाती है जब लागू कानून में विनिर्दिष्ट शर्तों को पूरा कर दिया जाता है । अत: एमटीपी अधिनियम, 1971 के उपबंधों को ऐसे युक्तियुक्त निर्बंधनों के रूप में देखा जा सकता है जिन्हें प्रजनन संबंधी विकल्पों का प्रयोग करने के संबंध में अधिरोपित किया गया है ।

*** *** ***

19. जैसा कि इसके शाब्दिक वर्णन से स्पष्ट हो जाता है 'सर्वोत्तम हित' पद की परीक्षा न्यायालय से यह अपेक्षा करती है कि वह कार्रवाई के ऐसे अनुक्रम को अभिनिश्चित करे जो प्रश्नगत व्यक्ति के हित को सर्वोत्तम रूप से सिद्ध करे । वर्तमान परिस्थितियों में इसका तात्पर्य यह है कि न्यायालय को गर्भावस्था की साध्यता के संबंध में चिकित्सीय राय के संबंध में ध्यानपूर्वक जांच करनी चाहिए और साथ ही पीड़िता के समक्ष आने वाली सामाजिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना चाहिए । यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि न्यायालय के निर्णय को केवल पीड़िता के हित से मार्गदर्शित होना चाहिए न कि अन्य पणधारियों के जैसे कि उसके संरक्षक या साधारण रूप से समाज । यह स्पष्ट है कि प्रश्नगत महिला को देखभाल और सहायता की आवश्यकता होगी जिसमें कतिपय लागतें भी अंतर्वलित होंगी । तथापि, यह तथ्य प्रजनन अधिकारों का प्रयोग करने से इनकार किए जाने का आधार नहीं हो सकता ।"

(ख) चंद्रकांत जयंतीलाल सुथर **बनाम** गुजरात राज्य (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार संप्रेक्षण किया है –

"4 यदि पूर्वकथित डाक्टरों का मत यह है कि सुश्री मैत्री के जीवन की रक्षा करने के लिए गर्भ का तुरंत समापन आवश्यक है तो सिविल अस्पताल का संबद्ध डाक्टर आवश्यक शल्य-क्रिया करेगा यदि याची और सुश्री मैत्री इस न्यायालय से अनुमति लिए बिना इस प्रकार गर्भपात कराने की वांछा करते हैं । यदि डाक्टरों के बीच किसी राय को लेकर एकमत नहीं है तो डाक्टरों के बहुमत वाली राय को लागू किया जाएगा ।"

(ग) इस न्यायालय ने डाक्टर जैकब जॉर्ज **बनाम** केरल राज्य, (1994) एस. सी. सी. 3430 = 1994 ए. आई. आर. एस. सी.

डब्ल्यू. 2282 वाले मामले में दिए गए उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भी विचार किया है ।

(घ) इस न्यायालय ने विशेष दांडिक आवेदन सं. 1919/2015 आशाबेन पत्नी दिनेशभाई जस्सुभाई तलसानिया (देवीपूजक) **बनाम** गुजरात राज्य, 2015 ए. आई. आर. सी. सी. 3387 (गुजरात) वाले मामले में (गणपूर्ति : न्यायमूर्ति जे. बी. परदीवाला) इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय तथा शैदाखातून पत्नी इजरायल जीबक मनसूरी **बनाम** गुजरात राज्य वाले मामले में इस न्यायालय (गणपूर्ति : न्यायमूर्ति वीरेशकुमार बी. मायानी) द्वारा दिए गए निर्णय और साथ ही विशेष दांडिक आवेदन सं. 2247/2020 में इस न्यायालय (गणपूर्ति : न्यायमूर्ति वी. पी. पटेल) द्वारा तारीख 14 मई, 2020 को पारित निर्णय पर भी विचार किया है ।

12. एमटीपी अधिनियम की धारा 3(2) के अनुसार (क) जहां गर्भावस्था की अवधि 12 सप्ताह से अधिक नहीं है और यदि ऐसा चिकित्सीय व्यवसायी, या (ख) जहां ऐसी गर्भावस्था की अवधि 12 सप्ताह से अधिक है किंतु 20 सप्ताह से अधिक नहीं है और यदि न्यूनतम 2 रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायिओं की राय जिसे सद्भावपूर्वक बनाया गया है, यह है कि गर्भावस्था को जारी रखना गर्भ धारण करने वाली महिला के जीवन के प्रति जोखिम कारित करेगा या उसके भौतिक जीवन या मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर क्षति कारित करेगा या इस बात का सारवान् जोखिम है कि यदि बालक को जन्म दिया जाता है तो वह ऐसी भौतिक या मानसिक अप्रसामान्यताओं से ग्रस्त होगा जो उसे गंभीर रूप से विकलांग बना देगी ।

12.1 वर्तमान मामले में गर्भ की अवधि 20 सप्ताह और 6 दिन है, अत: चिकित्सा व्यवसायी अपने विवेकानुसार गर्भ का समापन नहीं कर सकते । यदि वे न्यायालय के आदेश के बिना गर्भ का समापन करते हैं तो डाक्टरों का यह कार्य विधि-विरुद्ध होगा और वह भारतीय दंड संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन दंडनीय अपराध के रूप में माना जाएगा ।

12.2 एमटीपी अधिनियम की धारा 3 के नीचे स्पष्टीकरण 1 के

अनुसार यह उपबंध किया गया है कि जहां किसी गर्भ धारण करने वाली महिला द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि उसका गर्भ उसके साथ किए गए बलात्संग का परिणाम है वहां ऐसे गर्भ के कारण होने वाले मनस्ताप के बारे में यह उपधारण की जाएगी कि वह गर्भ धारण करने वाली महिला के मानसिक स्वास्थ्य को घोर क्षति कारित करेगा ।

12.3 वर्तमान मामले में याची ने उसके साथ अभियुक्त द्वारा बलपूर्वक की गई बलात्संग की घटना के परिणामस्वरूप गर्भ धारण किया है । याचिका की अंतर्वस्तु के अनुसार यह कथन किया गया है अपनी कोख में बालक को धारण करने और उसे जन्म देने के कारण उसे उसके संपूर्ण जीवन के दौरान घोर मानसिक संताप कारित होगा तथा उसके कारण उसके समक्ष अनेक अन्य सामाजिक-आर्थिक समस्याएं भी आएंगी । इसे गर्भ धारण करने वाली महिला के मानसिक स्वास्थ्य को घोर क्षति के रूप में कथित किया जा सकता है ।

12.4 **चंदकांत जयंतीलाल सुथर** बनाम **गुजरात राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में गर्भ 24 सप्ताह का था । उक्त मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने पीड़िता के अनुरोध और उसकी निजी स्वतंत्रता तथा सर्वोत्तम हित के कारकों को ध्यान में रखते हुए गर्भ समाप्त करने की अनुमति प्रदान की थी ।

12.5 माननीय उच्चतम न्यायालय ने **शर्मिष्ठा चक्रबर्ती** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में 25 सप्ताह के गर्भ को समाप्त करने की अनुमति प्रदान की थी ।

13. याचिका की अंतर्वस्तु, लागू विधियों के उपबंधों, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा ऊपर विनिर्दिष्ट मामलों में अधिकथित अनुपात, याची की निजता के अधिकार, चिकित्सा रिपोर्टों पर विचार करते हुए तथा यहां ऊपर चर्चा किए गए अनुसार सर्वोत्तम हित के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय का यह मत है कि याची के गर्भ का समापन न्याय के हित को सिद्ध करेगा । अत: यह अपेक्षित है कि याची को उसका गर्भ समाप्त करने की अनुमति दी जाए और

---

[1] (2018) 13 एस. सी. सी. 339 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. (अनु.) 957 = (2017) 7 स्केल 389.

तद्नुसार उक्त अनुमति प्रदान की जाती है । अतः उसे शीघ्रातिशीघ्र गर्भ समाप्त करने की अनुमति प्रदान की जाती है ।

14. संबद्ध डाक्टर एएनसी प्रोफाइल रिपोर्ट के पश्चात् सम्यक् जोखिम और साथ ही अन्य चिकित्सा विशेषज्ञ ऐसी उचित देखभाल जो चिकित्सा न्याय शास्त्र के अनुसार पीड़ित के जीवन की सुरक्षा के लिए अपेक्षित है, के साथ गर्भ का समापन करेंगे । इस प्रक्रिया के परिणाम और याची के स्वास्थ्य संबंधी रिपोर्ट एक सप्ताह के भीतर इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की जाएगी ।

15. बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान, पालनपुर के चिकित्सा अधीक्षक भ्रूण से निष्कर्षित ऊतकों को वैज्ञानिक रीति में डीएनए की पहचान हेतु याची द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध थरड़ पुलिस थाना, जिला बनासकांठा में रजिस्ट्रीकृत अपराध के संबद्ध अन्वेषण अधिकारी को सौंप देगा जो उसे संबद्ध न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला को समुचित परीक्षणों हेतु अग्रेषित करेगा ।

16. रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह विद्वान् सहायक लोक अभियोजक को आदेश की प्रति उपलब्ध कराए जिसे वह आगे संसूचित करेगा और साथ ही इस आदेश की एक प्रति याची के विद्वान् अधिवक्ता, संबद्ध अन्वेषण अधिकारी और संबद्ध चिकित्सा अधीक्षक, बनास आयुर्विज्ञान महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान, पालनपुर को ईमेल/फैक्स संदेश/या किसी अन्य समुचित इलेक्ट्रोनिक पद्धति से उपलब्ध कराए जिससे वे अनुवर्ती कार्रवाई कर सकें ।

17. तद्नुसार उपरोक्त निदेशों के साथ वर्तमान याचिका का निपटारा किया जाता है । इस नियम को आत्यंतिक बनाया जाता है ।

याचिका मंजूर की गई ।

पु.

करुणा डेका

बनाम

असम राज्य और अन्य

(2014 की दांडिक अपील सं. 261)

तारीख 26 जून, 2020

न्यायमूर्ति मानस रंजन पाठक और न्यायमूर्ति मनीष चौधरी

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 364 – फिरौती के लिए व्यपहरण – अभिकथित रूप से घरेलू नौकर द्वारा अन्य अभियुक्तों के साथ मिलकर इत्तिलाकर्ता के ढ़ाई वर्षीय पुत्र का अपहरण किया जाना – फिरौती की मांग – पुलिस द्वारा अभियुक्त को अपहृत बालक के साथ गिरफ्तार किया जाना – अभियोजन पक्ष द्वारा केवल तीन साक्षियों की परीक्षा किया जाना – अनेक सारवान्/प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों, अर्थात् बालक को छुड़ाने गए पुलिस उप अधीक्षक, बालक के दादा आदि की परीक्षा न किया जाना – अन्वेषण अधिकारी द्वारा मामले के अनेक सारवान् पहलुओं के संबंध में अन्वेषण न करना, जैसे कि अपहरण के स्थल के आस-पास के किसी व्यक्ति या बालक को छुड़ाए जाने के स्थल के आस-पास के किसी व्यक्ति से पूछताछ न करना – फिरौती की रकम को बालक के छुड़ाए जाने के स्थल तक ले जाने और अपहरण के पश्चात् बालक के घर पर लैंडलाइन पर आई और रिकार्ड की गई फिरौती संबंधी कॉलों संबंधी साक्ष्य को अभिलेख पर न लाया जाना – अभियुक्त के साथ गिरफ्तार किए गए व्यक्ति से अभिगृहीत कागज पर लिखे टेलीफोन नंबर को अभिनिश्चित नहीं किया जाना – बालक के माता-पिता द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य का केवल अनुश्रुत साक्ष्य होने के कारण स्वीकार्य न होना – इन सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए माननीय उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अभियोजन पक्ष सभी सुसंगत संदेहों से परे अभियुक्त का दोष साबित करने में असफल रहा है – अतः, दोषसिद्धि को अपास्त किया गया ।

वर्तमान अपील का निपटारा करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 4 अप्रैल, 1999 को पलबन दास, पुत्र श्री नारायण दास, निवासी जीएनवी रोड, अंबारी, गुवाहाटी ने लाटसिल पुलिस थाना, गुवाहाटी के थाना प्रभारी के समक्ष एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की, जिसमें अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि तारीख 4 अप्रैल, 1999 को प्रात: लगभग 7.30 बजे उसका नौकर अर्थात् करुणा कांत डेका, अर्थात् अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र मास्टर सोना, आयु लगभग ढाई वर्ष को उसकी दैनिक प्रात:कालीन सैर के लिए एजीपी कार्यालय, अंबारी के निकट सड़क की ओर ले गया । इत्तिलाकर्ता ने यह उल्लेख किया है कि प्रात: लगभग 8.30 बजे किसी व्यक्ति ने उसे टेलीफोन करके यह सूचित किया कि उसका पुत्र उनके पास है और उन्होंने अभियुक्त-अपीलार्थी को भी उसके हाथ-पैर बांधकर तथा आंखों पर पट्टी बांधकर बंधक बना रखा है किंतु प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किए जाने के समय तक उसका नौकर अर्थात् अभियुक्त-अपीलार्थी और उसका पुत्र दोनों ही वापस नहीं आए थे और उनका कोई अता-पता भी नहीं मिल सका था । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिकथित रूप से पुलिस थाने में तारीख 4 अप्रैल, 1999 को अपराह्न लगभग 2.45 बजे प्राप्त हुई है । पूर्वोक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर प्रभारी अधिकारी, लाटसिल पुलिस थाना ने दंड संहिता की धारा 363 के अधीन लाटसिल पुलिस थाना मामला सं. 43/1999 रजिस्टर किया और प्रभारी अधिकारी, लाटसिल पुलिस थाना ने स्वयं मामले का अन्वेषण करने का कार्य अपने हाथ में लिया । उसके तत्समान एक जीआर मामला भी रजिस्टर किया गया जो जीआर मामला सं. 1794/1999 के रूप में है । ऐसा प्रतीत होता है कि अन्वेषण के दौरान पुलिस ने अपहृत बालक को सार्थेबारी नामक एक स्थान से बरामद किया और उक्त बालक को तारीख 6 अप्रैल, 1999 को छुड़ाया गया । बालक को छुड़ाने के लिए पुलिस कार्मिकों द्वारा की गई कार्रवाई के दौरान अभियुक्त-अपीलार्थी को अपहृत बालक के साथ पाया गया और पुलिस ने उसे 6 अप्रैल, 1999 को एक अन्य व्यक्ति उमेश मेधी के साथ पकड़ा गया । मामले के अन्वेषण के दौरान पुलिस को इस मामले में 3 (तीन) अन्य व्यक्तियों, अर्थात् अमाल हलोई, जगन्नाथ तालुकदार और रंजीत बैश्य के संलिप्त होने की

जानकारी प्राप्त हुई और पुलिस ने इन तीन व्यक्तियों को भी इस मामले में गिरफ्तार किया । किंतु इसके पश्चात् उन्हें जमानत पर निर्मुक्त कर दिया गया । मामले के अन्वेषण अधिकारी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन साक्षियों के कथनों को भी लेखबद्ध किया । अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् और अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध प्रथम दृटया सारवान् सामग्री पाए जाने के पश्चात् संबद्ध अन्वेषण अधिकारी ने लाटसिल पुलिस थाने के उक्त मामला सं. 43/1999 के संबंध में तारीख 28 फरवरी, 2001 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 163 के अधीन 5 (पांच) अभियुक्त व्यक्तियों, अर्थात् (i) उमेश मेधी, (ii) अमाल हलोई, (iii) जगन्नाथ तालुकदार, (iv) रंजीत बैश्य और (v) करुणा डेका, अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 363/364क के अधीन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 163 के अधीन एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया । उप मंडल न्यायिक मजिस्ट्रेट (एस) सं. 1, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय के समक्ष तारीख 24 अप्रैल, 2012 को उपस्थित होने पर 3 (तीन) अभियुक्तों, अर्थात् (i) वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी (ii) अमाल हलोई और (iii) उमेश मेधी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 के अधीन आरोप पत्र की प्रतियां प्रदान की गईं । चूंकि दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है इसलिए उक्त मजिस्ट्रेट ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के अधीन पारित अपने तारीख 24 अप्रैल, 2012 के आदेश द्वारा संबद्ध जीआर मामला सं. 1794/1999 को विद्वान् सेशन न्यायाधीन, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय को सौंप दिया और साथ ही उससे संबंधित अभिलेख को भी उक्त न्यायालय को अंतरित कर दिया गया । अन्य दो अभियुक्त व्यक्तिओं, अर्थात् जगन्नाथ तालुकदार और रंजीत बैश्य को इस मामले में उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया क्योंकि वे फरार हो गए थे और उनके विरुद्ध उद्घोषणा और कुर्की के आदेशों के बावजूद उन्हें ढूंढ़ा नहीं जा सका था । मामला सौंपे जाने के अनुसरण में जीआर मामला सं. 1794/1999 से संबंधित मामला अभिलेख प्राप्त होने के पश्चात् उसे विद्वान् सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय द्वारा सेशन मामला सं. 226(के)/2012 के रूप में रजिस्टर किया गया और विद्वान् सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी ने अपने

तारीख 16 जून, 2012 के आदेश द्वारा उक्त मामले को विद्वान् सहायक सेशन न्यायाधीश सं. 3, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय को उसके निपटारे हेतु अंतरित किया । चूंकि दंड संहिता की धारा 364क में मृत्यु-दंड या आजीवन कारावास तक के दंड को उपबंधित किया गया है और क्योंकि सहायक सेशन न्यायाधीश सं. 3, कामरूप, गुवाहाटी के पास उक्त धारा के अधीन दंडादिष्ट करने की अधिकारिता नहीं थी इसलिए सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी ने अपने तारीख 12 सितंबर, 2012 के आदेश द्वारा उक्त सेशन मामला सं. 226(1)/2012 को विद्वान् सहायक सेशन न्यायाधीश सं. 3, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय से वापस ले लिया और उसने अपने तारीख 12 सितंबर, 2012 के आदेश द्वारा उक्त मामले को विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय को निपटारे हेतु अंतरित कर दिया । विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य और सामग्रियों का मूल्यांकन करके अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराया तथा उसके विरुद्ध दंडादेश पारित किया । उक्त निर्णय तथा आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में वर्तमान अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – विचारण न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने हेतु कोई साक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ कि अभियुक्त उमेश मेधी और अमाल हलोई बालक के अपहरण में संलिप्त थे । विचारण न्यायालय को अन्वेषण अधिकारी का केवल यह साक्ष्य प्राप्त हुआ कि पुलिस कार्मिकों ने जब अभियुक्त-अपीलार्थी को गिरफ्तार किया तो अभियुक्त उमेश मेधी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ था किंतु यह साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है । चूंकि अन्वेषण अधिकारी ने अभिकथित रूप से अभिगृहीत बटुए और कुछ कागज जिसमें इत्तिलाकर्ता का टेलीफोन नं. लिखा था, को मुहरबंद लिफाफे में नहीं रखा । इसलिए विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सामग्री प्रदर्श-1 को ऐसे बटुए और कागज के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता जो अभियुक्त उमेश मेधी के कब्जे से बरामद हुए थे । अन्वेषण अधिकारी द्वारा यह तक अभिनिश्चित नहीं किया गया है कि मामले में अभिगृहीत कागज पर लिखे टेलीफोन नं. इत्तिलाकर्ता या

उसके कुटुंब के किसी सदस्य के हैं । किसी व्यक्ति के कब्जे से मात्र ऐसा कोई कागज बरामद होने, जिसमें कोई टेलीफोन नं. लिखे हों, का तात्पर्य यह नहीं है कि उस व्यक्ति द्वारा फिरौती की मांग की गई थी या इस प्रकार की मांग अभियुक्त-अपीलार्थी जैसे उसके किसी अन्य साथी द्वारा की गई थी । किसी भी प्रकार की संपुष्टि के बिना ऐसा साक्ष्य अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध अभिशंसी नहीं माना जा सकता और वह उसके विरुद्ध किसी प्रकार के अपराध को भी प्रदर्शित नहीं करता है । यह स्थापित नहीं किया गया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के बालक का अपहरण किया और इस प्रकार उसका अपहरण करने के पश्चात् उसे निरुद्ध रखा । यह भी स्थापित नहीं किया गया है कि वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी ने फिरौती के लिए बालक का अपहरण किया । अभियोजन पक्ष के पास अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए केवल अन्वेषण अधिकारी का इस प्रभाव का साक्ष्य कि बालक को अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ पाया गया था और उस समय अभियुक्त उमेश मेधी भी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन लेखबद्ध किए गए उसके कथन के दौरान जब उससे उक्त परिस्थिति को स्पष्ट करने के लिए कहा गया तो अभियुक्त-अपीलार्थी ने यह कथन किया कि पुलिस ने उसे उस समय गिरफ्तार किया था जब वह बालक को अपहर्त्ताओं के कब्जे से छुड़ा कर वहां से भाग रहा था । जब अभियोजन पक्ष के इस प्रभाव के साक्ष्य कि अभियुक्त-अपीलार्थी को बालक के साथ पाया गया था, के संबंध में विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि इस साक्ष्य को सत्य के रूप में स्वीकार भी कर लिया जाए तो भी इस प्रभाव का निष्कर्ष निकालना संभव प्रतीत नहीं होता कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने बालक का अपहरण किया और अपहरण के पश्चात् उसने बालक को निरुद्ध रखा ताकि वह उसके माता-पिता से फिरौती की रकम वसूल कर सके और इन कारणों से ऊपर उल्लिखित दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध गठित करने के घटक आकर्षित नहीं होते हैं । ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय की सुविचारित राय यह है कि

विद्‌वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करने और उसका महत्व समझने में मामले के संपूर्ण तथ्यात्मक पहलुओं की परीक्षा नहीं की है जिसके अंतर्गत दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध को गठित करने के लिए अनिवार्य घटक भी हैं । यह बात भी हमारी जानकारी में आई है कि विचारण न्यायालय साक्ष्य को उसके उपयुक्त परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकित करने में असफल रहा है और उसने साक्ष्य की अंतर्निहित अस्वीकार्यता और उससे उद्भूत होने वाली संदेहास्पद परिस्थितियों पर विचार किए बिना अभियोजन साक्ष्य को उनके साधारण अर्थ में स्वीकार कर लिया है । संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध अपने पक्षकथन को साबित करने और बिना किसी त्रुटि के यह साबित करने में असफल रहा है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने ही उक्त अपराध कारित किया है और इस प्रकार अभियोजन अभियुक्त-अपीलार्थी के दोष को सिद्ध करने में असमर्थ रहा है । अभियोजन पक्ष द्‌वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से सुसंगत संदेह से परे उसका पक्षकथन स्थापित नहीं होता है । अतः हमारी राय के अनुसार विचारण न्यायालय ने अनुचित रूप से अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया है । ऊपर की गई चर्चा के आलोक में और उच्च न्यायालय द्‌वारा निकाले गए निष्कर्षों के आधार पर और उच्च न्यायालय द्‌वारा किए साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन के आधार पर उच्च न्यायालय की दृढ़ राय यह है कि विद्‌वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप (मेट्रो), गुवाहाटी द्‌वारा सेशन मामला सं. 226(के)/2012 में जो लाटसिल पुलिस थाने के मामला सं. 43/1999 के तत्समान जीआर मामला सं. 1794/1999 से उद्भूत हुआ है, अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध के लिए उसकी दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश को कायम नहीं रखा जा सकता और तद्‌नुसार उसे अपास्त और अभिखंडित किया जाता है । इसके परिणामस्वरूप वर्तमान अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी, अर्थात् श्री करुणा डेका को उक्त सेशन मामला

सं. 226(के)/2012 में जो लाटसिल पुलिस थाने के मामला सं. 43/1999 के तत्समान जीआर मामला सं. 1794/1999 से उद्भूत हुआ है, दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध से दोषमुक्त किया जाता है और उसे तुरंत निर्मुक्त किया जाता है, यदि वह किसी अन्य मामले के संबंध में अपेक्षित नहीं है । इस अपील के परिणाम के संबंध में तुरंत केंद्रीय कारागार, गुवाहाटी, सरूसजाई, जिला कामरूप (मेट्रो) को सूचित किया जाए और साथ ही उसे वर्तमान अपील में दिए गए निदेश और किए गए संप्रेक्षणों की भी सूचना दी जाए । रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह विचारण न्यायालय के अभिलेखों को इस निर्णय की प्रति के साथ विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप (मेट्रो), गुवाहाटी के न्यायालय को लौटा दे । (पैरा 30, 31, 32, 33, 34, 35 और 36)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] (2019) 2 एस. सी. सी. 303 =
ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 38 :
उत्तर प्रदेश राज्य बनाम **वसीफ अहमद और अन्य** ; 29

[2011] (2011) 2 एस. सी. सी. 532 =
ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 760 :
कुणाल कुमार गोगोई बनाम
आशुतोष अग्निहोत्री और अन्य । 24

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 261.

वर्तमान अपील अभियुक्त-अपीलार्थी श्री करुणा डेका द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप (मेट्रो), गुवाहाटी द्वारा लाटसिल पुलिस थाने के मामला सं. 43/1999 के तत्समान जीआर मामला सं. 1794/1999 से उद्भूत होने वाले सेशन मामला सं. 226(के)/2012 में पारित तारीख 2 जुलाई, 2014 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

अपीलार्थी की ओर से श्री जी. के. ठाकुरिया

प्रत्यर्थी की ओर से श्री आर. शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मनीष चौधरी ने दिया ।

न्या. चौधरी – वर्तमान अपील अभियुक्त-अपीलार्थी श्री करुणा डेका द्‌वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 374(2) के अधीन विद्‌वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप (मेट्रो), गुवाहाटी द्‌वारा लाटसिल पुलिस थाने के मामला सं. 43/1999 के तत्समान जीआर मामला सं. 1794/1999 से उद्भूत होने वाले सेशन मामला सं. 226(के)/2012 में पारित तारीख 2 जुलाई, 2014 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्‌वारा उसे भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 364क के अधीन सिद्धदोष ठहराया गया है और आजीवन कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है और साथ ही केवल 1,000/- रुपए (एक हजार रुपए मात्र) का जुर्माना अधिरोपित किया गया है जिसमें व्यतिक्रम करने पर उसे 1 (एक) माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगना होगा ।

2. आगे कार्यवाही करने से पूर्व यह आवश्यक है कि अभियोजन पक्षकथन को संक्षेप में उल्लिखित किया जाए । तारीख 4 अप्रैल, 1999 को पलबन दास, पुत्र श्री नारायण दास, निवासी जीएनवी रोड, अंबारी, गुवाहाटी ने लाटसिल पुलिस थाना, गुवाहाटी के थाना प्रभारी के समक्ष एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की, जिसमें अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि तारीख 4 अप्रैल, 1999 को प्रातः लगभग 7.30 बजे उसका नौकर अर्थात् करुणा कांत डेका, अर्थात् अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र मास्टर सोना, आयु लगभग ढाई वर्ष को उसकी दैनिक प्रातःकालीन सैर के लिए एजीपी कार्यालय, अंबारी के निकट सड़क की ओर ले गया । इत्तिलाकर्ता ने यह उल्लेख किया है कि प्रातः लगभग 8.30 बजे किसी व्यक्ति ने उसे टेलीफोन करके यह सूचित किया कि उसका पुत्र उनके पास है और उन्होंने अभियुक्त-अपीलार्थी को भी उसके हाथ-पैर बांधकर तथा आंखों पर पट्टी बांधकर बंधक बना रखा है किंतु

प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किए जाने के समय तक उसका नौकर अर्थात् अभियुक्त-अपीलार्थी और उसका पुत्र दोनों ही वापस नहीं आए थे और उनका कोई अता-पता भी नहीं मिल सका था । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिकथित रूप से पुलिस थाने में तारीख 4 अप्रैल, 1999 को अपराह्न लगभग 2.45 बजे प्राप्त हुई है ।

3. पूर्वोक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर प्रभारी अधिकारी, लाटसिल पुलिस थाना ने दंड संहिता की धारा 363 के अधीन लाटसिल पुलिस थाना मामला सं. 43/1999 रजिस्टर किया और प्रभारी अधिकारी, लाटसिल पुलिस थाना ने स्वयं मामले का अन्वेषण करने का कार्य अपने हाथ में लिया । उसके तत्समान एक जीआर मामला भी रजिस्टर किया गया जो जीआर मामला सं. 1794/1999 के रूप में है ।

4. ऐसा प्रतीत होता है कि अन्वेषण के दौरान पुलिस ने अपहृत बालक को सार्थेबारी नामक एक स्थान से बरामद किया और उक्त बालक को तारीख 6 अप्रैल, 1999 को छुड़ाया गया । बालक को छुड़ाने के लिए पुलिस कार्मिकों द्वारा की गई कार्रवाई के दौरान अभियुक्त-अपीलार्थी को अपहृत बालक के साथ पाया गया और पुलिस ने उसे 6 अप्रैल, 1999 को एक अन्य व्यक्ति उमेश मेधी के साथ पकड़ा गया । मामले के अन्वेषण के दौरान पुलिस को इस मामले में 3 (तीन) अन्य व्यक्तियों, अर्थात् अमाल हलोई, जगन्नाथ तालुकदार और रंजीत बैश्य के संलिप्त होने की जानकारी प्राप्त हुई और पुलिस ने इन तीन व्यक्तियों को भी इस मामले में गिरफ्तार किया । किंतु इसके पश्चात् उन्हें जमानत पर निर्मुक्त कर दिया गया । मामले के अन्वेषण अधिकारी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन साक्षियों के कथनों को भी लेखबद्ध किया । अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् और अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध प्रथमदृट्या सारवान् सामग्री पाए जाने के पश्चात् संबद्ध अन्वेषण अधिकारी ने लाटसिल पुलिस थाने के उक्त मामला सं. 43/1999 के संबंध में तारीख 28 फरवरी, 2001 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 163 के अधीन 5 (पांच) अभियुक्त व्यक्तियों, अर्थात् (i) उमेश मेधी, (ii) अमाल हलोई, (iii) जगन्नाथ तालुकदार, (iv) रंजीत बैश्य और (v) करुणा डेका,

अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 363/364क के अधीन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 163 के अधीन एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया ।

5. उप मंडल न्यायिक मजिस्ट्रेट (एस) सं. 1, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय के समक्ष तारीख 24 अप्रैल, 2012 को उपस्थित होने पर 3 (तीन) अभियुक्तों, अर्थात् (i) वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी (ii) अमाल हलोई और (iii) उमेश मेधी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 के अधीन आरोप-पत्र की प्रतियां प्रदान की गईं । चूंकि दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है इसलिए उक्त मजिस्ट्रेट ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के अधीन पारित अपने तारीख 24 अप्रैल, 2012 के आदेश द्वारा संबद्ध जीआर मामला सं. 1794/1999 को विद्वान् सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय को सौंप दिया और साथ ही उससे संबंधित अभिलेख को भी उक्त न्यायालय को अंतरित कर दिया गया । अन्य दो अभियुक्त व्यक्तियों, अर्थात् जगन्नाथ तालुकदार और रंजीत बैश्य को इस मामले में उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया क्योंकि वे फरार हो गए थे और उनके विरुद्ध उद्घोषणा और कुर्की के आदेशों के बावजूद उन्हें ढूंढ़ा नहीं जा सका था ।

6. मामला सौंपे जाने के अनुसरण में जीआर मामला सं. 1794/1999 से संबंधित मामला अभिलेख प्राप्त होने के पश्चात् उसे विद्वान् सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय द्वारा सेशन मामला सं. 226(के)/2012 के रूप में रजिस्टर किया गया और विद्वान् सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी ने अपने तारीख 16 जून, 2012 के आदेश द्वारा उक्त मामले को विद्वान् सहायक सेशन न्यायाधीश सं. 3, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय को उसके निपटारे हेतु अंतरित किया । चूंकि दंड संहिता की धारा 364क में मृत्यु-दंड या आजीवन कारावास तक के दंड को उपबंधित किया गया है और क्योंकि सहायक सेशन न्यायाधीश सं. 3, कामरूप, गुवाहाटी के पास उक्त धारा के अधीन दंडादिष्ट करने की अधिकारिता नहीं थी इसलिए सेशन न्यायाधीश, कामरूप, गुवाहाटी ने अपने तारीख 12 सितंबर, 2012 के आदेश द्वारा

उक्त सेशन मामला सं. 226(1)/2012 को विद्वान् सहायक सेशन न्यायाधीश सं. 3, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय से वापस ले लिया और उसने अपने तारीख 12 सितंबर, 2012 के आदेश द्वारा उक्त मामले को विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप, गुवाहाटी के न्यायालय को निपटारे हेतु अंतरित कर दिया ।

7. आरोप के मुद्दे पर विद्वान् लोक अभियोजक और विद्वान् प्रतिरक्षा काउंसेल को सुनने के पश्चात् तथा मामले के अभिलेखों का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप, गुवाहाटी ने तारीख 10 जनवरी, 2013 के अपने आदेश द्वारा पूर्व उल्लिखित 3 (तीन) अभियुक्तों, वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी सहित के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 364क/34 के अधीन आरोप विरचित किए जिसे उन्हें पढ़कर सुनाया गया तथा उनके संबंध में उन्हें स्पष्टीकरण भी उपलब्ध कराया गया जिसके संबंध में उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण का दावा किया ।

8. विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष की ओर से 3 (तीन) अभियोजन साक्षियों, अर्थात् (i) पलबन दास, अपहृत बालक का पिता (अभि. सा. 1), (ii) मोनालिसा दास, अपहृत बालक की माता और अभि. सा. 1 की पत्नी (अभि. सा. 2) तथा (iii) सोमेश्वर दत्ता, लाटसिल पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी और वर्तमान मामले के अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 3) की परीक्षा की । अभियोजन पक्ष ने 3 (तीन) दस्तावेजों को भी प्रदर्शित किया, अर्थात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-1) अभिग्रहण सूची (प्रदर्श-2) और आरोप पत्र (प्रदर्श-3) । अभिकथित रूप से अभियुक्त उमेश मेधी के कब्जे से अभिगृहीत एक पर्स और एक कागज को भी सारवान् प्रदर्श-1 के रूप में प्रदर्शित किया गया । प्रतिरक्षा पक्ष ने किसी भी प्रकार का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया । अभियुक्त व्यक्तियों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपनी परीक्षा के दौरान अभियोजन पक्षकथन से इनकार किया और उसे मिथ्या बताया तथा अपने निर्दोष होने का दावा किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त करुणा डेका, वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा

364क के अधीन विरचित आरोपों को साबित पाने के पश्चात् तद्नुसार तारीख 1 जुलाई, 2014 के अपने आक्षेपित निर्णय और आदेश के द्वारा उसे सिद्धदोष ठहराया तथा उसके विरुद्ध कठोर आजीवन कारावास को भोगने तथा 1,000/- रुपए (एक हजार रुपए मात्र) के जुर्माने का संदाय करने, जिसके व्यतिक्रम पर उसे एक माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगना होगा, का दंडादेश पारित किया । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने उक्त तारीख 2 जुलाई, 2014 के निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन शेष 2 (दो) अभियुक्तों, अर्थात् अमाल हलोई और उमेश मेधी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 364क/34 के अधीन आरोप साबित करने में असफल रहा है और इसलिए उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया । तारीख 2 जुलाई, 2014 के दोषसिद्धि और दंडादेश के उक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर अभियुक्त करुणा डेका ने वर्तमान अपील फाइल की है ।

9. हमने सुश्री निवा सरमा ठाकुरिया, अभियुक्त-अपीलार्थी की विद्वान् काउंसेल और सुश्री शमिमा जहां, विद्वान् अपर लोक अभियोजक, असम राज्य को सुना है । हमने प्रत्यर्थी सं. 2-इत्तिलाकर्ता के विद्वान् काउंसेल श्री रूपम शर्मा को भी सुना है ।

10. अपील के समर्थन में सुश्री ठाकुरिया, अभियुक्त-अपीलार्थी की विद्वान् काउंसेल ने सभी 3 (तीन) अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य को उद्धृत करते हुए यह दलील दी है कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि उसके विरुद्ध फिरौती के लिए अपहरण के अपराध संबंधी घटकों को स्थापित नहीं किया जा सका है । उसने यह भी दलील दी कि यहां तक कि स्वयं अभियुक्त-अपीलार्थी का भी अपहृत बालक के साथ अपहरण किया गया था और यह कि उसे न केवल त्रुटिवश गिरफ्तार किया गया अपितु पुलिस द्वारा उसके विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत करके उसे इस मामले में त्रुटिपूर्वक फंसाया गया । सुश्री ठाकुरिया ने यह भी दलील दी कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर विद्यमान साक्ष्य का सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन न करके अल्प साक्ष्य के आधार

पर अभियुक्त-अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराया है । उसने यह भी दलील दी कि अन्वेषण प्राधिकारियों द्वारा वास्तविक दोषी की पहचान स्थापित करने में असफल रहने पर अभियुक्त अपीलार्थी को इस अपराध में त्रुटिवश संलिप्त करके उसे बलि का बकरा बनाया गया । सुश्री ठाकुरिया ने यह भी दलील दी कि इस प्रकार के दोषपूर्ण अन्वेषण के कारण विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 2 जुलाई, 2014 को पारित दोषसिद्धि और दंडादेश का आक्षेपित निर्णय अनेक विसंगतियों से ग्रस्त है और इसलिए वर्तमान अपील को मंजूर करते हुए अभियुक्त-अपीलार्थी को इस मामले में दोषमुक्त किया जाना चाहिए ।

11. सुश्री जहां, विद्वान् अपर लोक अभियोजक, असम राज्य ने यह दलील दी है कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य अभियुक्त-अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 364क के अधीन यथा-परिभाषित फिरौती के लिए अप्राप्तवय पीड़ित के अपहरण के आरोप का दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है । उन्होंने यह भी दलील दी कि चूंकि पुलिस कार्मिकों ने अपहृत बालक की बरामदगी के समय अभियुक्त-अपीलार्थी को उसके साथ पाया था और इस कारण से अभियुक्त-अपीलार्थी के पक्ष में कोई और निष्कर्ष संभव नहीं है और इस प्रकार विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का उचित मूल्यांकन करने के पश्चात् उपयुक्त रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 364क के अधीन आरोप का दोषी पाया है । अतः सुश्री जहां ने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय के तारीख 2 जुलाई, 2014 के आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं है और यह भी कि वर्तमान अपील में कोई गुण नहीं है और इसलिए वह खारिज किए जाने के लिए दायी है । श्री रूपम शर्मा प्रत्यर्थी सं. 2-इत्तिलाकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने विद्वान् अपर लोक अभियोजक सुश्री जहां के तर्कों का समर्थन करते हुए यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय के तारीख 2 जुलाई, 2014 के आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं है ।

12. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा प्रस्तुत की गई दलीलों पर विचार किया है और साथ ही अभिलेख का भी ध्यानपूर्वक

परिशीलन किया है । पक्षकारों की दलीलों का मूल्यांकन करने के लिए यह आवश्यक है कि अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य की परीक्षा और उचित रूप से संवीक्षा की जाए ।

13. पलबन दास (अभि. सा. 1) ने अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह अभियुक्त-अपीलार्थी से परिचित है किंतु वह अन्य दो अभियुक्तों को नहीं जानता । उसने यह कथन किया है कि 1990 के दशक के अंत में अभियुक्त-अपीलार्थी उसके घर में एक नौकर के रूप में नियोजित था और घटना के समय उसका पुत्र मास्टर सोना लगभग ढाई वर्ष का था । अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र को प्रात: सैर के लिए ले जाता था और वे पूर्वाह्न लगभग 8.30 बजे तक घर लौट आते थे । किंतु घटना के दिन वे काफी देर तक वापस नहीं आए और जब वे उन दोनों को ढूंढ़ रहे थे तो उसे एक फोन काल आई जिसके द्वारा फोन करने वाले व्यक्ति ने उसे बताया कि उन्होंने उसके पुत्र के साथ ही अभियुक्त-अपीलार्थी को अपने कब्जे में ले लिया है और उसे अपने पुत्र की खोज नहीं करनी चाहिए और न ही इस संबंध में उसे पुलिस को सूचना देनी चाहिए । तथापि, फोन करने वाले व्यक्ति ने अपनी शनाख्त प्रकट नहीं की थी । इसके बावजूद भी कुटुंब ने इस घटना की सूचना पुलिस को दी । उसके पश्चात् अभिकथित अपहर्त्ताओं ने लगातार कुटुंब को फोन काल किए और उन्होंने उसके पुत्र को निर्मुक्त करने के लिए 10,000,00/- रुपए की रकम की मांग की । उसके उपरांत वह पुलिस थाने गया और उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-1) दर्ज की । उसके पश्चात् पुलिस उसके घर आई तथा उन्होंने उसके लैंड-लाइन टेलीफोन के साथ एक मशीन को जोड़ा और आने वाली फोन काल को रिकार्ड किया । उसके पश्चात् पुलिस ने अभिकथित अपहर्त्ताओं के साथ बातचीत और मोलभाव किया तथा अपहर्त्ताओं ने उन्हें धन लाने के लिए कहा । अपहर्त्ताओं ने उसे बताया कि उन्होंने उसके पुत्र को सार्थेबारी नामक एक स्थान पर रखा है । तदुपरांत अभि. सा. 1 के पिता पुलिस के साथ उसके पुत्र को बरामद करने के लिए गए । जब अपहर्त्ता धन के लिए आए तो पुलिस ने उन्हें एक ब्रीफकेस दिया और उससे पूर्व उन्होंने उसके पुत्र को छुड़ाया । उसके पश्चात् अभिकथित अपहर्त्ताओं के साथ

हाथ मिलाने का ढोंग करते हुए पुलिस ने सभी अपहर्त्ताओं को काबू में कर लिया । प्रात: लगभग 3.00 बजे पुलिस उनके घर वापस आई और पुलिस ने उसके पुत्र को उसे सौंप दिया । उसके पुत्र को उसके गुम हो जाने के 3 (तीन) दिन पश्चात् छुड़ाया गया था । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि पुलिस कार्मिक सिविल कपड़ों में कार्रवाई हेतु गए थे तथा उससे पहले दिन पुलिस कार्मिकों ने घटनास्थल के आस-पास स्वयं को तैनात कर दिया था । उसने यह उल्लेख किया है कि उस ग्राम का नाम हेलोचा है जहां से पुलिस ने उसके पुत्र को छुड़ाया था जो सार्थेबारी के समीप स्थित है ।

14. अभियुक्त-अपीलार्थी की ओर से की गई अपनी प्रतिपरीक्षा में उक्त अभि. सा. 1 ने यह कथन किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने लगभग 2 (दो) वर्ष तक उसके घर कार्य किया था और उस अवधि के दौरान वह प्राय: उसके पुत्र को प्रात: सैर के लिए ले जाता था और अभि. सा. 1 को अभियुक्त-अपीलार्थी के व्यवहार के संबंध में कभी कोई संदेह नहीं हुआ । अभि. सा. 1 ने यह भी कथन किया है कि अपहर्त्ताओं ने उनके द्वारा की गई फोन काल के दौरान उसे यह बताया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी और उसका पुत्र दोनों ही उनके पास थे किंतु अभि. सा. 1 ने इस बात से इनकार किया कि उसके पुत्र का अपहरण करते समय अपहर्त्ताओं ने अभियुक्त-अपीलार्थी का भी अपहरण किया था और उसने यह भी कथन किया कि उसने पुलिस को इस बारे में बताया था कि उसे प्रात: 8.30 बजे जो फोन काल प्राप्त हुई थी उसमें अपहर्त्ताओं ने उसे बताया था कि उन्होंने अभियुक्त-अपीलार्थी के हाथ-पैर बांधकर तथा आंख पर पट्टी बांध कर अपने पास रखा हुआ है । अभि. सा. 1 ने इस बात से इनकार किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र के अपहरण में संलिप्त नहीं था । यद्यपि उसने यह परिसाक्ष्य दिया है कि उसने यह नहीं देखा था कि उसके पुत्र को कहां से छुड़ाया गया किंतु उसने यह कथन किया है कि पुलिस ने उसे तीन लड़कों के नाम बताए थे । तथापि, अन्य दो अभियुक्त व्यक्तियों ने अभि. सा. 1 की प्रतिपरीक्षा करने से इनकार कर दिया था ।

15. अभि. सा. 2, मोनालिसा दास अभि. सा. 1 की पत्नी और अपहृत बालक की माता है । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह अभियुक्त-अपीलार्थी से परिचित है किंतु वह अन्य दो अभियुक्तों को नहीं जानती । उसका पुत्र मास्टर सोना तारीख 4 अप्रैल, 1999 को उसके घर से गुम हो गया था अभियुक्त-अपीलार्थी उस समय एक नौकर के रूप में उनके घर आया था जब उसका पुत्र लगभग 8 माह का था । घटना के समय उसके पुत्र की आयु लगभग ढाई वर्ष थी । अभियुक्त-अपीलार्थी सदैव उसके पुत्र को प्रातः सैर के लिए ले जाता था और घटना के दिन भी अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र को प्रातःकालीन सैर के लिए ले गया था । जब वह पूर्वाह्न 8/8.30 बजे तक वापस नहीं आए तो उन्होंने अड़ोस-पड़ोस के घरों में उन्हें ढूंढ़ना आरंभ किया । तब पूर्वाह्न लगभग 9.00/9.15 बजे किसी व्यक्ति ने उनके लैंड-लाइन फोन पर फोन काल किया और यह बताया कि उन्होंने उसके पुत्र को उठा लिया है । फोन करने वाले व्यक्ति ने अपनी शनाख्त प्रकट किए बिना फोन काल को बंद कर दिया था । उसी दिन दोपहर 12.00 बजे एक अन्य फोन काल द्वारा उस व्यक्ति ने उन्हें यह चेतावनी दी कि वे इस मामले की सूचना पुलिस या मीडिया को न दें । उसके पश्चात् उसके पति (अभि. सा. 1) ने लाटसिल पुलिस थाने में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की । उसके पश्चात् पुलिस उनके घर आई और उसने उनसे पूछताछ की । पुलिस ने एक अन्य फोन काल की प्रत्याशा में उनके घर थोड़ी देर प्रतीक्षा की । उसके पश्चात् रात्रि में उन्हें एक अन्य फोन काल प्राप्त हुई और अज्ञात काल करने वाले व्यक्ति ने उनके पुत्र को लौटाने के बदले दस लाख रुपए की रकम की मांग की । उसके पति ने अभिकथित अपहर्त्ताओं से यह अनुरोध किया कि उसके पास इतनी रकम उपलब्ध नहीं थी इसलिए वे रकम थोड़ी कम कर दें और इस प्रकार अनुरोध किए जाने पर अपहर्त्ताओं ने फोन पर ही सात लाख रुपए की रकम की मांग की तथा इस सारी बातचीत को पुलिस ने भी सुना था । जब उसके पति ने अपहर्त्ताओं से यह पूछा कि रकम किस स्थान पर दी जानी है तो उसे यह कहा गया कि वह रकम लेकर सार्थेबारी में क्वीनस क्लब पहुंचे । अपहर्त्ताओं ने उन्हें यह अनुदेश दिया कि वे अपनी नीले रंग की वैन

और अपने पुराने चालक के साथ ही वहां पहुंचें । तद्नुसार उसके ससुर और पुलिस उप अधीक्षक श्री जे. सी. बर्मन उस वैन में बैठकर उक्त स्थान की ओर गए । उक्त श्री बर्मन ने वैन चलाई और उनका चालक उनके साथ अगली सीट पर बैठा तथा वे सायंकाल के लगभग सार्थेबारी पहुंचे । कुछ समय पश्चात् एक काली कार में बैठ कर एक लड़का वैन के निकट आया और उसने उन्हें उसकी कार के पीछे आने को कहा । एक स्थान पर वैन को रोक कर उस लड़के ने उसकी चाबी ले ली । अभि. सा. 2 ने यह भी कथन किया कि पुलिस कार्मिक एक मिट्टी ले जाने वाले ट्रक पर मजदूरों के वेश में एक दिन पहले से ही उस संपूर्ण क्षेत्र पर नजर रखे हुए थे जब पूर्ववर्ती दिन पुलिस को यह सूचना प्राप्त हुई थी कि उनके अप्राप्तवय बालक को उस क्षेत्र में रखा गया है । सूचना प्राप्त होने पर पुलिस ने उस घर की तलाशी ली जहां उसके पुत्र को रखा गया था तथा पुलिस कार्मिकों को देखकर उस घर से सात लड़के फरार हो गए । उसने यह भी कथन किया कि उनमें से एक लड़के को पकड़ कर किसी अन्य युवक द्वारा क्वीनस क्लब, सार्थेबारी ले जाया गया और वहां पिटाई किए जाने पर उस लड़के ने उन्हें इस मामले में संपूर्ण तथ्यों की जानकारी दी । अभियुक्त-अपीलार्थी को उसके पुत्र को अपनी बाहों में लेकर पुश्ते से भागते हुए देखा गया । जब उनके चालक ने टार्च की रोशनी मारी तो उसने भी अभियुक्त-अपीलार्थी को देखा और उसके ससुर ने उसके पुत्र को अपनी गोद में ले लिया । पुलिस ने लगभग सभी लड़कों को गिरफ्तार कर लिया था । अभि. सा. 2 ने यह भी उल्लेख किया कि उसे अगली प्रातः यह पता चला कि उसके पुत्र को छुड़ा लिया गया है और उसके पश्चात् लाटसिल पुलिस थाने के पुलिस कार्मिकों ने उसके पुत्र को उसे सौंप दिया ।

16. अपनी प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 2 ने यह परिसाक्ष्य दिया है कि नौकर के रूप में अपनी दो वर्ष की सेवा के दौरान अभियुक्त-अपीलार्थी का व्यवहार और आचार उत्तम था । घटना के दिन अज्ञात व्यक्ति से पहली फोन काल पूर्वाह्न लगभग 9.00 बजे प्राप्त हुई थी । उसने इस बात से इनकार किया कि उसने टेलीफोन के माध्यम से दस लाख रुपए की मांग किए जाने के संबंध में पुलिस को नहीं बताया था ।

उसके कथन को घटना के दिन ही लेखबद्ध किया गया था । उसने यह तथ्य भी प्रकट किया कि वह सार्थेबारी नहीं गई थी जहां से उसके पुत्र को छुड़ाया गया । उसने श्री जे. सी. बर्मन और अपने ससुर से केवल उस घटना के बारे में सुना था जो सार्थेबारी में घटित हुई । उसने यह नहीं देखा कि उसके पुत्र को कैसे, कहां से और किससे छुड़ाया गया । उसके कार चालक का नाम बहादुर था जिसकी इस दौरान मृत्यु हो गई थी । उसने इस तथ्य से इनकार किया कि अपहर्त्ताओं ने उसके पुत्र का अपहरण करते समय अभियुक्त-अपीलार्थी का भी अपहरण किया था । उसने इस बात से भी इनकार किया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र के अपहरण में शामिल नहीं था ।

17. सोमेश्वर दत्ता (अभि. सा. 3) इस मामले का अन्वेषण अधिकारी है । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि तारीख 4 अप्रैल, 1999 को वह लाटसिल पुलिस थाने में प्रभारी अधिकारी के रूप में तैनात था । तारीख 4 अप्रैल, 1999 को पूर्वाह्न लगभग 9.30 बजे अभि. सा. 1 ने मौखिक रूप से पुलिस थाने को यह सूचना दी कि अभियुक्त-अपीलार्थी जो उसका नौकर था, उसके ढाई वर्षीय पुत्र को प्रातःकालीन सैर के लिए ले कर गया था किंतु उस समय तक वापस नहीं आया था । उक्त सूचना की प्राप्ति पर लाटसिल पुलिस थाने में साधारण डायरी प्रविष्टि सं. 125, तारीख 4 अप्रैल, 1999 दर्ज की गई और उसके पश्चात् उसने छोटे बालक को छुड़ाने के लिए प्रयास आरंभ किए । साक्षियों से पूछताछ करने के पश्चात् उसने पुलिस नियंत्रण कक्ष के माध्यम से घटना के संबंध में सभी पुलिस थानों को सूचना भेजी । उसी दिन अपराह्न लगभग 2.45 बजे अभि. सा. 1 ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-1) दर्ज कराई और इस संबंध में एक मामला रजिस्टर किया गया जिसके संबंध में अन्वेषण करने का जिम्मा उसने स्वयं लिया । तारीख 6 अप्रैल, 1999 को रात्रि लगभग 10.00 बजे उसने इत्तिलाकर्ता के पुत्र को सार्थेबारी चौक के समीप अभियुक्त-अपीलार्थी की अभिरक्षा से छुड़ाया । श्री नारायण दास, बालक के दादा ने उसकी शनाख्त की थी । एक अन्य व्यक्ति, उमेश मेधी को भी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ पाया गया इसलिए उसे भी गिरफ्तार किया गया । दूसरे अभियुक्त उमेश मेधी के

कब्जे से एक कागज भी प्रदर्श-2 के माध्यम से अभिगृहीत किया गया जिस पर इत्तिलाकर्ता के घर का फोन नंबर लिखा था । उसके पश्चात्, बालक को गुवाहाटी ले जाया गया और उसे उसके कुटुंब को सौंप दिया गया । श्री उमेश मेधी के कब्जे से अभिगृहीत कागज और बटुए को, जो एमआर सं. 30/2000 (एम प्रदर्श-1) के रूप में चिह्नित है, को लाटसिल पुलिस थाने के मालखाने में रखा गया । अभियुक्त-अपीलार्थी और श्री उमेश मेधी से पूछताछ किए जाने पर उसे यह ज्ञात हुआ कि उक्त अपहरण में अमाल हलोई, जगन्नाथ तालुकदार और रंजीत बैश्य भी सम्मिलित थे और तद्नुसार उन्हें भी इस मामले के संबंध में गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण पूरा हो जाने पर उसने पूर्वोक्त 5 अभियुक्तों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 363/364क के अधीन आरोप पत्र प्रस्तुत किया जो प्रदर्श-3 के रूप में है ।

18. अभियुक्तों, अर्थात् अमाल हलोई और उमेश मेधी की ओर से की गई प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 3 ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने अभियुक्त-अपीलार्थी और उमेश मेधी को उस समय गिरफ्तार किया था जब वे सड़क पर चल रहे थे । उसने इस बात से इनकार किया कि तारीख 6 अप्रैल, 1999 को रात्रि 10.00 बजे उमेश मेधी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ नहीं था । जहां तक सारवान् प्रदर्श-1 का संबंध है उसने यह बताया कि उसे मुहरबंद करके नहीं रखा गया था और इस बात का कोई सबूत विद्यमान नहीं है कि वह अभियुक्त उमेश मेधी का है । उसने इस संबध में कोई सबूत एकत्रित नहीं किया कि कागज पर लिखे गए टेलीफोन नं. इत्तिलाकर्ता के टेलीफोन नं. थे । उसने यह कथन किया है कि अमाल हलोई को तारीख 7 अप्रैल, 1999 को गिरफ्तार किया गया था और उसने इस बात से इनकार किया कि अभियुक्त अमाल हलोई और उमेश मेधी इस अपराध में शामिल नहीं थे ।

19. अभियुक्त-अपीलार्थी की ओर से की गई प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 3 ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसने सार्थेबारी में उस स्थान का कोई स्थल-नक्शा तैयार नहीं किया था जहां से बालक को छुड़ाया गया ।

बालक को छुड़ाने के लिए उसने सार्थेबारी पुलिस थाने के कार्मिकों की सहायता ली थी । उसने यह भी कथन किया कि मोनालिसा दास (अभि. सा. 2) ने उसे यह नहीं बताया कि अपहर्त्ताओं ने उनसे दस लाख रुपए की रकम की मांग की है । उसने इस बात से इनकार किया कि अपहर्त्ताओं ने इत्तिलाकर्ता के पुत्र का अपहरण करते समय अभियुक्त-अपीलार्थी का भी अपहरण किया था । उसने इस बात से भी इनकार किया कि मौका मिलने पर अभियुक्त-अपीलार्थी बालक के साथ अपहर्त्ताओं के चंगुल से छूटकर भाग गया था और वह स्वयं पुलिस के समक्ष उपस्थित हुआ था । उसने यह भी कथन किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने बालक को 4 अप्रैल, 1999 से 6 अप्रैल, 1999 की अवधि के दौरान राणाकूची नामक स्थान पर रखा था और तारीख 6 अप्रैल, 1999 को जब वह बाहर सड़क पर आया तो उसे गिरफ्तार कर लिया गया ।

20. ऊपर उल्लिखित साक्ष्य का मूल्यांकन करने से पूर्व यह आवश्यक है कि दंड संहिता की धारा 364क में यथा-परिभाषित अपराध के घटकों के बारे में जान लिया जाए । सुगम संदर्भ के लिए दंड संहिता की धारा 364क को नीचे उद्धृत किया गया है :-

> "364क. **फिरौती आदि के लिए व्यपहरण** – जो कोई इसलिए किसी व्यक्ति का व्यपहरण या अपहरण करेगा या ऐसे व्यपहरण या अपहरण के पश्चात् ऐसे व्यक्ति को निरोध में रखेगा और ऐसे व्यक्ति की मृत्यु या उसकी उपहति कारित करने की धमकी देगा या अपने आचरण से ऐसी युक्तियुक्त आशंका पैदा करेगा कि ऐसे व्यक्ति की मृत्यु हो सकती है या उसको उपहति की जा सकती है या ऐसे व्यक्ति को उपहति या उसकी मृत्यु कारित करेगा जिससे कि सरकार या किसी विदेशी राज्य या अंतरराष्ट्रीय अंतर-सरकारी संगठन या किसी अन्य व्यक्ति को किसी कार्य को करने या करने से प्रविरत रहने के लिए या फिरौती देने के लिए विवश किया जाए, वह मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।"

21. दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अभियुक्त के अपराध को सिद्ध करने के लिए यह साबित करना आवश्यक है कि अपहरण हुआ था और इस बात की युक्तियुक्त आशंका थी कि यदि फिरौती की रकम का संदाय नहीं किया जाता है तो ऐसे व्यक्ति की मृत्यु कारित करने या उसे उपहति कारित करने की धमकी दी गई थी । दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध की तुलना व्यपहरण या अपहरण के अपराध से नहीं की जा सकती । दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध करने के लिए कुछ और अधिक अपेक्षित है । दंड संहिता की धारा 364क के उपबंधों को आकर्षित करने के लिए यह साबित करना अपेक्षित है कि – (i) अभियुक्त ने व्यक्ति का व्यपहरण या अपहरण किया है; (ii) अभियुक्त ने ऐसा व्यपहरण या अपहरण करने के पश्चात् व्यपहृत/अपहृत व्यक्ति को निरोध में रखा है; (iii) व्यपहरण या अपहरण फिरौती के लिए किया गया है और (iv) यदि फिरौती की मांग को पूरा नहीं किया जाता तो व्यपहृत या अपहृत व्यक्ति को यह धमकी दी जाती है कि पीड़ित की मृत्यु कारित किए जाने की संभावना है ।

22. इन परिस्थितियों में यदि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्यों का परिशीलन किया जाता है तो हम यह पाते हैं कि उन साक्षियों के पास अपनी स्वयं की कोई जानकारी नहीं है । इन दो अभियोजन साक्षियों ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उनमें से कोई भी व्यक्ति बालक को छुड़ाने के लिए पुलिस के साथ नहीं गया था और न ही उनमें से कोई सार्थेबारी गया था । अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य के अनुसार यह पता चलने पर कि अपहर्त्ताओं ने उसके पुत्र को सार्थेबारी में रखा है, उसके पिता नारायण दास पुलिस उप अधीक्षक जे. सी. बर्मन के साथ उसके पुत्र को छुड़ाने के लिए सार्थेबारी गए थे और उनके साथ उनकी कार का चालक भी सार्थेबारी गया था । अभिलेख पर विद्यमान साक्ष्य से हमें यह पता चलता है कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2, दोनों ने ही इस संबंध में अभिसाक्ष्य दिया है कि पुलिस कार्मिक किस रीति में उनके पुत्र को अपहर्त्ताओं की अभिरक्षा से छुड़ाने में सफल रहे थे और वे स्वयं अपने बालक को छुड़ाने के लिए पुलिस कार्मिकों के साथ सार्थेबारी नहीं गए थे । यह स्पष्ट है कि उन्होंने सार्थेबारी में घटित

घटनाओं के संबंध में जो भी अभिसाक्ष्य दिया है कि वह उन्होंने उन व्यक्तियों से उस घटना की जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् दिया है जो सार्थेबारी गए थे और वे या तो नारायण दास थे या श्री जे. सी. बर्मन । अतः स्पष्ट रूप से यह स्थापित हो गया है कि उन्होंने सार्थेबारी में हुई घटना के संबंध में और साथ ही उस रीति के बारे में जिसमें उनके बालक को ढूंढा गया था, अभिसाक्ष्य दिया है वह अनुश्रुत प्रकृति का है । सुस्पष्ट रूप से अन्वेषण अधिकारी ने आरोप पत्र (प्रदर्श-3) में न तो नारायण दास और न ही जे. सी. बर्मन को मामले के साक्षी के रूप में उल्लिखित किया है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्य के अनुसार सार्थेबारी में हुई घटना के संबंध में प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में प्रत्यक्ष जानकारी नारायण दास और जे. सी. बर्मन ही उपलब्ध करा सकते थे और साथ ही वे इस संबंध में भी जानकारी दे सकते थे कि सार्थेबारी या किसी अन्य स्थान में घटनाएं किस रीति में घटित हुई और किस प्रकार बालक को ढूंढा गया और उसे छुड़ाया गया । हमने मामले के अभिलेख में उपलब्ध मामला संबंधी डायरी का भी परिशीलन किया है और यह पाया है कि मामले के अन्वेषण के दौरान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन नारायण दास, जे. सी. बर्मन और अभि. सा. 1 तथा अभि. सा. 2 के पुराने कार चालक बहादुर के कथनों को लेखबद्ध ही नहीं किया गया है । प्रतिरक्षा की ओर से की गई प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 2 ने यह कथन किया है कि मामले के लंबित रहने के दौरान उक्त कार चालक बहादुर की मृत्यु हो गई थी ।

23. हमने यह भी नोटिस किया है कि विचारण के दौरान भी अभियोजन पक्ष उक्त नारायण दास और जे. सी. बर्मन को साक्षियों के रूप में प्रस्तुत कर सकता था किंतु ऐसा नहीं किया गया । अतः वर्तमान मामले में अभियोजन पक्ष दो अत्यंत महत्वपूर्ण साक्षियों की परीक्षा करने में असफल रहा है और अभियोजन पक्ष ने उनकी परीक्षा न किए जाने का कोई कारण भी उल्लिखित नहीं किया है ।

24. साक्ष्य का यह नियम है कि अनुश्रुत साक्ष्य स्वीकार्य नहीं है । कार्यवाहियों में मौखिक साक्ष्य देते समय किसी व्यक्ति द्वारा किया गया कोई प्राख्यान इस प्रकार प्रस्तुत किए गए किसी तथ्य के साक्ष्य स्वरूप

अस्वीकार्य है । अनुश्रुत साक्ष्य को सुसंगत साक्ष्य के रूप में क्यों स्वीकार नहीं किया जाता । इसका एक कारण यह भी है कि प्रत्येक बार ऐसी सूचना, जिसे किन्हीं अन्य व्यक्तियों से प्राप्त किया गया है, को दोहराए जाने पर उसमें सत्यता की मात्रा कुछ कम हो जाती है । अभियोजन पक्ष का यह कर्तव्य है कि वह सर्वोत्तम साक्ष्य प्रस्तुत करे । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **कुणाल कुमार गोगोई** बनाम **आशुतोष अग्निहोत्री और अन्य**[1] वाले मामले में वे कारण अभिनिर्धारित किए हैं जिनकी वजह से अनुश्रुत साक्ष्य को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए, जो निम्नानुसार हैं :-

> "34. सर्वोत्तम साक्ष्य का विचार स्वयं साक्ष्य अधिनियम में अंतर्निहित है । अधिनियम के अधीन साक्ष्य में किसी साक्षी द्वारा किया गया कोई कथन या किसी दस्तावेज में अंतर्विष्ट कोई कथन सम्मिलित है । यदि यह मौखिक साक्ष्य का मामला है तो अधिनियम यह अपेक्षा करता है कि केवल उसी व्यक्ति को जिसने अपनी ऐसी इंद्रियों के माध्यम से किसी चीज को वास्तव में अनुभव किया है या जिसे ऐसी इंद्रियों द्वारा अनुभव किया जा सकता है, ही उसके संबंध में कथन करना चाहिए न कि किसी अन्य व्यक्ति को । यदि यह कोई दस्तावेजी साक्ष्य है तो साक्ष्य अधिनियम यह अपेक्षा करता है कि सामान्यतया मूल दस्तावेज प्रस्तुत किया जाना चाहिए क्योंकि उसकी प्रति में जान-बूझकर या अनवधानीवश किए गए लोप या त्रुटियां सम्मिलित हो सकती हैं । इन सिद्धांतों को साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 और 64 में अभिव्यक्त किया गया है ।
>
> 35. 'अनुश्रुत साक्ष्य' पद का उपयोग किसी ऐसी बात के प्रतिनिर्देश किया जाता है जिसे किया गया है या लिखा गया है और साथ ही जिसे बोला गया है और विधिक रूप से यह ऐसे प्रकार के साक्ष्य को उल्लिखित करता है जो अपना मूल्य स्वयं साक्षी को दिए गए महत्व से प्राप्त नहीं करता अपितु जो आंशिक रूप से किसी अन्य व्यक्ति की सच्चाई सक्षमता पर भी निर्भर है । 'सुनी-सुनाई बात' शब्दों का उपयोग भिन्न-भिन्न भावों में किया जाता

[1] (2011) 2 एस. सी. सी. 532 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 760.

है । कभी इससे ऐसी कोई बात अभिप्रेत होती है जिसे उस व्यक्ति ने किसी अन्य व्यक्ति को कहते हुए सुना है और कभी इसे लगभग असंगत के रूप में माना जाता है । नियम के अनुसार किसी तृतीय व्यक्ति द्वारा कही गई कोई बात और की गई बातें असंगत हैं जिससे उनका कोई सबूत स्वीकार नहीं किया जा सकता । किया गया प्रत्येक कार्य या कही गई प्रत्येक ऐसी बात जो किसी आधार पर सुसंगत है, को किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा साबित किया जाना चाहिए जिसने स्वयं अपनी आंखों से उसे देखा या अपने कानों से उसे सुना ।

36. यह तर्क कि अनुश्रुत साक्ष्य के मूल्यांकन से संबंधित नियम इस प्रश्न के अवधारण हेतु लागू नहीं होगा क्या निर्वाचन स्थल के स्थान में परिवर्तन किए जाने के कारण निवार्चित अभ्यर्थी के निर्वाचन संबंधी परिणाम पर सारवान् रूप से प्रभाव पड़ा है, इस साधारण कारण से स्वीकार नहीं किया जा सकता कि इस प्रश्न का अवधारण, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के भाग-6 और 1951 के अधिनियम की धारा 87(2) में अंतर्विष्ट उपबंधों को, जो विनिर्दिष्ट रूप से यह उपबंध करते हैं कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 के उपबंध इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए लागू होंगे, ध्यान में रखते हुए किसी उच्च न्यायालय द्वारा विचारणीय समुचित रूप से प्रस्तुत की गई निर्वाचन याचिका में करना होगा और उनके बारे में यह समझा जाएगा कि वे निर्वाचन याचिका के विचारण के सभी पहलुओं के संबंध में लागू होंगे । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने वर्ष 1951 के अधिनियम के ऐसे किसी उपबंध का उल्लेख नहीं किया है जो वर्तमान अपील में इस न्यायालय के विचारार्थ प्रस्तुत प्रश्न के अवधारण के संबंध में अनुश्रुत साक्ष्य के मूल्यांकन के नियम को लागू होने से विवर्जित करता हो ।

37. यहां अनुश्रुत साक्ष्य के मूल्यांकन से संबंधित नियम पर विचार करना होगा । अनुश्रुत साक्ष्य को इस आधार पर विवर्जित किया जाता है कि न्याय के हित में यह सदैव वांछनीय है कि ऐसे व्यक्ति को, जिसके कथन का अवलंब लिया जाना है, नियमित

रीति में परीक्षा हेतु न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए ताकि प्रति परीक्षा के माध्यम से किसी कथन में अंतर्विष्ट त्रुटियों और उससे संबंधित अविश्वसनीयताओं, यदि वे विद्‌यमान हैं, को सामने लाया जा सके और दूर किया जा सके । साक्ष्य अधिनियम में 'अनुश्रुत साक्ष्य' पद का प्रयोग नहीं किया गया है क्योंकि यह पद त्रुटिपूर्ण और अस्पष्ट है । भारतीय विधि के अधीन साक्ष्य का यह मूल नियम है कि अनुश्रुत साक्ष्य अनुज्ञेय नहीं है । किसी कथित विषय की सत्यता को साबित करने के प्रयोजन के लिए प्रस्तुत किया गया कोई कथन, चाहे वह मौखिक हो या लिखित, जिसे साक्ष्य देने वाले किसी साक्षी से भिन्न अन्य व्यक्ति द्‌वारा किया गया है और किसी पुस्तक, दस्तावेज या अभिलेख चाहे कोई भी हो, में अंतर्विष्ट या लेखबद्ध ऐसे किसी कथन को, जिसके सबूत को किन्हीं अन्य आधारों पर स्वीकार नहीं किया गया है, असंगत माना जाता है । किन्हीं कार्यवाहियों में मौखिक साक्ष्य देते समय किसी व्यक्ति से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति द्‌वारा दिया गया कोई प्राख्यान साक्ष्य स्वरूप दिए गए किसी तथ्य के साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य नहीं है । इस प्रकार के साक्ष्य की प्रतिपरीक्षा द्‌वारा परीक्षा नहीं की जा सकती और अनेक मामलों में यह किसी बेहतर परिसाक्ष्य की अपेक्षा करता है जिसे किसी विशिष्ट मामले में प्रस्थापित किया जाना चाहिए और उसे अपवर्जित करने के लिए वे एकमात्र आधार नहीं हैं । किसी अनुश्रुत साक्ष्य की विधिक अन्वेषणों को इतना लंबा खींचने की प्रवृत्ति कि वे लज्जाजनक और खतरनाक स्तर पर पहुंच जाएं, इसमें अंतर्निहित कमजोरी, किसी न्यायाधीश के मस्तिष्क को किसी तथ्य की विद्‌यमानता के संबंध में समाधान प्रदान करने में अक्षमता और इसके द्‌वारा किए जाने वाले कपट, ये सब बातें मिलकर इस नियम का समर्थन करते हैं कि अनुश्रुत साक्ष्य स्वीकार्य नहीं है ।

38. अनुश्रुत साक्ष्य को सुसंगत साक्ष्य के रूप में स्वीकार न किए जाने के कारणों को नीचे उद्धृत किया गया है –

(क) ऐसे साक्ष्य को प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति किसी

उत्तरदायित्व को महसूस नहीं करता है । विधि यह अपेक्षा करती है कि सभी साक्ष्यों को निजी उत्तरदायित्व के अधीन प्रस्तुत किया जाना चाहिए, अर्थात् प्रत्येक साक्षी को अपना परिसाक्ष्य ऐसी परिस्थितियों के अधीन प्रस्तुत करना चाहिए जो उसे मिथ्या कथन से जुड़ी सभी शास्तियों के लिए दायी बनाती हैं । यदि अनुश्रुत साक्ष्य प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति को प्रश्नगत किया जाता है तो उसके पास सदैव यह बचाव विद्‌यमान होता है कि 'मैं इस बारे में कुछ नहीं जानता किंतु फलां-फलां व्यक्ति ने मुझे ऐसा बताया था',

(ख) इस प्रकार के साक्ष्य को जब प्रत्येक बार दोहराया जाता है तो उसमें से सत्य की मात्रा कुछ कम हो जाती है, और

(ग) यदि इस प्रकार के साक्ष्य को स्वीकार कर लिया जाता है तो इससे इस प्रकार का कथन करके कपट को बढ़ावा मिलेगा कि 'किसी व्यक्ति ने मुझे यह बताया था कि ......' । इसका तात्पर्य यह होगा कि एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक फैलने वाली मिथ्या अफवाह को महत्व मिलेगा । इस प्रकार अन्य व्यक्तियों से प्राप्त सूचना पर आधारित साक्षियों के कथन अस्वीकार्य हैं ।"

25. अभियोजन पक्ष द्‌वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से यह भी स्पष्ट नहीं है कि क्या बालक के कुटुंब ने अभिकथित अपहर्त्ताओं की मांगों को पूरा करने के लिए कार्रवाई की थी और फिरौती की रकम की व्यवस्था की थी । अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्य के अनुसार अभि. सा. 1 ने उस समय अभिकथित अपहर्त्ताओं से मोल-भाव किया था जब उन्होंने अभिकथित रूप से फिरौती की मांग करने के लिए फोन किया था और इस मोल-भाव के परिणामस्वरूप फिरौती की रकम 7 लाख रुपए रह गई थी, किंतु इस बात का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि 7 लाख रुपए की उक्त फिरौती की रकम नारायण दास या जे. सी. बर्मन या स्वयं अन्वेषण अधिकारी द्‌वारा घटनास्थल पर ले जाई गई थी । अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि बालक की गुमशुदगी

के पश्चात् और अभिकथित अपहर्त्ता से फोन काल प्राप्त होने के पश्चात् पुलिस कार्मिक इत्तिलाकर्ता/अभि. सा. 1 के घर आए थे और उन्होंने लैंडलाइन टेलीफोन के साथ मशीन को जोड़कर फोन काल रिकार्ड की थी । किंतु विचारण के दौरान, इस प्रकार अभिकथित रूप से रिकार्ड की गई फोन काल के संबंध में कोई अभिलेख प्रस्तुत नहीं किया गया । रिकार्ड की गई बातचीत की कोई लिपिबद्ध प्रति दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं की गई जबकि अभियोजन पक्षकथन के अनुसार उक्त फोन काल, जिसके दौरान हुई बातचीत को पुलिस द्वारा रिकार्ड किया गया था, के आधार पर पुलिस कार्मिक अभिकथित अपहर्त्ताओं तक पहुंचने में समर्थ हुए थे । इस प्रकार अभियोजन पक्ष से यह अपेक्षित था कि वह इस संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत करता । अन्वेषण अभिकरण द्वारा की गई इस प्रकार की गलती की केवल इस आधार पर अनदेखी नहीं की जा सकती कि वह मात्र दोषपूर्ण अन्वेषण है जबकि यह सर्वोत्तम साक्ष्य को प्रस्तुत न किए जाने के समतुल्य है ।

26. अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 द्वारा किए गए कथनों के अनुसार अभिकथित अपहर्त्ताओं ने अभि. सा. 1 को यह बताया था कि उन्होंने उसके पुत्र को सार्थेबारी में किसी स्थान पर रखा था और यह बात उसे टेलीफोन पर हुई बातचीत के माध्यम से बताई गई थी । इस संबंध में एक अन्य पहलू जो सूचना में आया है, यह है कि यह दावा किया गया था कि बालक को सार्थेबारी स्थित किसी स्थान से छुड़ाया गया है । किंतु उस स्थान, जहां से बालक को छुड़ाया गया था, के अड़ोस-पड़ोस के किसी भी व्यक्ति की अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा नहीं की गई है । इसी प्रकार गुवाहाटी के अंबारी क्षेत्र, जहां से बालक को अभिकथित रूप से अपहृत किया गया था और अभियुक्त-अपीलार्थी की गुमशुदगी दर्ज की गई थी, से भी किसी व्यक्ति की परीक्षा नहीं की गई है । हमारी जानकारी में यह तथ्य भी आया है कि बालक का अभिकथित अपहरण गुवाहाटी नगर के अंबारी क्षेत्र से हुआ था जबकि बालक को अभिकथित रूप से सार्थेबारी स्थित किसी अवस्थान से छुड़ाया गया था जो गुवाहाटी से लगभग 100 किलो मीटर दूर स्थित है । इस प्रकार बालक के अभिकथित अपहरण के दौरान बालक को गुवाहाटी से सार्थेबारी

ले जाया गया और इसके लिए अवश्य ही किसी परिवहन साधन का उपयोग किया गया होगा और इस प्रकार की यात्रा में अवश्य ही कुछ घंटे लगे होंगे । किंतु अभियोजन पक्ष ने मामले के इस पहलू के संबंध में भी कोई साक्ष्य अभिलेख पर उपलब्ध नहीं कराया है ।

27. अभियोजन का पक्षकथन यह नहीं है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने ही अपहृत बालक के कुटुंब को फोन काल किए थे । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के कथनों के अनुसार अभियुक्त-अपीलार्थी उनके घर में 2 (दो) वर्ष से घरेलू नौकर के रूप में कार्य कर रहा था और इस प्रकार वे अभियुक्त-अपीलार्थी की आवाज से सुपरिचित थे । अभि. सा. 2 के अनुसार अभिकथित अपहर्त्ताओं से उन्हें बार-बार टेलीफोन प्राप्त हुए थे और अभि. सा. 1 ने अभिकथित अपहर्त्ताओं से फिरौती की रकम के संबंध में मोल-भाव भी किया था । किंतु इन 2 (दो) साक्षियों (अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2) में से किसी ने भी यह कथन नहीं किया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी वह व्यक्ति था जिसने उन्हें फोन काल किया था या जिससे उन्होंने अपने बालक की बरामदगी के संबंध में बातचीत की थी ।

28. यह उल्लेखनीय है कि अन्य 2 (दो) अभियुक्तों, जिन्होंने अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ विचारण का सामना किया, के विरुद्ध भी कोई साक्ष्य नहीं पाया गया है और तद्नुसार उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया था । अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान बालक के माता-पिता में से किसी ने भी यह अभिसाक्ष्य नहीं दिया है कि जब उनका पुत्र गुम हो गया था तो उन्हें किसी भी प्रकार से अभियुक्त-अपीलार्थी पर कोई संदेह हुआ था । अभि. सा. 1 ने अपने अभिसाक्ष्य में यह कथन किया है कि उसे अभियुक्त-अपीलार्थी के जब वह लगभग 2 (दो) वर्ष तक उनके घर में घरेलू नौकर के रूप में कार्य कर रहा था, व्यवहार के प्रति कोई भी संदेहास्पद बात महसूस नहीं हुई थी । अभि. सा. 2 ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह कथन किया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी का उनके घर में लगभग 2 (दो) वर्ष तक नौकर के रूप में आचार और व्यवहार सदैव उत्तम प्रतीत हुआ ।

29. अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 3) ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसे बालक के गुम हो जाने के संबंध में जानकारी मौखिक रूप से

अभि. सा. 1 से तारीख 4 अप्रैल, 1999 को पूर्वाह्न लगभग 9.30 बजे प्राप्त हुई थी और यह कि अभि. सा. 1 ने पुलिस थाने में केवल यह जानकारी दी कि अभियुक्त-अपीलार्थी उसके पुत्र को प्रातःकालीन सैर के लिए घर से बाहर ले गया था और पूर्वाह्न 9.30 बजे तक वापस नहीं आया था । जब अभि. सा. 1 ने पूर्वाह्न 9.30 बजे पुलिस को यह जानकारी दी थी तो उसे अभियुक्त-अपीलार्थी के संबंध में कोई संदेह नहीं था । अन्वेषण अधिकारी ने इस बात के ब्योरे प्रकट नहीं किए हैं कि अभिकथित अपहर्त्ताओं से बालक को छुड़ाने के लिए किस प्रकार कार्यवाही की गई थी । उसने साधारण रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया है कि तारीख 6 अप्रैल, 1999 को रात्रि लगभग 10.00 बजे उसने बालक को सार्थेबारी चौराहे पर एक अन्य अभियुक्त उमेश मेधी के साथ अभियुक्त-अपीलार्थी की अभिरक्षा से छुड़ाया था । इस संबंध में किसी साक्ष्य की अनुपस्थिति में यह बात स्वीकार्य नहीं है कि ब्योरेवार तैयारियों की अपेक्षा करने वाली बालक को छुड़ाए जाने संबंधी कार्यवाही को पूरा करने के लिए किसी विशेष कार्यवाही की योजना बनाई गई थी और उसे निष्पादित किया गया था । मामले के अन्वेषण अधिकारी, अर्थात् अभि. सा. 3 ने इस संबंध में कोई अभिसाक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि गुवाहाटी से अभिकथित अपहरण के समय से लेकर सार्थेबारी में बालक को छुड़ाए जाने की अवधि तक बालक को किस स्थान पर निरुद्ध रखा गया था या इस पूर्ण अवधि के दौरान बालक को किस-किस स्थान पर और किस प्रकार रखा गया था या उसने इस संबंध में जानकारी प्राप्त करने हेतु क्या प्रयास किए थे, इस संबंध में भी अन्वेषण अधिकारी द्वारा कोई साक्ष्य प्रकट नहीं किया गया है । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **वसीफ अहमद और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि यह पूरा मामला दोषपूर्ण अन्वेषण से ग्रस्त है जिसके कारण मामले में अनेक कमियां रह गई हैं । हमें यह भी प्रतीत होता है कि वर्तमान मामला अनेक अन्वेषण संबंधी त्रुटियों से ग्रस्त है जिसके कारण मामले की जड़ तक नहीं पहुंचा जा सका ।

---

[1] (2019) 2 एस. सी. सी. 303 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 38.

30. विचारण न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने हेतु कोई साक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ कि अभियुक्त उमेश मेधी और अमाल हलोई बालक के अपहरण में संलिप्त थे । विचारण न्यायालय को अन्वेषण अधिकारी का केवल यह साक्ष्य प्राप्त हुआ कि पुलिस कार्मिकों ने जब अभियुक्त-अपीलार्थी को गिरफ्तार किया तो अभियुक्त उमेश मेधी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ था किंतु यह साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है । चूंकि अन्वेषण अधिकारी ने अभिकथित रूप से अभिगृहीत बटुए और कुछ कागज जिसमें इत्तिलाकर्ता का टेलीफोन नं. लिखा था, को मुहरबंद लिफाफे में नहीं रखा । इसलिए विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सामग्री प्रदर्श-1 को ऐसे बटुए और कागज के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता जो अभियुक्त उमेश मेधी के कब्जे से बरामद हुए थे । अन्वेषण अधिकारी द्वारा यह तक अभिनिश्चित नहीं किया गया है कि मामले में अभिगृहीत कागज पर लिखे टेलीफोन नं. इत्तिलाकर्ता या उसके कुटुंब के किसी सदस्य के हैं । किसी व्यक्ति के कब्जे से मात्र ऐसा कोई कागज बरामद होने, जिसमें कोई टेलीफोन नं. लिखे हों, का तात्पर्य यह नहीं है कि उस व्यक्ति द्वारा फिरौती की मांग की गई थी या इस प्रकार की मांग अभियुक्त-अपीलार्थी जैसे उसके किसी अन्य साथी द्वारा की गई थी । किसी भी प्रकार की संपुष्टि के बिना ऐसा साक्ष्य अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध अभिशंसी नहीं माना जा सकता और वह उसके विरुद्ध किसी प्रकार के अपराध को भी प्रदर्शित नहीं करता है ।

31. यह स्थापित नहीं किया गया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के बालक का अपहरण किया और इस प्रकार उसका अपहरण करने के पश्चात् उसे निरुद्ध रखा । यह भी स्थापित नहीं किया गया है कि वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी ने फिरौती के लिए बालक का अपहरण किया । अभियोजन पक्ष के पास अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए केवल अन्वेषण अधिकारी का इस प्रभाव का साक्ष्य कि बालक को अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ पाया गया था और उस समय अभियुक्त उमेश मेधी भी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन लेखबद्ध किए गए उसके कथन के दौरान जब उससे उक्त परिस्थिति को स्पष्ट करने के लिए कहा गया तो अभियुक्त-अपीलार्थी ने यह कथन किया कि पुलिस ने

उसे उस समय गिरफ्तार किया था जब वह बालक को अपहर्त्ताओं के कब्जे से छुड़ा कर वहां से भाग रहा था । जब अभियोजन पक्ष के इस प्रभाव के साक्ष्य कि अभियुक्त-अपीलार्थी को बालक के साथ पाया गया था, के संबंध में विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि इस साक्ष्य को सत्य के रूप में स्वीकार भी कर लिया जाए तो भी इस प्रभाव का निष्कर्ष निकालना संभव प्रतीत नहीं होता कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने बालक का अपहरण किया और अपहरण के पश्चात् उसने बालक को निरुद्ध रखा ताकि वह उसके माता-पिता से फिरौती की रकम वसूल कर सके और इन कारणों से ऊपर उल्लिखित दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध गठित करने के घटक आकर्षित नहीं होते हैं ।

32. ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए हमारी सुविचारित राय यह है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करने और उसका महत्व समझने में मामले के संपूर्ण तथ्यात्मक पहलुओं की परीक्षा नहीं की है जिसके अंतर्गत दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध को गठित करने के लिए अनिवार्य घटक भी हैं । यह बात भी हमारी जानकारी में आई है कि विचारण न्यायालय साक्ष्य को उसके उपयुक्त परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकित करने में असफल रहा है और उसने साक्ष्य की अंतर्निहित अस्वीकार्यता और उससे उद्भूत होने वाली संदेहास्पद परिस्थितियों पर विचार किए बिना अभियोजन साक्ष्य को उनके साधारण अर्थ में स्वीकार कर लिया है । संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध अपने पक्षकथन को साबित करने और बिना किसी त्रुटि के यह साबित करने में असफल रहा है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने ही उक्त अपराध कारित किया है और इस प्रकार अभियोजन अभियुक्त-अपीलार्थी के दोष को सिद्ध करने में असमर्थ रहा है । अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से सुसंगत संदेह से परे उसका पक्षकथन स्थापित नहीं होता है । अत: हमारी राय के अनुसार विचारण न्यायालय ने अनुचित रूप से अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया है ।

33. ऊपर की गई चर्चा के आलोक में और हमारे द्‍वारा निकाले गए निष्कर्षों के आधार पर और हमारे द्‍वारा किए साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन के आधार पर हमारी दृढ़ राय यह है कि विद्‍वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप (मेट्रो), गुवाहाटी द्‍वारा सेशन मामला सं. 226(के)/2012 में जो लाटसिल पुलिस थाने के मामला सं. 43/1999 के तत्समान जीआर मामला सं. 1794/1999 से उद्भूत हुआ है, अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध के लिए उसकी दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश को कायम नहीं रखा जा सकता और तद्‌नुसार उसे अपास्त और अभिखंडित किया जाता है ।

34. इसके परिणामस्वरूप वर्तमान अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी, अर्थात् श्री करुणा डेका को उक्त सेशन मामला सं. 226(के)/2012 में जो लाटसिल पुलिस थाने के मामला सं. 43/1999 के तत्समान जीआर मामला सं. 1794/1999 से उद्भूत हुआ है, दंड संहिता की धारा 364क के अधीन अपराध से दोषमुक्त किया जाता है और उसे तुरंत निर्मुक्त किया जाता है, यदि वह किसी अन्य मामले के संबंध में अपेक्षित नहीं है ।

35. इस अपील के परिणाम के संबंध में तुरंत केंद्रीय कारागार, गुवाहाटी, सरूसजाई, जिला कामरूप (मेट्रो) को सूचित किया जाए और साथ ही उसे वर्तमान अपील में दिए गए निदेश और किए गए संप्रेक्षणों की भी सूचना दी जाए ।

36. रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह विचारण न्यायालय के अभिलेखों को इस निर्णय की प्रति के साथ विद्‍वान् अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, कामरूप (मेट्रो), गुवाहाटी के न्यायालय को लौटा दे ।

अपील मंजूर की गई ।

पु.

टी. आर. कुंजम

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

(2020 की रिट अपील सं. 295)

तारीख 22 जुलाई, 2020

मुख्य न्यायमूर्ति पी. आर. रामचंद्र मेनन और न्यायमूर्ति पार्थ प्रतीम साहू

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) -- धारा 13(1)(ङ) – लोक सेवक पर भ्रष्टाचार का आरोप - लोक सेवक के पास अभिकथित रूप से आय के ज्ञात स्रोतों से अननुपातिक रूप में संपत्ति का पाया जाना – लोक सेवक द्वारा पाई गई संपत्ति के संबंध में लेखा-जोखा दिया जाना – लोक सेवक द्वारा आरोप पत्र फाइल किए जाने से पूर्व सुनवाई का एक अवसर प्रदान करने का अनुरोध किया जाना – अनुरोध की अनदेखी करते हुए अन्वेषण अभिकरण द्वारा आरोप पत्र फाइल किया जाना – इससे व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा वर्तमान रिट याचिका फाइल किया जाना – उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि किसी लोक सेवक के विरुद्ध भ्रष्टाचार के मामले में आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व लोक सेवक को सुनवाई का अवसर प्रदान करना आवश्यक नहीं है ।

अन्वेषण अधिकारी से यह अपेक्षित नहीं है कि वह लोक सेवक को उसकी आस्तियों के अभिकथित अननुपातिक होने के संबंध में स्पष्टीकरण देने का अवसर प्रदान करें और आरोप पत्र में अपने प्रक्कथन को अंतर्विष्ट करे; किंतु प्रस्तुत किए जाने वाला आरोप पत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अनुपालन में होना चाहिए । अन्वेषण अधिकारी से केवल यह अपेक्षित है कि वह यह पता लगाने हेतु सामग्रियां एकत्रित करे कि क्या अभिकथित अपराध कारित किया गया प्रतीत होता है । अन्वेषण के अनुक्रम में वह अभियुक्त से स्पष्टीकरण मांग सकता है और वह पश्चात्वर्ती द्वारा प्रसंस्कृत आय के ज्ञात स्रोतों

के साथ अनिवार्य रूप से उसकी प्रति जांच-पड़ताल कर सकता है ; तथापि, 'निष्पक्ष अन्वेषण' को सुनिश्चित करने हेतु यह अपेक्षित है कि अभियुक्त को अंधेरे में नहीं रखा जाना चाहिए । इससे यह तात्पर्यित नहीं है कि सभी सामग्रियों को एकत्रित करने के पश्चात् अन्वेषण अधिकारी को अभियुक्त को एक अवसर प्रदान करना चाहिए और उससे उसकी आस्तियों या आय के ज्ञात स्रोतों के संबंध में लेखा-जोखा मांगना चाहिए और उसके पश्चात् यह विनिश्चय करना चाहिए कि क्या इस प्रकार का लेखा-जोखा समाधानप्रद है अथवा नहीं ; ऐसा करने पर अन्यथा रूप से अन्वेषण अधिकारी की स्थिति किसी जांच अधिकारी या न्यायाधीश के तत्समान हो जाएगी । वर्तमान रिट याचिका का निपटारा करने के लिए संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी जो अधीक्षक अभियंता, लोक निर्माण विभाग में कार्यपालक अभियंता के रूप में कार्यरत है, प्रत्यर्थी राज्य भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो, रायपुर के द्वारा किए जाने वाले अन्वेषण का सामना कर रहा है, जिसने पूर्वोक्त उपबंधों के अधीन उसके विरुद्ध अपराध मामला सं. 5/2016 रजिस्ट्रीकृत किया है । उक्त मामले में यह कथन किया गया है कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसके साढ़ू रमेश गुलाटी (अपीलार्थी की पत्नी की बहन का पति) के घरों पर छापा डाला था और उन्हें अपराध में फंसाने वाली सामग्रियों का अभिग्रहण किया था । प्रत्यर्थी द्वारा ली गई तलाशी, किए गए अभिग्रहण और अन्वेषण के अनुक्रम में अपीलार्थी से अभिगृहीत सामग्रियों/अभिलेखों के अलावा अपीलार्थी के साढ़ू रमेश गुलाटी के घर से 45,63,900/- रुपए की नकद राशि का भी अभिग्रहण किया गया था । यह कथन किया गया था कि अपीलार्थी की साली के घर से कुछ जेवरात भी अभिगृहीत किए गए थे और उनके संबंध में अनुलग्नक-पी/1 सामान सूची तैयार की गई थी । जैसा कि अपीलार्थी द्वारा प्रकट किया गया है प्रत्यर्थी द्वारा तलाशी और अभिग्रहण के पश्चात् और सामान सूची तैयार करने के पश्चात् जांच अवधि को तारीख 1 अप्रैल, 2001 से 16 जनवरी, 2016 के रूप में अवधारित किया गया । उक्त अवधि के दौरान आय को 89,24,173/- रुपए के रूप में अवधारित किया गया जबकि इस अवधि के दौरान व्यय की संगणना 2,78,31,968/- रुपए के रूप में की गई । सक्षम प्राधिकारी ने तारीख 23 जुलाई, 1992 से जो अपीलार्थी

द्वारा उसके उक्त सेवा में आने की तारीख है, तारीख 31 मार्च, 2001 तक की अवधि के लिए आय और व्यय का भी अवधारण किया । (i) उसके साढू रमेश गुलाटी के घर से अभिगृहीत रकम, अर्थात् 45,63,900/- रुपए की रकम ; (ii) अपीलार्थी की सास का घर जिसका मूल्य 48,32,600/- रुपए आंका गया है ; और (iii) अपीलार्थी की मृत पत्नी की आय जिसे 73,70,116/- रुपए के रूप में अवधारित किया गया है । अपीलार्थी ने अपने पक्षकथन में यह भी कहा है कि प्रत्यर्थी ने अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान उससे 'स्पष्टीकरण' मांगा था और जब सभी उपरोक्त महत्वपूर्ण विशिष्टियों के संबंध में स्पष्टीकरण उपलब्ध करा दिया गया था फिर भी प्रत्यर्थी ने समुचित न्यायालय के समक्ष उसके विरुद्ध आरोप पत्र फाइल करने से संबंधित आगे कार्यवाही करने से पूर्व उन्हें विचार में नहीं लिया । अत: याची द्वारा वर्तमान रिट याचिका फाइल करके यह अनुरोध किया गया है कि ऐसा निषेधादेश जारी किया जाए जिसके द्वारा प्रत्यर्थी को यह निदेश दिया जाए कि वह आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व 'कारण और सकारण आदेश' के माध्यम से (i) उसके साढू रमेश गुलाटी के घर से अभिगृहीत नकदी ; (ii) याची की सास के घर के स्वामित्व और साथ ही (iii) याची की मृत पत्नी के उपार्जनों से संबंधित स्पष्टीकरणों पर विचार करे । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह उल्लेख करना सुसंगत है कि अपीलार्थी ने रिट अपील के ज्ञापन के 'पैरा 20' और 'आधार सं. 11' में इस बात को स्वीकार किया है कि पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ड़) में कहीं भी यह कथन नहीं है कि अन्वेषण के किसी प्रक्रम पर अभियुक्त द्वारा प्रस्थापित स्पष्टीकरण के संबंध में अन्वेषण अधिकारी को किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व विचार करना चाहिए ; तथापि, यह भी उल्लेखनीय है कि अन्वेषण अधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह कोई राय बनाने से पूर्व संपूर्ण सामग्री के संबंध में अपना अभिनिश्चय करे और उसका सुसंगत रूप से मूल्यांकन करे जो 'निष्पक्ष अन्वेषण' के परिधि-क्षेत्र के अंतर्गत आने वाला एक महत्वपूर्ण चरण है । अपीलार्थी ने 'पैरा 21' में इस बात को स्वीकार किया है कि अन्वेषण अधिकारी ने उसके द्वारा प्रस्तुत किए

गए स्पष्टीकरण पर विचार किया है किंतु उसने साथ ही यह प्रतिवाद भी किया है कि उसने उस स्पष्टीकरण पर उसकी सास की संपत्ति और उसके साढ़ू तथा साली के घर से अभिगृहीत आभूषणों के संबंध में विचार नहीं किया है । अपीलार्थी के अनुसार, जैसा कि उसके द्वारा 'पैरा 22' में कथन किया गया है कि अन्वेषण के दौरान अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण पर विचार करने के पश्चात् "स्पष्टीकरण को स्वीकार किए जाने या उसे अस्वीकृत किए जाने के कारणों को आरोप पत्र में उल्लिखित किया जाना चाहिए", किंतु उक्त कथन को विधि के किसी उपबंध या किसी पूर्व निर्णय से समर्थन प्राप्त नहीं होता है । वर्तमान मामले में अपीलार्थी/अभियुक्त के अधिकारों और उसकी स्वतंत्रता के संबंध में विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपने उस निर्णय जिसे चुनौती दी गई है, के 'पैरा 16 और पैरा 17' में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है । विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए 'निष्कर्ष और तर्कणा' उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि के अनुरूप हैं जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है । उपरोक्त परिस्थितियों में हमें कोई ऐसा ठोस आधार प्रतीत नहीं होता है जिसके परिणामस्वरूप हम निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करें क्योंकि वह निर्णय जिसे चुनौती दी गई है, सर्वथा विधि के अनुरूप है । इस प्रकार यह अपील असफल होती है । तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है । (पैरा 20 और 21)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1265 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 एस. सी. 1131 : **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** बनाम **प्रामिला विरेन्द्र कुमार अग्रवाल और अन्य ;**	19
[2011]	(2011) 3 एस. सी. सी. 581 = 2011 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 1479 : **राधेश्याम केजरीवाल** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य और अन्य ;**	10

[2006] (2006) 1 एस. सी. सी. 420 =
ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 552 :
उप पुलिस अधीक्षक, चेन्नई बनाम
के. इनबासाग्रान ; 12

[2004] (2004) 2 एस. सी. सी. 731 =
ए. आई. आर. ऑनलाइन 2004 एस. सी. 638 :
के. सी. बिल्डर्स और अन्य बनाम
आयकर सहायक आयुक्त ; 8

[2000] (2000) 6 एस. सी. सी. 338 =
ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 2583 :
मध्य प्रदेश राज्य बनाम **मोहन लाल सोनी** ; 14

[1996] ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 722 :
महाराष्ट्र राज्य और अन्य बनाम **ईश्वर पिराजी**
कालपत्री और अन्य ; 18

[1991] (1991) 3 एस. सी. सी. 655 =
ए. आई. आर. ऑनलाइन 1991 एस. सी. 184 :
के. वीरास्वामी बनाम **भारत संघ और अन्य ।** 15

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2020 की रिट अपील सं. 295.

वर्तमान रिट अपील विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा अपराध मामला सं. 5/2016 में दिए गए निर्णय को चुनौती देते हुए फाइल की गई है ।

याची की ओर से श्री मनोज परांजपे

प्रत्यर्थी की ओर से श्री सुदीप अग्रवाल, उप महाधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति पी. आर. रामचंद्र मेनन ने दिया ।

मु. न्या. मेनन – क्या अभियुक्त जिसके विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'पीसी अधिनियम' कहा गया है) की धारा 13(1)(ड़) और धारा 13(2) के

निबंधनानुसार दांडिक मामला रजिस्टर किया गया है, अन्वेषण अधिकारी द्वारा आरोप पत्र प्रस्तुत किए जाने से पूर्व अन्वेषण के अनुक्रम में अन्वेषण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण के संबंध में "सुनवाई का अवसर" प्राप्त करने के लिए हकदार है ? विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इसका उत्तर 'नकारात्मक' रूप में दिया था जिसे रिट याची द्वारा इस अपील के माध्यम से चुनौती दी गई है ।

2. इस मामले के प्रभावी न्याय-निर्णयन के लिए आवश्यक तथ्य संक्षिप्त में इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी जो अधीक्षक अभियंता, लोक निर्माण विभाग में कार्यपालक अभियंता के रूप में कार्यरत है, प्रत्यर्थी राज्य भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो, रायपुर के द्वारा किए जाने वाले अन्वेषण का सामना कर रहा है, जिसने पूर्वोक्त उपबंधों के अधीन उसके विरुद्ध अपराध मामला सं. 5/2016 रजिस्ट्रीकृत किया है । उक्त मामले में यह कथन किया गया है कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसके साढ़ू रमेश गुलाटी (अपीलार्थी की पत्नी की बहन का पति) के घरों पर छापा डाला था और उन्हें अपराध में फंसाने वाली सामग्रियों का अभिग्रहण किया था । प्रत्यर्थी द्वारा ली गई तलाशी, किए गए अभिग्रहण और अन्वेषण के अनुक्रम में अपीलार्थी से अभिगृहीत सामग्रियों/अभिलेखों के अलावा अपीलार्थी के साढ़ू रमेश गुलाटी के घर से 45,63,900/- रुपए की नकद राशि का भी अभिग्रहण किया गया था । यह कथन किया गया था कि अपीलार्थी की साली के घर से कुछ जेवरात भी अभिगृहीत किए गए थे और उनके संबंध में अनुलग्नक-पी/1 सामान सूची तैयार की गई थी । जैसा कि अपीलार्थी द्वारा प्रकट किया गया है प्रत्यर्थी द्वारा तलाशी और अभिग्रहण के पश्चात् और सामान सूची तैयार करने के पश्चात् जांच अवधि को तारीख 1 अप्रैल, 2001 से 16 जनवरी, 2016 के रूप में अवधारित किया गया । उक्त अवधि के दौरान आय को 89,24,173/- रुपए के रूप में अवधारित किया गया जबकि इस अवधि के दौरान व्यय की संगणना 2,78,31,968/- रुपए के रूप में की गई । सक्षम प्राधिकारी ने तारीख 23 जुलाई, 1992 से जो अपीलार्थी द्वारा उसके उक्त सेवा में आने की तारीख है, तारीख 31 मार्च, 2001 तक की अवधि के लिए आय और व्यय का भी अवधारण किया जिसकी विशिष्टियां, जहां तक मामले में अंतर्वलित विवाद्यक का संबंध है, महत्वपूर्ण नहीं हैं ।

3. अपीलार्थी की शिकायत यह है कि जांच अवधि के दौरान अपीलार्थी के व्यय का अवधारण करते समय प्रत्यर्थी ने निम्नलिखित धनराशियों को भी सम्मिलित किया है :-

(i) उसके साढू रमेश गुलाटी के घर से अभिगृहीत रकम, अर्थात् 45,63,900/- रुपए की रकम ;

(ii) अपीलार्थी की सास का घर जिसका मूल्य 48,32,600/- रुपए आंका गया है ; और

(iii) अपीलार्थी की मृत पत्नी की आय जिसे 73,70,116/- रुपए के रूप में अवधारित किया गया है ।

4. यह उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी के साढू रमेश गुलाटी के घर से अभिगृहीत नकदी के संबंध में उसके द्वारा एक दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 1174/2017 को फाइल करके पृथक् रूप से चुनौती दी गई है जिसमें उक्त नकदी के स्रोत और उससे संबंधित अन्य ब्यौरों को प्रकट किया गया है । इसी प्रकार अपीलार्थी ने अपनी सास की आस्तियों के प्रतिनिर्देश से यह उल्लेख किया है कि उसने 'इलेक्ट्रो-होम्योपैथी' में अर्हता प्राप्त की है और वह उक्त व्यवसाय को नियमित रूप से कर रही है जिससे उसे नियमित आय प्राप्त होती है और साथ ही उसने इस तथ्य को भी जोड़ा कि वह आयकर विभाग की एक नियमित करदाता है । आयकर विभाग द्वारा तारीख 12 मई, 2016 को (संपत्ति के संबंध में) उससे मांगे गए स्पष्टीकरण के प्रत्युत्तर में उसने यह कथन किया है कि उसकी सास ने आयकर विभाग के समाधानप्रद रूप में उसका उत्तर दे दिया था और आयकर विभाग ने उसे इस मामले में निर्मुक्त करते हुए इस मामले को समाप्त कर दिया था और इसलिए उक्त संपत्ति को अपीलार्थी की आय के रूप में संगणित नहीं किया जा सकता । अपीलार्थी ने अपने पक्षकथन में यह भी कहा है कि प्रत्यर्थी ने अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान उससे 'स्पष्टीकरण' मांगा था और जब सभी उपरोक्त महत्वपूर्ण विशिष्टियों के संबंध में स्पष्टीकरण उपलब्ध करा दिया गया था फिर भी प्रत्यर्थी ने समुचित न्यायालय के समक्ष उसके विरुद्ध आरोप पत्र फाइल करने से संबंधित आगे कार्यवाही करने से पूर्व उन्हें विचार में

नहीं लिया । अत: याची द्‌वारा वर्तमान रिट याचिका फाइल करके यह अनुरोध किया गया है कि ऐसा निषेधादेश जारी किया जाए जिसके द्‌वारा प्रत्यर्थी को यह निदेश दिया जाए कि वह आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व 'कारण और सकारण आदेश' के माध्यम से (i) उसके साढ़ू रमेश गुलाटी के घर से अभिगृहीत नकदी ; (ii) याची की सास के घर के स्वामित्व और साथ ही (iii) याची की मृत पत्नी के उपार्जनों से संबंधित स्पष्टीकरणों पर विचार करे ।

5. दोनों पक्षों की सुनवाई करने के पश्चात् और विरोधी प्रतिवादों के समर्थन में उद्धृत मामला विधियों को निर्दिष्ट करने के पश्चात् विद्‌वान् एकल न्यायाधीश ने यह विनिश्चय करने के लिए उच्चतम न्यायालय द्‌वारा दिए गए विभिन्न अन्य विनिर्णयों का भी उल्लेख किया है कि क्या रिट याची द्‌वारा ईप्सित अनुरोध को स्वीकार किया जा सकता है । तद्‌नुसार, एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ङ) या किसी अन्य उपबंध में इस बात का उल्लेख नहीं है कि अभियुक्त/रिट याची के पास 'आरोप पत्र प्रस्तुत करने से पूर्व सुनवाई का अवसर दिए जाने' से संबंधित कोई अधिकार उपलब्ध है । यह भी संप्रेक्षण किया गया है कि उच्चतम न्यायालय द्‌वारा दिए गए विनिर्णयों को ध्यान में रखते हुए यह साबित करने का प्रारंभिक भार अभियोजन पक्ष पर है कि अभियुक्त ने उसकी आय के ज्ञात के स्रोतों के अनुपात में अत्यधिक संपत्ति एकत्रित की है और उसके पश्चात् यह अभियुक्त/रिट याची का दायित्व होगा कि वह न्यायालय के समक्ष समाधानप्रद रूप से अपनी आस्तियों और संसाधनों/आय के ज्ञात स्रोतों के संबंध में स्पष्टीकरण उपलब्ध कराए । यह भी संप्रेक्षण किया गया है कि रिट याची के द्‌वारा निर्दिष्ट किए गए निर्णय उक्त मामले में लागू नहीं थे और वे दिए गए कारणों से विशेषणीय थे । तद्‌नुसार, विद्‌वान् एकल न्यायाधीश ने मामले में हस्तक्षेप करने से इनकार किया और रिट याचिका को खारिज कर दिया गया जिसमें शुद्धि करने हेतु इस अपील को फाइल किया गया है और उक्त तथ्य को विचारार्थ प्रस्तुत किया गया है ।

6. हमने अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्‌वान्

काउंसेल श्री मनोज परांजपे और अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् उप महाधिवक्ता को ध्यानपूर्वक सुना है ।

7. पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ङ) में तारीख 26 मार्च, 2018 से सारवान् संशोधन हुआ है जिससे पूर्व वह निम्नानुसार थी :-

"13. लोक सेवक द्वारा आपराधिक अवचार -

(1) कोई लोक सेवक आपराधिक अवचार का अपराध करने वाला कहा जाता है, -

(क) से (घ) ....

(ङ) यदि उसके या उसकी ओर से किसी व्यक्ति के कब्जे में ऐसे धन संबंधी साधन तथा ऐसी संपत्ति है जो उसकी आय के ज्ञात स्रोतों की अननुपातिक है अथवा उसके पद की कालावधि के दौरान किसी समय कब्जे में रही है जिसका कि वह लोक सेवक, समाधानप्रद लेखा-जोखा नहीं दे सकता ।

स्पष्टीकरण - इस धारा के प्रयोजनों के लिए 'आय के ज्ञात स्रोत' से अभिप्रेत है किसी विधिपूर्ण स्रोत से प्राप्त आय, जिस प्राप्ति की संसूचना, लोक सेवक को तत्समय लागू किसी विधि, नियमों या आदेशों के उपबंधों के अनुसार दे दी गई है ।"

इस प्रकार पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ङ) के अधीन किसी अपराध का गठन करने के लिए पूरी की जाने वाली विभिन्न अपेक्षाओं/घटकों के संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता । इसी भांति घटनाओं की श्रृंखला के संबंध में कोई विवाद नहीं है ।

8. अपीलार्थी द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण का सार यह है कि उसका साढू, अर्थात् रमेश गुलाटी, उसकी सास, अर्थात् श्रीमती इंदु बेदी, उसकी मृत पत्नी, अर्थात् संध्या कुंजम और उसकी साली के अपने-अपने आय के स्वतंत्र स्रोत हैं और इसलिए उनके नामों के प्रतिनिर्देश से बरामद नकदी/जेवरातों/संपत्ति को अपीलार्थी का नहीं माना जा सकता और न ही उक्त संपत्ति के संबंध में उसका निर्धारण किया जा सकता है ।

अपीलार्थी ने यह प्रतिवाद करने के लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा **के. सी. बिल्डर्स और अन्य** बनाम **आयकर सहायक आयुक्त**[1] वाले मामले में पारित निर्णय का अवलंब लिया है कि जब आयकर अपील अधिकरण/न्यायनिर्णयन प्राधिकारी पहले ही इस निष्कर्ष पर पहुंच चुके हैं कि किसी भी प्रकार की आय को छिपाया नहीं गया है तो उसके पश्चात् आयकर अधिनियम के अधीन उसके विरुद्ध कोई भी अपराध बनाया नहीं जा सकता और इसलिए इस संबंध में उस पर कोई अभियोजन नहीं चलाया जा सकता ।

9. यह एक ऐसा मामला है जहां आयकर अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि आय को छिपाया गया है और तद्नुसार आयकर अधिनियम की धारा 271(1)(ग) के अधीन शास्ति अधिरोपित की गई थी तथापि, इस मामले को अपील अधिकरण के समक्ष ले जाए जाने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी भी प्रकार की आय को छिपाया नहीं गया है और तद्नुसार आयकर अधिनियम की धारा 271(1)(ग) के अधीन अधिरोपित शास्ति को रद्द कर दिया गया था । इसके बावजूद अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट के समक्ष पृथक् परिवाद फाइल करके आयकर अधिनियम की धारा 276-ग के निबंधनानुसार 'जानबूझ कर' कर अपवंचन करने के प्रयास से संबंधित अपराध के लिए अभियोजन कार्यवाहियां आरंभ की गई थीं । उच्चतम न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया है कि आय का छिपाया जाना पूर्व में फाइल की गई मूल विवरणी के प्रतिनिर्देश से था जिसमें केवल कम आय दर्शित की गई थी और तलाशी तथा अभिग्रहण के पश्चात् फाइल की गई विवरणी के परिणामस्वरूप आयकर अधिनियम की धारा 271(1)(ग) के अधीन शास्ति अधिरोपित की गई थी किंतु आयकर अपील अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आय में की गई परिवृद्धियां निर्धारिती और राजस्व के बीच 'समाधान' पर आधारित थीं और वे निर्धारिती के इस स्वेच्छिक प्रस्ताव को उपदर्शित करती थी और इसलिए किसी प्रकार से आय को नहीं छिपाया गया था जिसके परिणामस्वरूप शास्ति को रद्द किया गया था । इस आदेश के अंतिम हो जाने के कारण आयकर

---

[1] (2004) 2 एस. सी. सी. 731 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2004 एस. सी. 638.

अधिनियम के अधीन ऐसा कोई अपराध विद्‌यमान नहीं है जिसके संबंध में धारा 276-ग के अधीन अभियोजन चलाया जा सके और तद्‌नुसार यह निष्कर्ष निकाला गया था कि एक बार यह पाए जाने के पश्चात् कि किसी भी प्रकार से आय को छिपाया नहीं गया है अभियोजन स्वत: ही अभिखंडित हो जाएगा । किंतु उक्त निर्णय किसी भी रीति में अपीलार्थी की वर्तमान मामले में रक्षा नहीं करता है क्योंकि वर्तमान मामले में अभियोजन आयकर अधिनियम के किन्हीं उपबंधों के उल्लंघन के प्रतिनिर्देश से नहीं चलाया जा रहा है अपितु वर्तमान मामले में अभियोजन पीसी अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ड़) के अधीन 'आपराधिक अवचार' के अपराध के लिए चलाया जा रहा है । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी द्‌वारा दिया गया स्पष्टीकरण समाधानप्रद है अथवा नहीं, इस प्रश्न पर विचारण न्यायालय द्‌वारा विचार किया जाएगा और यह मामला अन्वेषण अधिकारी द्‌वारा कोई सकारण आदेश पारित करके अधिनिर्णीत नहीं किया जाना है और वस्तुत: रिट याचिका में इसी बात के लिए अनुरोध किया गया है ।

10. अपीलार्थी के विद्‌वान् काउंसेल ने **राधेश्याम केजरीवाल** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्‌वारा पारित निर्णय का अवलंब लेते हुए यह प्रतिवाद किया है कि जब किन्हीं न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में ऐसा कोई निष्कर्ष निकाला जाता है जो समान उल्लंघन के लिए विचारण का सामना करने वाले व्यक्ति के पक्ष में जाता है और संबद्ध व्यक्ति को गुणागुण आधार पर निर्दोष के रूप में अभिनिर्धारित किया जाता है तो समान तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन उस व्यक्ति के विरुद्ध किसी दांडिक अभियोजन को जारी नहीं रखा जा सकता ; इसमें अंतर्निहित सिद्धांत यह है कि दांडिक मामलों में 'उच्चतर स्तर का सबूत' अपेक्षित होता है । यह प्रतिवाद किया गया है कि आयकर प्राधिकारियों द्‌वारा संबद्ध व्यक्तियों द्‌वारा फाइल की गई विवरणियों में घोषित आय के प्रतिनिर्देश से निकाले गए निष्कर्ष अंतिम हो गए हैं और इस प्रकार उक्त आय जिसे अपीलार्थी के कब्जे में पाया गया है या उसके द्‌वारा अर्जित की गई है, के बारे में यह नहीं माना जा

---

1 (2011) 3 एस. सी. सी. 581 = 2011 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 1479.

सकता कि वह उसे पीसी अधिनियम के अधीन अपराध से जोड़ती है । इसके अतिरिक्त, उसके साढ़ू, अर्थात् रमेश गुलाटी के घर से अभिगृहीत नकदी से संबंधित मामले को एक पृथक् दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 1174/2017 के माध्यम से चुनौती दी गई है और अपीलार्थी की सास, अर्थात् श्रीमती इंदु बेदी को आयकर प्राधिकारियों द्वारा उसके कब्जे के घर को धारित करने के संबंध में निर्मुक्त कर दिया गया है ।

11. इसी प्रकार, अपीलार्थी की मृत पत्नी, अर्थात् संध्या कुंजम की आय के एक पृथक् स्रोत को उपदर्शित किया गया है जो चिकित्सा की 'इलेक्ट्रो-होम्योपैथी' शाखा में व्यवसाय कर रही थी और यह प्रतिवाद किया गया है कि उसने वर्ष 1995-96 से लेकर वर्ष 2014-15 की अवधि के दौरान 73,70,116.97/- रुपए की राशि का अर्जन किया था जिसके संबंध में यह कथन किया गया है कि उसे आयकर प्राधिकारियों द्वारा पहले ही निर्मुक्त कर दिया गया है और जिसकी विशिष्टियां अपीलार्थी के अनुसार प्रत्यर्थी को उपलब्ध करा दी गई थी किंतु उसने उसे विचार में नहीं लिया था । राधेश्याम केजरीवाल (उपरोक्त) (जहां यह घोषणा की गई कि किसी निर्णय को कानून के रूप में नहीं माना जा सकता) वाला मामला एक ऐसा मामला है जो विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियमन, 1973(1973 का 46) के अधीन अपराध को प्रतिनिर्दिष्ट करता है । इस मामले में न्यायाधीशों के 'बहुमत' द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चूंकि न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों के दौरान न्यायनिर्णयन प्राधिकारी ने गुणागुण के आधार पर स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि निर्धारिती के विरुद्ध विधि के सुसंगत उपबंधों के उल्लंघन के संबंध में लगाए गए आरोप कायम नहीं रखे जा सकते । इसलिए प्रवर्तन निदेशालय न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों के प्रतिकूल कार्रवाई नहीं कर सकता और वह दांडिक अभियोजन संबंधी कार्यवाहियों को आगे नहीं बढ़ा सकता । तद्नुसार, अभियुक्त द्वारा फाइल की गई अपील को मंजूर किया गया था और मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा पारित निर्णय और उसकी अभिपुष्टि करने वाले उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया गया था । उक्त निर्णय वर्तमान मामले में अपीलार्थी द्वारा प्रतिपादित प्रतिरक्षा के संबंध में लागू नहीं होता है ।

12. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि उच्चतम

न्यायालय द्वारा **उप पुलिस अधीक्षक, चेन्नई** बनाम **के. इनबासाग्रान**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि को ध्यान में रखते हुए घर के अन्य सदस्यों की आय की संगणना अभियुक्त की आय के रूप में नहीं की जा सकती और इस प्रकार याची द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को विचार में न लेने और इस संबंध में 'सुनवाई का अवसर' प्रदान किए जाने से इनकार किया जाना प्रत्यर्थी के पक्षकथन के लिए घातक है । यहां इस बात को दोहराया जाता है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि के संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता । अपीलार्थी के लिए सदैव यह मार्ग खुला है कि वह उपयुक्त समय पर जब उसके विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया जाता है या उसके पश्चात् विचारण न्यायालय के समक्ष उसके समाधानप्रद रूप में अपने स्पष्टीकरण प्रस्तुत करे । जहां तक अन्वेषण अधिकारी/अभिकरण का संबंध है आरोप पत्र मात्र एक ऐसी 'अंतिम रिपोर्ट' है जिसे अभियुक्त को आरोप से संबद्ध करने के लिए एकत्रित की गई सामग्री के आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के निबंधनानुसार प्रस्तुत किया जाना है । डीएसपी, चेन्नई वाला मामला एक ऐसा मामला था जिसे पीसी अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ङ) के अधीन दर्ज किया गया था । उक्त मामले में एक वरिष्ठ आई. ए. एस. अधिकारी के विरुद्ध (उपरोक्त अपराधों के संबंध में) अन्वेषण पूरा होने तथा आरोप पत्र फाइल किए जाने के पश्चात् विचारण न्यायालय द्वारा विचारण पूरा किया गया जिसमें उसे दोषी पाया गया और उसके परिणामस्वरूप विशेष न्यायालय द्वारा उसे सिद्धदोष ठहराया गया तथा उसके विरुद्ध दंडादेश पारित किया गया किंतु अपील किए जाने पर मद्रास उच्च न्यायालय ने उसे दोषमुक्त कर दिया और उच्च न्यायालय के उक्त आदेश को राज्य द्वारा उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई । उच्चतम न्यायालय ने अभिलेख पर लाई गई सामग्री के प्रतिनिर्देश यह संप्रेक्षण किया कि अभियुक्त ने समाधानप्रद रूप से यह स्पष्ट कर दिया है कि उसकी पत्नी के स्वामित्व वाले धन और आस्तियां उसके स्वयं द्वारा पृथक् रूप से चलाए जाने वाले कारबार से एकत्रित की गई हैं और इस प्रभाव के किसी साक्ष्य की

---

[1] (2006) 1 एस. सी. सी. 420 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 552.

अनुपस्थिति में कि आस्तियां अभियुक्त की हैं, उसे ऐसी आस्तियों के संबंध में पीसी अधिनियम के अधीन दायी नहीं ठहराया जा सकता । उक्त निर्णय किसी भी रीति में अपीलार्थी का समर्थन नहीं करता है क्योंकि वर्तमान मामले में आरोप अभी विरचित किए जाने हैं, साक्ष्य प्रस्तुत किया जाना है और विचारण न्यायालय द्वारा अभी तक कोई निष्कर्ष नहीं निकाले गए हैं । रिट याची/अपीलार्थी विचारण न्यायालय के समक्ष उसके समाधानप्रद रूप में अपनी स्थिति को स्पष्ट करता है और यदि वे तथ्यों और विधि के अनुसार स्थापित कर दिए जाते हैं तो वह विचारण न्यायालय से अपने पक्ष में आदेश प्राप्त कर सकता है ।

13. अपीलार्थी ने कुछ अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों का भी अवलंब लिया है, विशिष्ट रूप से मद्रास उच्च न्यायालय और उड़ीसा उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का जैसा कि अपील के ज्ञापन के क्रमशः पैरा 16/17 और 19 में उल्लिखित किया गया है । स्वीकार्य रूप से उक्त न्यायालयों के समक्ष कार्यवाहियां विशेष न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के विरुद्ध थी या आरोप से 'उन्मोचन' के लिए थी जिनमें या तो अनुतोष मंजूर करने या दिए गए अनुतोष को खारिज करने हेतु अनुरोध किया गया था । अपीलार्थी के वर्तमान मामले में अभी वह प्रक्रम नहीं आया है क्योंकि स्वीकार्य रूप से प्रत्यर्थी ने अभी तक आरोप पत्र/अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की है । अन्वेषण पूरा हो जाने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल कर दिए जाने के बाद अपीलार्थी विधि के अनुसार उसे उपलब्ध अपने पसंद की उपयुक्त कार्यवाहियों को आरंभ कर सकता है । अतः उक्त निर्णयों का अवलंब लिया जाना वर्तमान मामले में संदर्भ से परे है और वह उचित प्रतीत नहीं होता है ।

14. **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **मोहन लाल सोनी**[1] वाला मामला ऐसा मामला था जिसमें मध्य प्रदेश राज्य ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी को पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ड़) के अधीन दंडनीय अपराध के संबंध में उन्मोचित करते हुए पारित किए गए निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की थी । उक्त मामले में अभियुक्त का विनिर्दिष्ट पक्षकथन यह था कि अन्वेषण के दौरान

---

[1] (2000) 6 एस. सी. सी. 338 = ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 2583.

अभियुक्त की सास, पिता, भाई और भतीजे के स्वामित्व वाली संपत्तियों और आस्तियों को अभियुक्त की आस्तियों के रूप में इस तथ्य के बावजूद दर्शित किया गया था कि उसकी पत्नी स्वयं एक स्व-उपार्जन करने वाली कुटुंब की सदस्य थी और वह एक आयकर दाता भी थी । आरोप पत्र प्रस्तुत करते समय अन्वेषण अभिकरण द्वारा एकत्रित किए गए अनेक दस्तावेजों को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया था । अभियुक्त के अनुसार यदि उन दस्तावेजों को प्रस्तुत किया जाता और न्यायालय द्वारा उन पर विचार किया जाता तो उसके विरुद्ध कोई आरोप विरचित किए जाने की संभावना रखने वाला प्रथमदृष्ट्या मामला भी नहीं बनता था । तद्नुसार आरोपों को विरचित करने से पूर्व उक्त दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने का अनुरोध करते हुए एक आवेदन फाइल किया गया था जिसे विशेष न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया था कि केवल आरोपों को विरचित करने के लिए न्यायालय को केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(5) के अधीन अग्रेषित दस्तावेजों पर विचार किए जाने की आवश्यकता है । उक्त आदेश को पुनरीक्षण के माध्यम से चुनौती दिए जाने पर उच्च न्यायालय ने तारीख 8 सितंबर, 1997 के आदेश के अनुसार यह निदेश देते हुए उक्त पुनरीक्षण याचिका का निपटारा किया था कि उक्त दस्तावेजों (अन्वेषण के दौरान अभियुक्त द्वारा उपलब्ध कराए गए दस्तावेज) को निचले न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए और न्यायालय आरोपों को विरचित करते समय उन पर विचार करे । उक्त न्यायालय के इस आदेश का, उसके अंतिम होने के बावजूद भी अनुपालन नहीं किया गया था और विचारण न्यायालय द्वारा उक्त आदेश का अनुपालन न किए जाने के कारण उच्च न्यायालय ने (मुकदमे के दूसरे दौर में) विचारण न्यायालय द्वारा विरचित आरोपों के विरुद्ध निषेधादेश निकाला था और अभियुक्त को निर्मुक्त कर दिया गया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन न्यायालय को यह विनिश्चित करने कि क्या विचारण का संचालन करने के लिए ऐसा करना आवश्यक था, हेतु समर्थ बनाने के लिए यथा-परिकल्पित इस प्रकार के अवसर के विस्तार क्षेत्र को उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से विरचित किया गया और तद्नुसार उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय की अभिपुष्टि की गई और राज्य

द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज कर दिया गया । उपरोक्त निर्णय वर्तमान मामले में याची द्वारा सामने रखे गए परिप्रेक्ष्य का समर्थन नहीं करता कि उसे उसके द्वारा ईप्सित अनुतोष मंजूर किया जाए, अर्थात् अन्वेषण अभिकरण द्वारा आरोप पत्र फाइल करने से पूर्व उसे 'सुनवाई का अवसर' प्रदान किया जाए ।

15. इस अपील के संबंध में यह प्रश्न अनिवार्य है कि क्या अभियुक्त अन्वेषण अधिकारी के समक्ष उसकी आस्तियों और आय के ज्ञात स्रोतों के बीच अननुपात के प्रतिनिर्देश से सुनवाई का अवसर दिए जाने का हकदार है और क्या आरोप पत्र में इस प्रभाव का कोई कथन अंतर्विष्ट किया जाना चाहिए ? यह प्रश्न जिसमें किसी लोक सेवक द्वारा लेखा-जोखा देने की असमाधानप्रद रीति को अंतर्विष्ट किया गया है, उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष **के. वीरास्वामी** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में विचार में आया था । यह एक ऐसा मामला था जिसे मद्रास उच्च न्यायालय के एक पूर्व मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा जिसके विरुद्ध केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 (1947 का 2) (निरसित) की धारा 5(1)(ख), (घ) और (ड़) के साथ पठित धारा 5(2) के अधीन अपराधों के प्रतिनिर्देश से मामला रजिस्टर किया था । उक्त अधिनियम की धारा (1)(ड़) और धारा 5(2) पीसी अधिनियम की धारा 13(1) और 13(2) के तत्समान है । किंतु यह तथ्य जानकारी में आने के पश्चात् कि उसके विरुद्ध विशेष न्यायाधीश, मद्रास के न्यायालय में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई है, उक्त अपीलार्थी तारीख 9 मार्च, 1976 से अवकाश पर चला गया और उसके पश्चात् तारीख 8 अप्रैल, 1976 को अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर वह सेवा-निवृत्त हो गया । अन्वेषण पूरा हो जाने के पश्चात् विशेष न्यायालय, मद्रास के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के निबंधनानुसार अंतिम रिपोर्ट फाइल की गई । अपीलार्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 483 के अधीन उक्त अभियोजन कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के लिए एक याचिका फाइल की जिसे मद्रास उच्च न्यायालय की एक पूर्ण न्यायपीठ द्वारा खारिज कर दिया गया, तथापि,

[1] (1991) 3 एस. सी. सी. 655 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 1991 एस. सी. 184.

इस मामले में अंतर्वलित सांविधानिक प्रश्नों के महत्व को ध्यान में रखते हुए उच्चतम न्यायालय के समक्ष 'अपील हेतु प्रमाणपत्र' मंजूर किया गया ।

16. उच्चतम न्यायालय ने उक्त मामले में विचारार्थ दो प्रश्नों को सूत्रबद्ध किया जो निम्नानुसार हैं :-

> "1. उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश इस अधिनियम के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत नहीं आते हैं जो एक विशेष अधिनियमिती है जो ऐसे लोक सेवकों को लागू है जिनकी दशा में अधिनियम की धारा 6 के अधीन मंजूरी प्राप्त करने के पश्चात् अभियोजन आरंभ किया जा सकता है जो उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों जैसे सांविधानिक कृत्यकारियों के लिए परिकल्पित स्कीम के प्रतिकूल है ।
>
> 2. अपीलार्थी अन्वेषण अधिकारी के समक्ष उसकी आस्तियों और आय के ज्ञात स्रोतों के बीच अननुपात के संबंध में स्पष्टीकरण देने के अवसर के लिए हकदार था और आरोप पत्र में इस प्रभाव का एक कथन अंतर्विष्ट होना चाहिए कि लोक सेवक द्वारा उसकी आय के संबंध में समाधानप्रद रूप में लेखा-जोखा नहीं दिया गया है । जब तक कि आरोप पत्र में ऐसा कोई प्रकथन न हो तब तक अधिनियम की धारा 5(1) के खंड (ड़) के अधीन किसी अपराध को गठित नहीं किया जा सकता ।"

17. निर्णय (4 : 1 के बहुमत के अनुसार) द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 के अधीन आएंगे और उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के अभियोजन के लिए उस समय मंजूरी अपेक्षित नहीं थी जब वह अपना पद धारण न कर रहा हो, चाहे अपराध उस अवधि से संबंधित हो, जब वह पद धारण कर रहा था । स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया गया था कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1947 की धारा 5(1)(ड.) (जो पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ड.) के तत्समान है) यह उपदर्शित नहीं

करती है कि अन्वेषण अधिकारी लोक सेवक को ऐसा अवसर प्रदान करने के लिए बाध्य है जिससे वह अपनी आस्तियों और आय के बीच अभिकथित अननुपात को स्पष्ट कर सके और अन्वेषण अधिकारी इस प्रभाव का प्रकथन आरोप पत्र में करे : इस निर्णय द्वारा स्पष्ट रूप से यह उल्लिखित किया गया कि प्रस्तुत किए जाने वाला आरोप पत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अनुपालन में होना चाहिए और उसमें उससे अधिक कुछ अंतर्विष्ट नहीं होना चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अन्वेषण अधिकारी से केवल यह अपेक्षित है कि वह यह पता लगाने के लिए सामग्रियां एकत्रित करे कि क्या अभिकथित अपराध कारित किया गया प्रतीत होता है । अन्वेषण के अनुक्रम में वह अभियुक्त से स्पष्टीकरण मांग सकता है और आवश्यक रूप से अभियुक्त के आय के ज्ञात स्रोतों से उसकी स्थिति की जांच कर सकता है तथापि, उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि 'निष्पक्ष अन्वेषण' यह अपेक्षा करता है कि अभियुक्त को अंधेरे में नहीं रखा जाना चाहिए । स्पष्ट शब्दों में यह संप्रेक्षण किया गया कि इसका तात्पर्य यह नहीं है कि सभी प्रकार की सामग्रियों को एकत्रित करने के पश्चात् अन्वेषण अधिकारी को अभियुक्त को एक अवसर प्रदान करना चाहिए और उससे उसकी आस्तियों और आय के ज्ञात स्रोतों के बीच अननुपात के संबंध में लेखा-जोखा मांगना चाहिए और उसके पश्चात् यह विनिश्चय करना चाहिए कि क्या इस प्रकार दिया गया लेखा-जोखा समाधानप्रद है या नहीं; ऐसा होने पर अन्वेषण अधिकारी की प्रास्थिति ऊपर उठकर जांच अधिकारी या न्यायाधीश के समान हो जाएगी । उच्चतम न्यायालय ने यह चेतावनी दी है कि अन्वेषण अधिकारी लोक सेवक के आचार के विरुद्ध कोई छानबीन नहीं कर रहा है या अभियुक्त की आस्तियों और आय के बीच अननुपात से संबंधित विवादित मुद्दों का अवधारण नहीं कर रहा है ; जबकि वह सभी पक्षों की ओर से केवल सामग्रियां एकत्रित करता है और उनके आधार पर एक रिपोर्ट तैयार करता है जिसे वह न्यायालय के समक्ष 'आरोप पत्र' के रूप में प्रस्तुत करता है । उच्चतम न्यायालय ने इस बात को भी स्पष्ट किया है कि ऐसी रिपोर्ट उस समय पूर्ण समझी जाएगी यदि उसके साथ दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 173(5) के अधीन यथापेक्षित सभी दस्तावेज और साक्षियों के कथन लगे हैं, साथ ही उच्चतम न्यायालय ने इस बात को भी जोड़ा कि अन्वेषण अधिकारी की रिपोर्ट में इसके अतिरिक्त कुछ भी कथित किए जाने की आवश्यकता नहीं है । इस बात पर भी बल दिया गया था कि यह भी आवश्यक नहीं है कि अपराध के सभी ब्यौरों को उसमें अंतर्विष्ट किया जाए और इसके अतिरिक्त, अपराध के ब्यौरों को एक पश्चात्वर्ती प्रक्रम, अर्थात् मामले के विचारण के अनुक्रम में स्वीकार्य साक्ष्य प्रस्तुत करके अभियुक्त के दोष को साबित करने के लिए प्रस्तुत करना अपेक्षित होगा ।

18. उच्चतम न्यायालय की सांविधानिक न्यायपीठ द्वारा उपरोक्तानुसार घोषित इस विधि का अनुसरण उच्चतम न्यायालय की एक दो सदस्यीय न्यायपीठ द्वारा **महाराष्ट्र राज्य और अन्य** बनाम **ईश्वर पिराजी कालपत्री और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित करने के लिए किया गया कि ऐसे व्यक्ति को जिसके विरुद्ध रिपोर्ट फाइल की गई है 'सुनवाई का अवसर' प्रदान करना बाध्यकर नहीं है । यह भी संप्रेक्षण किया गया है कि विधि में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो यह बाध्यकर बनाता हो कि ऐसे व्यक्ति को जिसके विरुद्ध रिपोर्ट फाइल की गई है 'सुनवाई का अवसर' प्रदान करना अनिवार्य है । बंबई उच्च न्यायालय द्वारा इसके प्रतिकूल दिए गए निर्णय को उच्चतम न्यायालय द्वारा उलट दिया गया था और इस प्रकार उसने यह स्पष्ट कर दिया कि अपचारी अधिकारी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(1)(ङ) (जो पीसी अधिनियम की धारा13(1)(ङ) के तत्समान है) के अधीन उसकी आस्तियों और संसाधनों के संबंध में 'समाधानप्रद रूप से स्पष्टीकरण देने' का अवसर 'न्यायालय के समक्ष' उस समय प्रदान किया जाएगा जब विचारण आरंभ होगा और न कि किसी पूर्वतर प्रक्रम पर । इस प्रकार यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह निष्कर्ष सही या कायम रखे जाने योग्य नहीं था कि 'नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों' का उल्लंघन हुआ है क्योंकि मामले को रजिस्टर करने से पूर्व सुनवाई का अवसर प्रदान नहीं किया गया था ।

---

[1] ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 722.

19. **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** बनाम **प्रामिला विरेन्द्र कुमार अग्रवाल और अन्य**[1] वाले मामले में इसी प्रकार का विवाद्यक हाल ही में उच्चतम न्यायालय के विचारार्थ पुन: आया था । पीसी अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ङ) के अधीन दो अभियुक्तों के विरुद्ध एक आपराधिक मामला रजिस्टर किया गया था और अन्वेषण पूरा हो जाने के पश्चात् दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया जिसके परिणामस्वरूप अभियुक्तों ने उन्हें आरोप से निर्मुक्त करने का अनुरोध करते हुए पृथक् आवेदन फाइल किए । एक आवेदन को मंजूर कर दिया गया जबकि विचारण न्यायालय ने दूसरे आवेदन को खारिज कर दिया । इसके परिणामस्वरूप बंबई उच्च न्यायालय के समक्ष दो पुनरीक्षण याचिकाएं फाइल की गईं । एक याचिका केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने अभियुक्त सं. 1 को आरोप मुक्त किए जाने के कारण व्यथित होकर फाइल की जबकि दूसरी याचिका अभियुक्त सं. 2 द्वारा आरोप से मुक्त होने हेतु फाइल किए गए उसके आवेदन के खारिज हो जाने से व्यथित होने के कारण फाइल की गई । दोनों मामलों को इकट्ठा करके उन पर एक साथ सुनवाई की गई, विचार किया गया और दोनों याचिकाओं का तारीख 14 दिसंबर, 2015 के एक समान निर्णय के द्वारा निपटारा किया गया जिसके द्वारा अभियुक्त सं. 2 द्वारा फाइल की गई पुनरीक्षण याचिका को मंजूर किया गया जबकि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा फाइल की गई पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी गई । वस्तुत: इसके परिणामस्वरूप दोनों अभियुक्त 'आरोप मुक्त' हो गए । उच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ मुख्य प्रश्न ये थे कि क्या अन्वेषण अधिकारी के लिए यह बाध्यकर था कि वह अभियुक्त द्वारा प्रस्थापित 'स्पष्टीकरण' को लेखबद्ध करता और क्या ऐसा कोई स्पष्टीकरण 'आरोप पत्र' का भाग होना चाहिए ? बंबई उच्च न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश की राय यह थी कि अन्वेषण अधिकारी को अभियुक्त को एक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए एक निर्दिष्ट अवसर प्रदान करना चाहिए और उन्होंने उसे त्रुटि मानते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसा

---

[1] (2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1265 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 एस. सी. 1131.

न किए जाने के परिणामस्वरूप प्राप्त की गई 'मंजूरी' भी दोषपूर्ण होगी । इस संप्रेक्षण को केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक पृथक् विशेष इजाजत याचिका फाइल करके चुनौती दी गई । उच्चतम न्यायालय ने इस मामले के सभी तथ्यों और आंकड़ों पर विचार-विमर्श करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त को समन किया गया था और उसके कथनों को लेखबद्ध किया गया जिसका प्रयोजन यह था कि उससे उसकी ऐसी आस्तियों, जो अभियोजन पक्ष के अनुसार उसकी आय के ज्ञात स्रोत से अननुपातिक थी, के संबंध में स्थिति को स्पष्ट करने की अपेक्षा की जाए । उच्चतम न्यायालय ने यह घोषित किया कि अन्वेषण के अनुक्रम में अनुसरित की जाने वाली उक्त प्रक्रिया ऐसे मामलों में दिए गए स्पष्टीकरण के संबंध में विचार किए जाने को उस समय एक 'लघु विचारण' की प्रकृति की प्रक्रिया के रूप में अनुध्यात नहीं करती जब स्पष्टीकरण समाधानप्रद न हो (अन्वेषण के अनुक्रम में एकत्रित की गई सामग्रियों और लेखबद्ध किए गए कथनों के आधार पर आरोप पत्र फाइल किए जाने से पूर्व) उच्चतम न्यायालय ने यह और संप्रेक्षण किया कि किसी भी दशा में अभियुक्त के पास विचारण के दौरान अपनी प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने का अवसर होगा और तद्नुसार यह अभिनिर्धारित किया गया कि बंबई उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और विशेष न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त किया जाए और विशेष न्यायालय के समक्ष आरंभ की गई कार्यवाहियों को पुन: प्रारंभ किया जाए और उनके संबंध में विधि के अनुसार आगे कार्यवाही पूरी की जाए ।

20. यह उल्लेख करना सुसंगत है कि अपीलार्थी ने रिट अपील के ज्ञापन के 'पैरा 20' और 'आधार सं. 11' में इस बात को स्वीकार किया है कि पीसी अधिनियम की धारा 13(1)(ङ) में कहीं भी यह कथन नहीं है कि अन्वेषण के किसी प्रक्रम पर अभियुक्त द्वारा प्रस्थापित स्पष्टीकरण के संबंध में अन्वेषण अधिकारी को किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व विचार करना चाहिए; तथापि, यह भी उल्लेखनीय है कि अन्वेषण अधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह कोई राय बनाने से पूर्व संपूर्ण सामग्री के संबंध में अपना अभिनिश्चय करे और उसका सुसंगत रूप से

मूल्यांकन करे जो 'निष्पक्ष अन्वेषण' के परिधि-क्षेत्र के अंतर्गत आने वाला एक महत्वपूर्ण चरण है । अपीलार्थी ने 'पैरा 21' में इस बात को स्वीकार किया है कि अन्वेषण अधिकारी ने उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण पर विचार किया है किंतु उसने साथ ही यह प्रतिवाद भी किया हैं कि उसने उस स्पष्टीकरण पर उसकी सास की संपत्ति और उसके साढू तथा साली के घर से अभिगृहीत आभूषणों के संबंध में विचार नहीं किया है । अपीलार्थी के अनुसार, जैसा कि उसके द्वारा 'पैरा 22' में कथन किया गया है कि अन्वेषण के दौरान अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण पर विचार करने के पश्चात् "स्पष्टीकरण को स्वीकार किए जाने या उसे अस्वीकृत किए जाने के कारणों को आरोप पत्र में उल्लिखित किया जाना चाहिए", किंतु उक्त कथन को विधि के किसी उपबंध या किसी पूर्व निर्णय से समर्थन प्राप्त नहीं होता है । वस्तुतः उच्चतम न्यायालय ने **ईश्वर पिराजी कालपत्री** (उपरोक्त) वाले मामले में और उच्चतम न्यायालय की सांविधानिक न्यायिक पीठ ने **के. वीरास्वामी** (उपरोक्त) वाले मामले में इस प्रतिवाद के प्रतिकूल अभिनिर्धारित किया है ।

21. वर्तमान मामले में अपीलार्थी/अभियुक्त के अधिकारों और उसकी स्वतंत्रता के संबंध में विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपने उस निर्णय जिसे चुनौती दी गई है, के 'पैरा 16 और पैरा 17' में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है । विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए 'निष्कर्ष और तर्कणा' उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि के अनुरूप हैं जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है । उपरोक्त परिस्थितियों में हमें कोई ऐसा ठोस आधार प्रतीत नहीं होता है जिसके परिणामस्वरूप हम निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करें क्योंकि वह निर्णय जिसे चुनौती दी गई है, सर्वथा विधि के अनुरूप है । इस प्रकार यह अपील असफल होती है । तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

पु.

कुप्पुसामी और अन्य

बनाम

तमिलनाडु राज्य

(2014 की दांडिक अपील सं. 23)

तारीख 10 जुलाई, 2020

न्यायमूर्ति टी. रवींद्रन

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 498क और धारा 304ख – दुर्व्यवहार की मांग – दुर्व्यवहार, क्रूरता और प्रताड़ना – मृतका द्वारा विवाह के छह माह के भीतर फांसी लगाकर आत्महत्या किया जाना – दहेज मृत्यु का आरोप – मृतका के माता-पिता द्वारा यह आरोप लगाया जाना कि उनकी पुत्री ने अपने ससुराल पक्ष की ओर से दहेज की मांग पूरा न किए जाने के कारण किए जा रहे दुर्व्यवहार के कारण आत्महत्या की – मृतका के माता-पिता द्वारा यह स्वीकार किया जाना कि उन्होंने विवाह के समय स्वेच्छा से दहेज दिया – उनके द्वारा यह प्रकथन किया जाना कि उन्होंने दहेज के रूप में 40 स्वर्ण मुद्राएं और पांच लाख रुपए की नकद राशि का संदाय किया था – किन्तु वर्तमान मामले के संस्थित होने के पश्चात् पक्षकारों के बीच पंचायत के समक्ष एक करार किया जाना जिसके अनुसार अभियुक्तों द्वारा दहेज में दी गई सभी सामग्रियों को मृतका के माता-पिता को लौटा दिया गया है – उक्त करार में केवल पचास हजार रुपए की नकद राशि का उल्लेख किया जाना – पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा उक्त करार के संबंध में विवाद न उठाया जाना – इसके अतिरिक्त मृतका के माता-पिता और भाई द्वारा दहेज की मांग के संबंध में अस्पष्ट आरोप लगाना क्योंकि इस प्रकार के आरोप पूर्व में न तो आरडीओ के समक्ष लगाए गए थे और न ही प्रतिपरीक्षा में उनकी समुचित रूप से पुष्टि की गई – अभियुक्त द्वारा यह अभिवाक् किया जाना कि उसकी पत्नी ने उदर में पीड़ा के बने रहने के कारण हताशा में आत्महत्या की है – अभियोजन पक्ष का

अभियुक्तों द्वारा दहेज की मांग के कारण मृतका के दुर्व्यवहार को साबित करने के लिए अभिलेख पर समुचित साक्ष्य प्रस्तुत करने में असमर्थ रहना – अभियुक्तों द्वारा भी यह साबित करने हेतु पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहना कि मृतका ने उदर-पीड़ा के कारण आत्महत्या की है – केवल इस कारण से कि मृतका ने विवाह के अनुष्ठापन के छह माह के भीतर आत्महत्या की है, यह उपधारणा नहीं की जा सकती कि दहेज मृत्यु कारित की गई है – उपरोक्त परिस्थितियों में अभियुक्त संदेह का लाभ दिए जाने हेतु हकदार हैं – अतः दोषसिद्धि उचित नहीं है और अपास्त किए जाने की दायी है ।

वर्तमान अपील का निपटारा करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियुक्त सं. 1 और मृतका कोटेश्वरी के बीच तारीख 6 अक्तूबर, 2008 को विवाह अनुष्ठापित हुआ था और विवाह के पश्चात् अभियुक्त सं. 1, मृतका कोटेश्वरी, अभियुक्त सं. 1 की माता अर्थात् अभियुक्त सं. 2 और अभियुक्त सं. 1 का चाचा, अर्थात् अभियुक्त सं. 3 संयुक्त कुटुम्ब के रूप में ओथाप्पाई ग्राम में एक साथ निवास कर रहे थे और अभियोजन पक्ष द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि तारीख 24 मार्च, 2009 को या उससे पूर्व अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने मृतका कोटेश्वरी के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया, उसका उत्पीड़न किया तथा उसके साथ शारीरिक और मानसिक रूप से दुर्व्यवहार किया जिससे उसे इस बात हेतु मजबूर किया जा सके कि वह अपने माता-पिता से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि लेकर आए और अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 के ये स्वेच्छापूर्ण क्रूर कार्य इस रीति में कारित किए गए जिससे मृतका फांसी लगाकर आत्महत्या करने हेतु उत्प्रेरित हुई और तद्नुसार यह अभिकथन किया गया है कि अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने स्वैच्छिक रूप से ऊपर किए गए कथन के अनुसार मृतका के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार करके उसे आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया और इस प्रकार मृतका ने उपरोक्त निवास-स्थान पर तारीख 24 मार्च, 2009 को पूर्वाह्न लगभग 11.00 बजे स्वयं को फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली और इस प्रकार अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने मृतका कोटेश्वरी की दहेज मृत्यु

कारित की है क्योंकि मृतका कोटेश्वरी के साथ उसकी मृत्यु से तुरंत पूर्व दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की अवैध मांग को लेकर क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया गया था और चूंकि ऊपर किए गए कथन के अनुसार उपरोक्त क्रूरतापूर्वक व्यवहारों ने मृतका को अभियुक्त सं. 1 के साथ विवाह के 7 वर्ष के भीतर आत्महत्या करने हेतु मजबूर किया इसलिए यह अभिकथन किया गया है कि अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने दंड संहिता की धारा 498क, धारा 306 और धारा 304ख के अधीन दंडनीय अपराधों को कारित किया है । अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए गए उपरोक्त पक्षकथन को जिला मुंसिफ-सह-न्यायिक मजिस्ट्रेट, उथ्थुकोट्टई द्वारा 2009 के पी. आर. सी. मामला सं. 16 के रूप में फाइल पर लाया गया और अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए दस्तावेजों की प्रतियों को अभियुक्त को, उसके न्यायालय में उपस्थित होने पर उपलब्ध कराए जाने के पश्चात् तथा यह टिप्पणी करते हुए कि 'अभियुक्तों के विरुद्ध बनाया गया मामला' अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचार में लिया जाना है, पूर्वोक्त जिला मुंसिफ-सह-जिला मजिस्ट्रेट ने अभियुक्तों को विचारण हेतु प्रधान सेशन न्यायाधीश, तिरुवल्लूर को सौंप दिया और इस प्रकार इस मामले को वर्ष 2010 के सेशन मामला सं. 255 के रूप में फाइल पर लाया गया और उसके पश्चात् यह मामला विचारण हेतु सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम, तिरुवल्लूर को अंतरित कर दिया गया । सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम ने अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए अभिलेखों का परिशीलन करने और लोक अभियोजक द्वारा दी गई दलीलों को तथा साथ ही अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की गई प्रतिरक्षा पर विचार करने के पश्चात् यह टिप्पणी करते हुए कि अभियुक्तों के विरुद्ध आगे कार्यवाहियां करने हेतु पर्याप्त आधार विद्यमान हैं, अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 498क, धारा 306 और धारा 304ख के अधीन आरोप विरचित किए तथा अभियुक्तों से उक्त आरोपों के प्रतिनिर्देश से प्रश्न किए जाने पर उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया तथा विचारण का दावा किया और इस प्रकार इस मामले में विचारण संबंधी आगे की कार्यवाहियां की गईं । मौखिक और

दस्तावेजी दोनों प्रकार की ऊपर कथित सामग्रियों को जिसे अभियोजन पक्ष और साथ ही अभियुक्तों द्वारा अभिलेख पर लाया गया है, विश्लेषण करने के पश्चात् विचारण न्यायालय, अर्थात् सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम ने अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को सिद्धदोष ठहराते हुए उनके विरुद्ध ऊपर कथित किए गए अनुसार दंडादेश पारित किया जबकि अभियुक्त 3 को उसके विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया और तद्नुसार अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 ने उनकी इस प्रकार आक्षेपित दोषसिद्धि तथा उन पर अधिरोपित दंडादेशों के विरुद्ध वर्तमान अपील फाइल की है । उच्च न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियुक्तों के अनुसार उन्होंने मृतका से दहेज की कोई मांग नहीं की थी, विशिष्ट रूप से उनके द्वारा 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की कोई मांग प्रस्तुत नहीं की गई थी और उन्होंने मृतका के साथ कोई दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित नहीं किया था । प्रथम अभियुक्त के अनुसार मृतका पेट दर्द से पीड़ित रहती थी और उसने असहनीय पीड़ा के कारण आत्महत्या की थी । इस प्रतिनिर्देश से प्रथम अभियुक्त जिसकी प्रति. सा. 4 के रूप में परीक्षा की गई है, ने अभिसाक्ष्य प्रस्तुत किया है । नि:संदेह उसने अपने मौखिक साक्ष्य की चिकित्सीय अभिलेखों के माध्यम से पुष्टि नहीं की है । प्रदर्श पी-4 के रूप में चिह्नित शव-परीक्षा प्रमाणपत्र से यह पता चलता है कि मृतका कुपोषित महिला थी और उसकी शारीरिक बनावट अत्यंत कृष थी । शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर जिसकी अभि. सा. 9 के रूप में परीक्षा की गई है, ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान मृतका की शारीरिक दुर्बलता के बारे में ऊपर किए गए कथन संबंधी तथ्य को स्वीकार किया है और यह भी परिसाक्ष्य दिया है कि उसका कारण समुचित रूप से उपयुक्त आहार ग्रहण न करना था । अत: अभियुक्त के अनुसार मृतका प्राय: पेट दर्द से पीड़ित रहती थी और वह उस संबंध में उपचार भी प्राप्त कर रही थी । इस तथ्य के प्रतिनिर्देश से केवल प्रति. सा. 4 ने ही अभिसाक्ष्य प्रस्तुत किया है और मृतका के पिता (अभि. सा. 1) ने भी यह कथन किया है कि मृतका उसे बार-बार आने वाले बुखार के संबंध में उपचार प्राप्त कर रही थी । इस

संबंध में तथ्य कुछ भी हो हमें शासकीय अधिवक्ता का यह प्रतिवाद सही प्रतीत होता है कि इस संबंध में कोई स्पष्ट साक्ष्य विद्‌यमान नहीं है कि मृतका ने पेट दर्द के कारण आत्महत्या की थी । वहीं समान रूप से यह भी अभिनिर्धारित करना होगा कि यह संकेत करने वाला भी कोई स्पष्ट साक्ष्य विद्‌यमान नहीं है कि अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग के चलते मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया गया था । अभियोजन पक्ष का यह कर्तव्य है कि वह उसके द्‌वारा प्रस्तुत पक्षकथन को सभी सुसंगत संदेहों से परे भलीभांति स्थापित करे और जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है कि इस मामले में अभिलेख पर रखा गया साक्ष्य अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं करता है विशेष रूप से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए नकद राशि की मांग और उस मांग के परिणामस्वरूप अभियुक्तों द्‌वारा मृतका से दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित किए जाने के आरोपों का समर्थन नहीं करता है और इसके अतिरिक्त अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्‌वारा दिया गया साक्ष्य भी अभियोजन के उपरोक्त पक्षकथन का समर्थन नहीं करता है तो मामले की इन सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय की सुविचारित राय में विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्षकथन को सही ठहराकर त्रुटि की है और साथ ही उसने अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 498क तथा 304ख के अधीन सिद्धदोष ठहराकर तथा उनके विरुद्ध दंडादेश पारित करके त्रुटि की है । मात्र इस कारण से कि मृतका ने अपने विवाह के 7 वर्ष के भीतर, वर्तमान मामले में विवाह की तारीख से 170 दिन के भीतर आत्महत्या कर ली तो यह नहीं माना जा सकता कि मृतका से दहेज की मांग की गई थी और इस कारण उसने आत्महत्या की है । अभियोजन पक्ष द्‌वारा सामने रखे गए उपरोक्त पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है उच्च न्यायालय के पास कोई अकाट्‌य, विश्वसनीय और स्वीकार्य साक्ष्य उपलब्ध नहीं है, अत: उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय द्‌वारा अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और उन पर अधिरोपित दंडादेश की अभिपुष्टि करने में असमर्थ है । जैसा कि अभियोजन पक्ष द्‌वारा अभिकथित किया

गया है यदि वास्तव में ही दहेज की मांग के संबंध में मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया गया होता तो जैसा कि अभियुक्तों के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल ने प्रतिवाद किया है मृतका ने केवल उस कारण से ही आत्महत्या की होती । जब विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों/ अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध से दोषमुक्त किए जाने का विकल्प लिया है और जब अभियोजन द्वारा प्रस्तुत पक्षकथन के अनुसार अपीलार्थियों द्वारा अतिरिक्त दहेज की मांग किए जाने और इस संदर्भ में मृतका से परिणामत: दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित किए जाने की ओर संकेत करने वाली कोई विश्वसनीय सामग्री उपलब्ध नहीं है और जब यह पाया गया है कि अभियोजन साक्ष्य, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1, अभि.सा. 2 और अभि. सा. 6 ने बिना किसी समुचित आधार के दिन प्रतिदिन अपने कथन में परिवर्तन किए हैं और तद्नुसार यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 की, अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्वारा प्रस्तुत अविश्वसनीय और अस्वीकार्य साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि और उन पर अधिरोपित दंडादेशों को कायम नहीं रखा जा सकता । अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी प्रतिवाद किया है कि मृतका का भाई अदिकेसेवन (अभि. सा. 2) पुलिस उप निरीक्षक के रूप में नियोजित है और उसे पश्चात्वर्ती रूप से पुलिस निरीक्षक के पद पर प्रोन्नत भी कर दिया गया है । इस संबंध में प्रति. सा. 1 और प्रति. सा. 2 द्वारा भी अपने साक्ष्य में कथन किए गए हैं । अत: अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल के अनुसार उपरोक्त अदिकेसेवन के प्रभाव को विचार में लेते हुए अभियोजन साक्षियों विशेष रूप से अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 ने अभियुक्तों द्वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की मांग किए जाने और इसके परिणामस्वरूप मृतका से दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किए जाने संबंधी पक्षकथन तैयार किया है । जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है अभियुक्तों के विरुद्ध प्रस्तुत किए गए उपरोक्त पक्षकथन को साबित करने हेतु कोई स्पष्ट, विश्वसनीय और स्वीकार्य साक्ष्य विद्यमान नहीं हैं और इस

स्थिति को ध्यान में रखते हुए अभियुक्तों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत इस तर्क से इनकार नहीं किया जा सकता कि अदिकेसेवन ने अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 की सोच को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी ने आरडीओ को साक्षी बनाए बिना और साथ ही अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में प्रस्तुत किए जाने वाले दस्तावेजों में शव-समीक्षा रिपोर्ट को सम्मिलित न करते हुए अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल करने का विकल्प लिया है । इसके अतिरिक्त, अन्वेषण अधिकारी ने आरडीओ से शव-समीक्षा रिपोर्ट की प्राप्ति के प्रतिनिर्देश से असंगत साक्ष्य भी प्रस्तुत किया है । यह पाया गया है कि विचारण के दौरान एक प्रकीर्ण याचिका के माध्यम से आरडीओ को अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में एक अतिरिक्त साक्षी के रूप में सम्मिलित किया गया और परिणामतः उसकी परीक्षा की गई । उसके द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट को भी वर्तमान मामले में चिह्नित किया गया । अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल ने वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा किए गए अक्षम अन्वेषण के प्रतिनिर्देश से उपरोक्त तथ्यों को प्रस्तुत किया है । इस बात में कोई संदेह नहीं है कि वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा समुचित अन्वेषण नहीं किया गया है । तथापि, केवल इस कारण से उच्च न्यायालय संपूर्ण अभियोजन पक्षकथन को मिथ्या के रूप में अवधारित नहीं कर सकता । अतः विचारण न्यायालय द्वारा दी गई इस तर्कणा कि अन्वेषण के दौरान की गई त्रुटियां संपूर्ण अभियोजन पक्षकथन को प्रभावित नहीं करती हैं, को अस्वीकार नहीं किया जा सकता । उपरोक्त परिचर्चा के आधार पर जब अभियोजन पक्ष द्वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और परिणामतः मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई विश्वसनीय और स्वीकार्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सका है और मामले की इस परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए जब अभियोजन पक्षकथन गंभीर संदेहों, दोषों, असफलताओं, त्रुटियों, तथा आशंकाओं से ग्रस्त है और जब अभियोजन पक्ष उपरोक्त कारकों को नकारने हेतु कोई सुसंगत स्पष्टीकरण प्रस्तुत

करने में असफल रहा है तो इसके परिणामस्वरूप संदेह का लाभ अभियुक्तों को प्रदान किया जाना चाहिए । इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 498क तथा 304ख के अधीन अधिरोपित आरोपों को स्थापित करने में असफल रहा है और इसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को उपरोक्त अपराधों से दोषमुक्त करता है । ऊपर कथित कारणों से महालिर नीति मंदरम (त्वरित महिला न्यायालय, तिरुवल्लूर) की फाइल पर 2010 के सेशन मामला सं. 255 में अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 498क और 304ख के अधीन सिद्धदोष ठहराते हुए पारित किए गए तारीख 9 जनवरी, 2014 के निर्णय को अपास्त किया जाता है और परिणामतः अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 498क और 304ख के अधीन अपराधों से दोषमुक्त किया जाता है और तद्नुसार वर्तमान दांडिक अपील को मंजूर किया जाता है । अभियुक्तों द्वारा निष्पादित जमानत बंधपत्रों को उन्मोचित किया जाता है । अभियुक्तों द्वारा संदत्त जुर्माने की कोई रकम, यदि कोई हो, उन्हें प्रतिदत्त की जाएगी । (पैरा 19, 20, 21, 22 और 23)

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 23.

वर्तमान दांडिक अपील विद्वान् सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम, तिरुवल्लूर द्वारा 2010 के सेशन मामला सं. 255 में तारीख 9 जनवरी, 2014 को पारित निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री आर. सी. पॉल कनगाराज

प्रत्यर्थी की ओर से श्री आर. रविचन्द्रन, सरकारी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति टी. रवींद्रन – यह दांडिक अपील विद्वान् सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम, तिरुवल्लूर द्वारा 2010 के सेशन मामला सं. 255 में तारीख 9 जनवरी, 2014 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा अपीलार्थियों, अर्थात् अभियुक्त

सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 498क के अधीन सिद्धदोष ठहराया गया था तथा उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध 2 वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश पारित किया गया था और साथ ही उनमें से प्रत्येक पर 2,000/- रुपए का जुर्माना भी अधिरोपित किया गया था जिसके व्यतिक्रम में उन्हें 3 माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया था और इसके अतिरिक्त उन्हें दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन भी सिद्धदोष ठहराया गया था तथा उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध 7 वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश भी पारित किया गया था और यह निदेश दिया गया था कि उन पर अधिरोपित दंडादेश साथ-साथ चलेंगे तथा इसके अलावा अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दोषमुक्त किया गया था और इसके अतिरिक्त अभि. सां. 3 इल्लूमलाई को दंड संहिता की धारा 498क, धारा 306 और धारा 304ख के अधीन दोषमुक्त किया गया था और अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 ने उक्त दोषसिद्धि और दंडादेश को इस अपील द्वारा चुनौती दी है ।

2. अनावश्यक ब्यौरों से बचते हुए अभियोजन पक्षकथन के अनुसार अभियुक्त सं. 1 और मृतका कोटेश्वरी के बीच तारीख 6 अक्तूबर, 2008 को विवाह अनुष्ठापित हुआ था और विवाह के पश्चात् अभियुक्त सं. 1, मृतका कोटेश्वरी, अभियुक्त सं. 1 की माता अर्थात् अभियुक्त सं. 2 और अभियुक्त सं. 1 का चाचा, अर्थात् अभियुक्त सं. 3 संयुक्त कुटुम्ब के रूप में ओथाप्पाई ग्राम में एक साथ निवास कर रहे थे और अभियोजन पक्ष द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि तारीख 24 मार्च, 2009 को या उससे पूर्व अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने मृतका कोटेश्वरी के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया, उसका उत्पीड़न किया तथा उसके साथ शारीरिक और मानसिक रूप से दुर्व्यवहार किया जिससे उसे इस बात हेतु मजबूर किया जा सके कि वह अपने माता-पिता से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि लेकर आए और अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 के ये स्वेच्छापूर्ण क्रूर कार्य इस रीति में

कारित किए गए जिससे मृतका फांसी लगाकर आत्महत्या करने हेतु उत्प्रेरित हुई और तद्नुसार यह अभिकथन किया गया है कि अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने स्वैच्छिक रूप से ऊपर किए गए कथन के अनुसार मृतका के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार करके उसे आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया और इस प्रकार मृतका ने उपरोक्त निवास-स्थान पर तारीख 24 मार्च, 2009 को पूर्वाह्न लगभग 11.00 बजे स्वयं को फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली और इस प्रकार अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने मृतका कोटेश्वरी की दहेज मृत्यु कारित की है क्योंकि मृतका कोटेश्वरी के साथ उसकी मृत्यु से तुरंत पूर्व दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की अवैध मांग को लेकर क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया गया था और चूंकि ऊपर किए गए कथन के अनुसार उपरोक्त क्रूरतापूर्वक व्यवहारों ने मृतका को अभियुक्त सं. 1 के साथ विवाह के 7 वर्ष के भीतर आत्महत्या करने हेतु मजबूर किया इसलिए यह अभिकथन किया गया है कि अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने दंड संहिता की धारा 498क, धारा 306 और धारा 304ख के अधीन दंडनीय अपराधों को कारित किया है ।

3. अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए गए उपरोक्त पक्षकथन को जिला मुंसिफ-सह-न्यायिक मजिस्ट्रेट, उथ्थुकोट्टई द्वारा 2009 के पी. आर. सी. मामला सं. 16 के रूप में फाइल पर लाया गया और अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए दस्तावेजों की प्रतियों को अभियुक्त को, उसके न्यायालय में उपस्थित होने पर उपलब्ध कराए जाने के पश्चात् तथा यह टिप्पणी करते हुए कि 'अभियुक्तों के विरुद्ध बनाया गया मामला' अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचार में लिया जाना है, पूर्वोक्त जिला मुंसिफ-सह-जिला मजिस्ट्रेट ने अभियुक्तों को विचारण हेतु प्रधान सेशन न्यायाधीश, तिरुवल्लूर को सौंप दिया और इस प्रकार इस मामले को वर्ष 2010 के सेशन मामला सं. 255 के रूप में फाइल पर लाया गया और उसके पश्चात् यह मामला विचारण हेतु सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम, तिरुवल्लूर को अंतरित कर दिया गया ।

4. सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम ने अभियोजन पक्ष

द्वारा अवलंब लिए गए अभिलेखों का परिशीलन करने और लोक अभियोजक द्वारा दी गई दलीलों को तथा साथ ही अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की गई प्रतिरक्षा पर विचार करने के पश्चात् यह टिप्पणी करते हुए कि अभियुक्तों के विरुद्ध आगे कार्यवाहियां करने हेतु पर्याप्त आधार विद्यमान हैं, अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 498क, धारा 306 और धारा 304ख के अधीन आरोप विरचित किए तथा अभियुक्तों से उक्त आरोपों के प्रतिनिर्देश से प्रश्न किए जाने पर उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया तथा विचारण का दावा किया और इस प्रकार इस मामले में विचारण संबंधी आगे की कार्यवाहियां की गईं ।

5. अभियोजन पक्षकथन को साबित करने के लिए अभियोजन ने अभि. सा. 1 से अभि. सा. 13 की परीक्षा की तथा प्रदर्श पी-1 से प्रदर्श पी-10 को चिह्नित किया और इसके अतिरिक्त किसी एमओ को प्रदर्शित नहीं किया गया । अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के समाप्त हो जाने पर अभियुक्तों की उनके विरुद्ध विद्यमान उन्हें अपराध में संलिप्त करने वाले अभियोजन साक्षियों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों के प्रतिनिर्देश से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा की गई और अभियुक्तों ने उक्त सभी साक्ष्यों से इनकार किया । अभियुक्तों के अनुसार उन्होंने अभियोजन पक्ष द्वारा यथा अधिकथित अपराधों को कारित नहीं किया है और यह मामला मिथ्या रूप से उन्हें फंसाने के लिए तैयार किया गया है और उन्होंने यह भी कथन किया कि मृतका ने अपनी अनेक शारीरिक बीमारियों के कारण आत्महत्या की थी । अभियुक्तों की ओर से प्रति. सा. 1 से प्रति. सा. 4 की परीक्षा की गई तथा प्रदर्श डी-1 से प्रदर्श डी-3 को चिह्नित किया गया । अभियुक्तों की ओर से भी किसी एमओ को चिह्नित नहीं किया गया है ।

6. मौखिक और दस्तावेजी दोनों प्रकार की ऊपर कथित सामग्रियों को जिसे अभियोजन पक्ष और साथ ही अभियुक्तों द्वारा अभिलेख पर लाया गया है, विश्लेषण करने के पश्चात् विचारण न्यायालय, अर्थात् सेशन न्यायाधीश, महालिर नीति मंदरम ने अभियुक्त सं. 1 और

अभियुक्त सं. 2 को सिद्धदोष ठहराते हुए उनके विरुद्ध ऊपर कथित किए गए अनुसार दंडादेश पारित किया जबकि अभियुक्त सं. 3 को उसके विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया और तद्नुसार अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 ने उनकी इस प्रकार आक्षेपित दोषसिद्धि तथा उन पर अधिरोपित दंडादेशों के विरुद्ध वर्तमान अपील फाइल की है ।

7. इस मामले में न्यायालय के समक्ष रखी गई सामग्रियों से यह पता चलता है कि प्रथम अभियुक्त (अभियुक्त सं. 1) और मृतका कोटेश्वरी के बीच तारीख 6 अक्तूबर, 2008 को विवाह अनुष्ठापित हुआ था और उक्त विवाह का आयोजन प्रति. सा. 1 इल्लुमलाई और अभि. सा. 5 दिल्ली बाबू द्वारा आयोजित किया गया था और यह भी उल्लेखनीय है कि विवाह के पश्चात् अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 तथा मृतका ओथाप्पई स्थित अभियुक्त सं. 3 के घर में निवास कर रहे थे और यह भी उल्लेख किया गया है कि मृतका ने तारीख 24 मार्च, 2009 को पूर्वाह्न लगभग 11.00 बजे उपरोक्त निवास स्थान पर स्वयं को फांसी लगा ली थी जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई । जिसके पश्चात् उसके पिता, अर्थात् रामालिंगम (अभि. सा. 1) ने शिकायत दर्ज कराई जिसके आधार पर इस मामले में कार्रवाई आरंभ की गई ।

8. अभि. सा. 1 द्वारा दर्ज की गई शिकायत प्रदर्श पी-1 के रूप में है । प्रदर्श पी-1 के परिशीलन पर यह पता चलता है कि अभि. सा. 1 ने उसमें यह अभिकथन किया है कि उसने अभियुक्त सं. 1 और मृतक कोटेश्वरी के विवाह के समय दहेज के रूप में आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए नकद राशि का संदाय किया था । अभि. सा. 1 ने प्रदर्श पी-1 में यह अभिकथन नहीं किया है कि अभियुक्त ने उपर्युक्त दहेज की रकम विवाह के समय दिए जाने का अनुरोध किया था । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त द्वारा सामने रखी गई प्रतिरक्षा का परिशीलन करने पर यह देखा जा सकता है कि अभियुक्त ने अभि. सा. 1 द्वारा प्रस्तुत किए गए इस प्रकथन को गंभीर रूप से चुनौती दी है । अभियुक्त के अनुसार विवाह के समय आभूषणों की

केवल 20 स्वर्ण मुद्राएं मृतका को दी गई थी और वैसी ही 5 स्वर्ण मुद्राएं प्रथम अभियुक्त को दी गई थी तथा इसके अतिरिक्त उसने यह भी कथन किया है कि विवाह के समय केवल 50,000/- रुपए की राशि का संदाय किया गया था जिसमें से 45,000/- रुपए एक दुपहिया यान के क्रय के लिए तथा 5,000/- रुपए अभियुक्त सं. 1 द्वारा उसके वस्त्रों के क्रय के लिए प्रदान किए गए थे । अत: अभियुक्त के अनुसार अभियोजन का यह पक्षकथन एक मिथ्या कहानी है कि अभि. सा. 1 ने विवाह के समय आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि प्रदान की थी और इस कहानी को केवल वर्तमान मामले के प्रयोजनों हेतु गढ़ा गया है । ऊपर किए गए कथन के अनुसार यदि अभियोजन के उपरोक्त पक्षकथन को सत्य मान भी लिया जाए तो अभियोजन का पक्षकथन यह नहीं है कि विवाह के समय अभि. सा. 1 को अभियुक्त सं. 1 तथा अभियुक्त सं. 3 द्वारा उपरोक्त आभूषणों तथा नकदी का संदाय करने हेतु मजबूर किया गया था । अभियोजन पक्षकथन का सार यह है कि अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग कर रहे थे और वे उसे उक्त रकम को अपने माता-पिता से लेने हेतु मजबूर कर रहे थे और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने उसके साथ दुर्व्यवहार किया तथा उसका उत्पीड़न किया और यद्यपि मृतका के माता-पिता और अन्य व्यक्तियों ने मृतका और अभियुक्तों को यह दिलासा देकर शांत किया था कि वे उन्हें उपरोक्त रकम का संदाय अपनी भूमि का विक्रय करके करेंगे और इस प्रकार उनके अनुसार अभियुक्त मृतका के माता-पिता के उपरोक्त आश्वासन से संतुष्ट नहीं हुए थे और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने मृतका के साथ शारीरिक और मानसिक रूप से किए जा रहे अपने दुर्व्यवहार और उत्पीड़न को जारी रखा तथा इस प्रकार अभियोजन पक्ष के अनुसार कोई अन्य विकल्प न देखते हुए मृतका ने तारीख 24 मार्च, 2005 को पूर्वाह्न लगभग 11.00 बजे स्वयं को फांसी लगाकर आत्म-हत्या कर ली जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई तथा इस प्रकार यह पक्षकथन प्रस्तुत किया गया है कि अभियुक्तों ने मृतका को

अपने माता-पिता से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की मांग करते हुए उसके साथ दुर्व्यवहार किया और उसका उत्पीड़न किया तथा इस प्रकार उसकी दहेज मृत्यु कारित की एवं अपने उक्त दुर्व्यवहार से उन्होंने मृतका को आत्महत्या करने हेतु दुष्प्रेरित किया और इस प्रकार उन्होंने उनके विरुद्ध अभिकथित अपराधों को कारित किया ।

9. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि अभियोजन के इस पक्षकथन कि मृतका के माता-पिता ने अभियुक्त सं. 1 और मृतका कोटेश्वरी के बीच अनुष्ठापित हुए विवाह के समय दहेज के रूप में आभूषण की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि का संदाय किया था, को अभियुक्त द्वारा गंभीरता से चुनौती दी गई है । अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए गए उपरोक्त पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से उसको कायम रखने के लिए अभिलेख पर कोई स्वीकार्य सामग्री उपलब्ध नहीं है । अब अभि. सा. 1 के अनुसार उसने विवाह के समय उपरोक्त आभूषणों और नकद राशि का संदाय करने के लिए अपनी भूमि का विक्रय किया था और इस प्रकार अभिप्राप्त हुई भूमि की विक्रय कीमत से उसने आभूषणों का क्रय किया था तथा विवाह के समय उक्त आभूषणों के साथ अभियुक्तों को नकद राशि का संदाय किया था और अभिलेख पर लाई गई सामग्री को ध्यान में रखते हुए अभि. सा. 1 के अनुसार भूमि के विक्रय आदि के प्रतिनिर्देश से उसके पास दस्तावेज मौजूद हैं और उसने उन दस्तावेजों को आरडीओ, जिसने मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की थी और साथ ही प्रत्यर्थी पुलिस को भी उपलब्ध कराया था । तथापि, उस समय जब अभियुक्तों ने विशिष्ट रूप से अभियोजन के उपरोक्त पक्षकथन को संपूर्ण रूप से विवादित ठहराया है तो अभियोजन पक्ष को इस बात को स्थापित करने के लिए कि मृतका के माता-पिता के पास विवाह के समय दहेज के रूप में आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त साधन थे, अपने पक्षकथन के समर्थन में अभिलेख पर उपरोक्त दस्तावेजों को प्रस्तुत करने का प्रयास करना चाहिए था । तथापि, अभियोजन पक्ष को सर्वोत्तम रूप से ज्ञात कारणों से अभियोजन

पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में उपरोक्त दस्तावेजों को अभिलेख पर रखने का कोई प्रयास नहीं किया है ।

10. इस संबंध में जैसा कि अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल द्वारा सही तर्क प्रस्तुत किया गया है कि अभियुक्तों द्वारा प्रस्तुत किया गया प्रदर्श पी-1 करार महत्वपूर्ण हो जाता है । यह पाया गया है कि वर्तमान मामले के संस्थान के पश्चात् एक ओर मृतका के माता-पिता तथा दूसरी ओर अभियुक्तों द्वारा ग्राम पंचायतरों की उपस्थिति में एक करार किया गया था और तद्नुसार यह पाया गया है कि अभियुक्त ने मृतका के माता-पिता द्वारा विवाह के समय उसे दिए गए आभूषणों और नकदी को वापस उन्हें सौंप दिया था और यह भी उल्लेखनीय है कि मृतका के माता-पिता, अर्थात् अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 और साथ ही मृतका के भाई दुरईमुरुगन (अभि. सा. 6) ने प्रदर्श डी-1 के रूप में चिह्नित करार जिसमें दोनों पक्षकारों के बीच आभूषणों और नकदी को वापस किए जाने के प्रतिनिर्देश से करार का निष्पादन किया गया है, के संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया है । वस्तुतः अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य के दौरान स्पष्ट रूप से इस तथ्य को स्वीकार किया है कि प्रदर्श डी-1 के रूप में चिह्नित करार के अनुसार उन्हें उनके द्वारा विवाह के समय अभियुक्तों को दिए गए आभूषण और नकदी वापस प्राप्त हो गई है और उक्त करार उनके द्वारा स्वैच्छिक रूप से पंचायतरों की उपस्थिति में निष्पादित किया गया था और प्रदर्श डी-1 के निष्पादन के पश्चात् अभियुक्तों द्वारा अब उन्हें कोई और आभूषण या नकद का संदाय किया जाना अपेक्षित नहीं है । अभि. सा. 2, मृतका की माता और अभि. सा. 6, मृतका के भाई ने भी इस कथन का समर्थन किया है । अतः जब यह पाया गया है कि मामले के संस्थित होने के पश्चात् पक्षकारों ने स्वैच्छिक रूप से मृतका के माता-पिता द्वारा विवाह के समय प्रदान किए गए आभूषणों और नकद राशि को लौटाए जाने संबंधी करार करने का विकल्प लिया है तो इससे हमें यह देखना होगा कि क्या प्रदर्श डी-1 विवाह के समय मृतका के माता-पिता द्वारा अभियुक्तों को आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं तथा 5,00,000/- रुपए की नकद राशि का दहेज के रूप में संदाय किए जाने संबंधी पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से अभियोजन पक्ष

की कहानी का समर्थन करता है । तथापि, अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्क के अनुसार प्रदर्श डी-1 अभियोजन के पूर्वोक्त पक्षकथन के लिए पूर्ण रूप से घातक है । प्रदर्श डी-1 में अंतर्विष्ट प्रकथनों के परिशीलन से यह पता चलता है कि मृतका के माता-पिता ने विवाह के समय अभिकथित रूप से दिए गए कुछ आभूषणों और 50,000/- रुपए की राशि को वापस लेने का विकल्प लिया है और इसलिए जब मृतका के माता-पिता ने प्रदर्श डी-1 के अनुसार अभियुक्तों से 5,00,000/- रुपए की नकद राशि, जिसे कि अभिकथित रूप से उनके द्वारा विवाह के समय अभियुक्तों को उपलब्ध कराया गया था, के स्थान पर केवल 50,000/- रुपए की राशि को प्राप्त करने का विकल्प लिया है और अभियोजन इस संबंध में कोई संतोषप्रद स्पष्टीकरण उपलब्ध कराने में असमर्थ रहा है कि जब मृतका के माता-पिता ने विवाह के समय 5,00,000/- रुपए का संदाय किया था तो उन्होंने अभियुक्तों के साथ प्रदर्श डी-1 के रूप में चिह्नित करार करते समय 5,00,000/- रुपए की राशि वापस लेने का विकल्प क्यों नहीं लिया । अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल द्वारा सामने रखे गए इस प्रतिवाद के प्रतिनिर्देश से अभियोजन पक्ष ने और साथ ही अभि. सा. 1 द्वारा किए गए प्रकथन के अनुसार यह कथन किया है कि यद्यपि उन्होंने अभियुक्तों से प्रदर्श डी-1 के अधीन 5,00,000/- रुपए नकद राशि प्राप्त की थी किंतु चूंकि प्रदर्श डी-1 में 5,00,000/- रुपए की राशि को प्राप्त किए जाने का उल्लेख करने को अपराध के रूप में माना जाता और इससे अन्य समस्याएं भी उद्भूत हो सकती थीं इसलिए उन्होंने प्रदर्श डी-1 के रूप में चिह्नित उक्त करार में 5,00,000/- रुपए की राशि के बजाय केवल 50,000/- रुपए की राशि प्राप्त करने का उल्लेख किया है । तथापि, उपरोक्त तर्क पूर्णतया अस्वीकार्य है । प्रदर्श डी-1, अर्थात् करार के निष्पादन से काफी पूर्व अभि. सा. 1 ने प्रदर्श पी-1 के रूप में चिह्नित शिकायत दर्ज की थी जिसमें उसने यह अभिकथन किया था कि उसने अपनी पुत्री और अभियुक्त सं. 1 के विवाह के समय आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि दहेज के रूप में दी थीं और यदि शिकायत में किए गए इस प्रकथन में किंचित सत्य भी

विद्यमान होता तो जिस समय पक्षकारों ने स्वैच्छिक रूप से विवाह के समय दिए गए आभूषणों और नकद को लौटाए जाने के प्रतिनिर्देश से करार का निष्पादन किया था तो यदि वास्तव में ही मृतका के माता-पिता ने दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि का संदाय किया होता तो उसे अवश्य ही प्रदर्श डी-1 के रूप में चिह्नित करार सम्मिलित किया गया होता तथा दूसरी ओर उन्होंने अभियुक्त द्वारा किए गए अभिकथन के अनुसार स्वैच्छिक रूप से 50,000/- रुपए की नकद राशि स्वीकार की है और तद्नुसार यह प्रतीत होता है कि उन्होंने डी-1 के अधीन केवल उक्त रकम को वापस लेने का विकल्प लिया है और उन्होंने प्रदर्श डी-1 में 50,000/- रुपए की नकद राशि के उल्लेख के संबंध में कोई विरोध दर्ज नहीं किया है । अत: यह कहना कि उन्होंने प्रदर्श डी-1 में 5,00,000/- रुपए की बजाय 50,000/- रुपए का उल्लेख इसलिए किया क्योंकि उसे एक अपराध के रूप में माना जाता, अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया मिथ्या कथन है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता विशेष रूप से उस समय जब अभि. सा. 1 ने पहले ही विवाह के समय दहेज के रूप में आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि दिए जाने संबंधी शिकायत दर्ज की थीं जो प्रदर्श पी-1 के रूप में दर्ज है । अत: विचारण न्यायालय द्वारा इस तथ्य को दी गई सहमति को किसी भी रीति में स्वीकार नहीं किया जा सकता कि अभि. सा. 1 ने ऊपर बताए गए कारणों से प्रदर्श डी-1 में 5,00,000/- रुपए की बजाय 50,000/- रुपए की राशि का उल्लेख किया है और इसलिए जैसा कि अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल द्वारा सही रूप से तर्क प्रस्तुत किया गया है अभियोजन का पक्षकथन विशेष रूप से मृतका के माता-पिता द्वारा प्रस्तुत की गई यह कहानी कि उन्होंने विवाह के समय दहेज के रूप में आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि प्रदान की थी, स्वीकार्य सामग्री नहीं है । दूसरी ओर, अभियोजन के उपरोक्त पक्षकथन के लिए संबंधित पक्षकारों के बीच स्वैच्छिक रूप से निष्पादित करार (प्रदर्श डी-1) पूर्णतया घातक सिद्ध हुआ है ।

11. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि यदि यह मान भी

लिया जाए कि अभियोजन का उपरोक्त पक्षकथन सत्य है तो भी अभियोजन का सारवान् पक्षकथन यह नहीं है कि अभियुक्तों ने विवाह के समय मृतका के माता-पिता को ऊपर कथित दहेज की वस्तुओं की व्यवस्था करने हेतु मजबूर किया था और दूसरी ओर यह पाया गया है कि ऊपर कथित वस्तुएं स्वैच्छिक रूप से मृतका के माता-पिता द्वारा उसके विवाह के समय उपलब्ध कराई गई थी । अभियोजन का पक्षकथन यह भी नहीं है कि अभियुक्त मृतका के साथ आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि दहेज के रूप में दिए जाने हेतु दुर्व्यवहार कर रहे थे और उसका उत्पीड़न कर रहे थे । दूसरी ओर अभियोजन पक्षकथन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि अभियुक्तों ने 5,00,000/- रुपए की और अधिक नकद राशि की मांग को लेकर मृतका के साथ दुर्व्यवहार किया, उसका प्रपीड़न तथा उत्पीड़न किया और इस प्रकार उन्होंने उनके विरुद्ध अभिकथित अपराधों को कारित किया । अतः हमें यह देखना होगा कि क्या अभियोजन का उपरोक्त पक्षकथन कि अभियुक्त दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की मांग को लेकर मृतका के साथ दुर्व्यवहार कर रहे थे तथा उसका उत्पीड़न कर रहे थे, सत्य है और उसे अभियोजन पक्ष द्वारा सुसंगत संदेह से परे स्थापित किया गया है ।

12. प्रारंभ में अभियुक्तों के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174(3) के अधीन अप्राकृतिक मृत्यु के रूप में यह मामला संस्थित किया गया था, तद्नुसार यह पाया गया है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को विधि के अनुसार शव-समीक्षा का संचालन करने हेतु आरडीओ को अग्रेषित किया गया था । इस मामले में बालासुब्रामणियन, आरडीओ (अभि. सा. 13) ने तारीख 24 मार्च, 2009 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने पर शव-समीक्षा की थी और शव-समीक्षा के अनुक्रम में यह तथ्य सामने आया है कि उसने मृतका के माता-पिता, मृतका के भाई और अन्य नातेदारों, अर्थात् दिल्ली बाबू (अभि. सा. 5) और एक रवि नामक व्यक्ति की भी परीक्षा की तथा साथ ही उसने अभियुक्त सं. ए-1 और अभियुक्त सं. ए-2 तथा अभियुक्त सं. ए-1 के पिता और अभियुक्त सं. ए-2 के पति मुन्नुसामी की भी परीक्षा की और इसके अतिरिक्त उसने पंचायतरों

की भी परीक्षा की थी । न्यायालय के अभिलेख के अनुसार इन सभी व्यक्तियों की परीक्षा आरडीओ द्वारा तारीख 24 मार्च, 2009 को की गई । आरडीओ की शव-समीक्षा रिपोर्ट को प्रदर्श पी-10 के रूप में चिह्नित किया गया है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है मृतका के पिता अभि. सा. 1 के तारीख 24 मार्च, 2009 को शिकायत (प्रदर्श-पी-1) दर्ज की थी । प्रदर्श पी-1 के अधीन अभि. सा. 1 ने यह प्रकथन किया है कि अभियुक्त ने दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की मांग की थी और इस कारण से उसने, उसके तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा यह आश्वासन दिए जाने के बावजूद भी कि उक्त राशि का संदाय उसे कर दिया जाएगा, उसकी पुत्री को प्रताड़ित तथा उसका उत्पीड़न किया तथा इस प्रकार उन्होंने उसकी पुत्री को आत्महत्या करने हेतु मजबूर किया । प्रदर्श पी-1 में इस बात का कोई उल्लेख नहीं है कि विवाह की तारीख के पश्चात् किस समय अभियुक्तों ने मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की थी और उक्त मांग को लेकर उन्होंने उसे प्रताड़ित किया और उसके साथ दुर्व्यवहार किया । प्रदर्श पी-1 में अस्पष्ट रूप से यह प्रकथन किया गया है कि विवाह के पश्चात् अभियुक्तों ने मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की थी और उक्त मांग को लेकर उन्होंने उसे प्रताड़ित किया और उसके साथ दुर्व्यवहार किया । यदि प्रदर्श पी-1 में यथा अभिकथित अभि. सा. 1 का कथन सत्य है तो आरडीओ द्वारा मृतका की मृत्यु के प्रतिनिर्देश से की गई पूछताछ में, जैसा कि अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल द्वारा सही रूप से तर्क प्रस्तुत किया गया है, अभि. सा. 1 और साथ ही मृतका की माता और भाई तथा अन्य व्यक्तियों को शव-समीक्षा के समय यह तथ्य प्रकट करना चाहिए था । दूसरी ओर, मृतका के माता-पिता, अर्थात् रामालिंगम और भानुमति तथा मृतका के भाई, अर्थात् दुरईमुरुगन, मृतक के नातेदारों, अर्थात् दिल्ली बाबू और रवि द्वारा किए गए कथनों के परिशीलन से यह तथ्य सामने आता है कि उनमें किसी ने भी आरडीओ के समक्ष अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग किए जाने और इस कारण से उसे

प्रताड़ित तथा उसके साथ दुर्व्यवहार किए जाने के तथ्य को प्रकट नहीं किया है । अतः अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल द्वारा सही रूप से यह प्रतिवाद किया गया है कि अभियुक्तों ने दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग कभी भी सामने नहीं रखी और साथ ही उन्होंने इस कारण से मृतका के साथ किसी भी रीति में दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित नहीं किया, तद्नुसार उपरोक्त चर्चा से यह तथ्य सामने आता है कि मृतका की ओर से ऐसे किसी भी व्यक्ति ने जिसकी आरडीओ द्वारा परीक्षा की गई, आरडीओ के समक्ष पूर्वोक्त पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से कोई अभिसाक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है । आरडीओ, बालासुब्रामणियन, जिसकी अभि. सा. 13 के रूप में परीक्षा की गई है, ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह परिसाक्ष्य दिया है कि उसके द्वारा परीक्षा किए गए पंचायतरों ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि प्रथम अभियुक्त और मृतका कोटेश्वरी के बीच कोई मतभेद नहीं थे और वे शांति से प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे और उन्होंने केवल यह राय व्यक्त की थी कि संभवतः मृतका ने इस कारण से आत्महत्या की है कि उसके द्वारा एक पृथक् निवास स्थान की व्यवस्था के अनुरोध पर विचार नहीं किया गया । इस प्रकार, आरडीओ द्वारा परीक्षा किए गए पंचायतरों ने यह राय अभिव्यक्त नहीं की है कि अभियुक्तों की ओर से मृतका से किसी दहेज की मांग की गई और साथ ही उन्होंने इस संबंध में भी कोई अभिसाक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि अभियुक्तों द्वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग के कारण अभियुक्तों ने मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 13 ने अपने साक्ष्य के दौरान की गई अपनी प्रतिपरीक्षा में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अभि. सा. 2, मृतका की माता ने अभियुक्तों द्वारा विवाह के संबंध में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त रकम की मांग किए जाने के संबंध में कोई कथन नहीं किया है और साथ ही उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने दहेज की मांग के कारण अभियुक्तों ने मृतका के साथ किसी भी प्रकार का कोई दुर्व्यवहार किया था और इसके अतिरिक्त उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि अभि.

सा. 3, अभि. सा. 4 और अभि. सा. 5 ने जिनकी उसके द्‌वारा परीक्षा की गई थी, कभी भी यह कथन नहीं किया कि अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की गई थी और साक्षी रवि ने भी अपनी परीक्षा के दौरान ऐसा कोई कथन नहीं किया कि अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की गई थी तथा इसके अतिरिक्त उसने यह भी कथन किया है कि मृतका के माता-पिता अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने उसके समक्ष अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग किए जाने के संबंध में कोई कथन नहीं किया था और इसलिए जब मृतका की ओर से आरडीओ द्‌वारा परीक्षा किए गए किसी भी साक्षी ने अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग किए जाने और उसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई कथन नहीं किया है और इस प्रकार जब अभियोजन पक्ष इस संबंध में कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण उपलब्ध कराने में असफल रहा है कि मृतका के माता-पिता, भाई और अन्य नातेदारों ने आरडीओ के समक्ष अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग किए जाने और उसके परिणामस्वरूप उसके साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई कथन क्यों नहीं किया है, इसलिए तद्‌नुसार अभियुक्तों के विद्‌वान् काउंसेल द्‌वारा प्रस्तुत किया गया यह प्रतिवाद सत्य प्रतीत होता है कि विवाह के पश्चात् अभियुक्तों के द्‌वारा 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की कोई मांग नहीं की गई और इसलिए इस कारणवश अभियुक्तों द्‌वारा मृतका से दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित करने का प्रश्न ही नहीं उठता और क्योंकि आरडीओ द्‌वारा की गई शव-समीक्षा जांच के समय मृतका के माता-पिता, भाई और अन्य नातेदारों ने दहेज की उक्त मांग के संबंध में कोई कथन नहीं किया था और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है जब आरडीओ ने स्पष्ट रूप से उक्त तथ्य को स्वीकार किया है और जब अभियोजन पक्षकथन के अनुसार अभियुक्तों ने दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की राशि की मांग करते हुए मृतका के साथ

दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया और जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है कि अभियोजन का यह पक्षकथन कि मृतका के माता-पिता ने विवाह के समय दहेज के रूप में आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं और 5,00,000/- रुपए की नकद राशि अभियुक्तों को प्रदान की थी, सत्य नहीं है और उसे प्रदर्श डी-1 के माध्यम से असत्य साबित कर दिया गया है तो इन सब तथ्यों को एकसाथ जोड़कर देखने पर यह प्रतीत होता है कि अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए गए इस पक्षकथन कि अभियुक्तों ने दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की थी और इस कारण से उन्होंने मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किया था, किसी भी प्रकार से स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

13. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, प्रदर्श पी-1 में अभि. सा. 1 ने अत्यधिक अस्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया है कि अभियुक्तों ने विवाह के पश्चात् दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की थी और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने उसकी पुत्री के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया था । प्रदर्श पी-1 में इस बात का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि विवाह के पश्चात् उन्होंने किस तारीख से दहेज के रूप में उक्त राशि की मांग सामने रखी थी । दुरई-मुरुगन (अभि. सा. 6), मृतका के भाई ने अन्वेषण अधिकारी के समक्ष दिए गए अपने धारा 161 के बयान में स्पष्ट रूप से इस तथ्य को स्वीकार किया है कि मृतका और प्रथम अभियुक्त विवाह के पश्चात् 3 माह तक प्रसन्नतापूर्वक एक साथ निवास कर रहे थे । अभि. सा. 6 द्वारा अन्वेषण के समय दिए गए उक्त बयान के संबंध में अन्वेषण अधिकारी, जिसकी अभि. सा. 12 के रूप में परीक्षा की गई है, ने पूर्ण रूप से अपना समर्थन प्रस्तुत किया है । अत: अभि. सा. 6 का यह अभिकथन कि प्रथम अभियुक्त और मृतका विवाह की तारीख से ही प्रसन्नतापूर्वक एक साथ निवास नहीं कर रहे थे और अभियुक्त द्वारा उस दौरान मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया जा रहा था, विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता और ऐसा प्रतीत होता है कि अभि. सा. 6 द्वारा अपने कथन में पश्चात्वर्ती रूप से संशोधन किए गए हैं । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 6 ने इस पक्षकथन को इस प्रकार प्रस्तुत

किया है मानो मृतका को अग्निदाह संबंधी क्षतियां अभियुक्तों द्वारा दहेज की मांग के चलते पहुंचाई गई हैं । अभि. सा. 2 ने भी शव-समीक्षा के समय इसी प्रकार का कथन किया है । इसके अतिरिक्त, विचारण के दौरान अभि. सा. 2 ने इस संबंध में कोई कथन प्रस्तुत नहीं किया । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है अन्वेषण अधिकारी के समक्ष दिए गए अभि. सा. 6 के कथन के अनुसार अभियुक्त और मृतका विवाह की तारीख से 3 माह की अवधि तक प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवनयापन कर रहे थे और उसके पश्चात् ही सभी समस्याएं उत्पन्न हुईं । यह पाया गया है कि मृतका ने तारीख 24 मार्च, 2009, अर्थात् विवाह की तारीख से 170 दिन के भीतर आत्महत्या कर ली थी । जैसा कि अभि. सा. 6 द्वारा परिसाक्ष्य दिया गया है और अभि. सा. 2 ने भी शव-समीक्षा के समय इस प्रभाव का कथन किया है यदि वास्तव में ही मृतका को अग्निदाह संबंधी क्षतियां पहुंचाई गई थीं तो निश्चित ही मृतका के शव पर अग्निदाह संबंधी क्षतियां पाई जानी चाहिए थीं । किंतु शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर, जिसकी अभि. सा. 9 के रूप में परीक्षा की गई है, ने यह राय व्यक्त की है कि ऐसा प्रतीत होता है कि मृतका की मृत्यु फांसी लगाए जाने के कारण दम घुट जाने के कारण हुई है । शव-परीक्षा प्रमाणपत्र को प्रदर्श पी-4 के रूप में चिह्नित किया गया है तथा शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर की अंतिम राय को प्रदर्श पी-5 के रूप में चिह्नित किया गया है । शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर (अभि. सा. 9) ने स्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया है कि मृतका के शरीर पर ग्रीवा के पास पाए गए पट्टी के चिह्न के अलावा उसे मृतका के शव पर कोई बाह्य क्षति दिखाई नहीं दी । अतः इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि मृतका को फांसी लगाने के कारण पट्टी के चिह्न के अलावा कोई अन्य बाह्य क्षति नहीं की हुई थी । यदि वास्तव में ही अभियुक्तों ने मृतका को अग्निदाह की क्षतियां पहुंचाई होती, जैसा कि अभि. सा. 6 और अभि. सा. 2 द्वारा अभिकथन किया गया है, तो किसी न किसी रूप में शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर ने उन क्षतियों को नोट किया होता और उनके संबंध में प्रदर्श पी-4 के रूप में चिह्नित अपने शव-परीक्षा प्रमाणपत्र में उल्लेख किया होता, इसी प्रभाव का प्रतिवाद अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत किया गया है तथा शव-परीक्षा करने वाले

डाक्टर को मृतका के शव पर फांसी लगाने के कारण ग्रीवा पर हुए पट्टी के चिह्न के अलावा कोई बाह्य क्षति नहीं दिखाई दी । पूर्वोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय द्वारा दी गई इस तर्कणा का समर्थन नहीं किया जा सकता कि शव-परीक्षा किए जाने तक अग्निदाह संबंधी क्षतियां भर गई होंगी और दूसरी ओर अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल द्वारा सही रूप से यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि चूंकि शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर को मृतका के शव पर अग्निदाह के तत्समान कोई क्षति दिखाई नहीं दी इसलिए मृतका को अभियुक्तों द्वारा कोई अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित नहीं की गईं जैसा कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्वारा अभिकथन किया गया है । इसके अतिरिक्त, यह पाया गया है कि अभि. सा. 6 ने विशिष्ट रूप से अन्वेषण अधिकारी के समक्ष दिए गए अपने धारा 161 के बयान के दौरान दहेज की मांग के संबंध में अभियुक्तों द्वारा मृतका को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित करने संबंधी कोई कथन नहीं किया है । उसने पहली बार ऐसा कथन विचारण न्यायालय के समक्ष किया है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है अभि. सा. 2 ने भी विचारण के दौरान अभियुक्तों द्वारा मृतका को अग्निदाह संबंधी क्षतियां पहुंचाए जाने के संबंध में कोई अभिसाक्ष्य नहीं दिया है और उसने इस प्रभाव का प्रकथन केवल शव-समीक्षा के दौरान किया था । अतः अभियोजन के इस पक्षकथन कि अभियुक्तों ने दहेज की राशि की मांग के संबंध में मृतका को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित की थीं, को किसी भी प्रकार से स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

14. वर्तमान मामले में दांडिक विधि के अधीन प्रक्रिया उस समय आरंभ हुई जब अभि. सा. 1 द्वारा शिकायत (प्रदर्श पी-1) दर्ज की गई । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार अभियुक्तों ने दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग की थी और इस कारणवश उन्होंने मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया और इस प्रकार उन्होंने उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों के अनुसार अपराध कारित किए । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है अभियोजन पक्ष की ओर से इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं कराया गया है कि विवाह की तारीख के पश्चात् कब से अभियुक्त मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग कर रहे थे । इस संबंध में

किसी भी अभियोजन साक्षी ने शव-समीक्षा के समय आरडीओ के समक्ष कोई प्रकथन नहीं किया है । यहां तक कि विचारण के दौरान भी अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने स्पष्ट रीति में विचारण न्यायालय के समक्ष इस प्रभाव का कोई कथन नहीं किया कि अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग की जा रही थी और इसके परिणामस्वरूप वे मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित कर रहे थे । उन्होंने अत्यधिक अस्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्तों द्वारा दहेज की मांग की जा रही थी । इसके अतिरिक्त उन्होंने अभियोजन के इस विनिर्दिष्ट पक्षकथन कि अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग की जा रही थी और इसके परिणामस्वरूप वे मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित कर रहे थे, के प्रतिनिर्देश से कोई प्रकथन नहीं किया है । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के प्रतिनिर्देश से अभि. सा. 1 से अभि. सा. 6 की परीक्षा की है । विचारण न्यायालय ने भी यह राय अभिव्यक्त की है कि अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 का साक्ष्य अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत उपरोक्त पक्षकथन का समर्थन नहीं करता है । अत: विचारण न्यायालय ने स्वयं भी अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 के साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया है और अभि. सा. 3 तथा अभि. सा. 5 के साक्ष्य के परिशीलन से यह तथ्य सामने आता है कि विचारण न्यायालय ने सही रूप से यह अवधारित किया है कि उन्होंने अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई कथन नहीं किया है और इसलिए अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 का साक्ष्य अभियोजन पक्षकथन की कोई सहायता नहीं करता है ।

15. अभि. सा. 4 अभियोजन पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से पूर्णतया पक्षद्रोही हो गया है और इसलिए उसका साक्ष्य भी अभियोजन की कहानी का किसी भी रीति में समर्थन नहीं करता है ।

16. यदि अभि. सा. 3 से अभि. सा. 5 के साक्ष्य को छोड़ दिया जाए

तो हमारे पास केवल अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 का साक्ष्य शेष रह जाता है जो क्रमश: मृतका के माता-पिता और भाई हैं । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6, अर्थात् मृतका के माता-पिता और भाई ने शव-समीक्षा के समय अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई कथन नहीं किया है । इसके अतिरिक्त, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 दोनों ने विचारण न्यायालय के समक्ष दिए गए अपने साक्ष्य के दौरान स्पष्ट रूप से अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई कथन नहीं किया है । उन्होंने अत्यधिक अस्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्तों ने दहेज की मांग की थी । इसके अलावा उन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में परिसाक्ष्य नहीं दिया है । अभि. सा. 6 ने यह पक्षकथन सामने रखा है कि अभियुक्त दीपावली के समय उनके द्वारा प्रथम अभियुक्त को दी गई आभूषणों की आधी स्वर्ण मुद्रा से संतुष्ट नहीं थे और उसके कथनानुसार इस कारणवश अभियुक्तों ने मृतका के शरीर पर अग्निदाह की क्षतियां कारित की थीं किंतु अभि. सा. 6 के इस कथन को स्वीकार नहीं किया जा सकता और जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है कि जब शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर को मृतका के शव पर कोई अग्निदाह संबंधी क्षतियां दिखाई नहीं दी थी और जबकि स्वयं अभि. सा. 6 ने भी अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी के समक्ष इस संबंध में कोई कथन नहीं किया था इसलिए उसके इस साक्ष्य कि अभियुक्तों द्वारा दहेज की मांग के चलते मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया गया था, पर विश्वास नहीं किया जा सकता और वह किसी भी प्रकार से स्वीकार्य नहीं है । यहां तक कि अभि. सा. 6 ने अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान भी अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ

दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में स्पष्ट रीति में कोई कथन नहीं किया है । अतः विचारण न्यायालय के अनुसार केवल अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 ने ही अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में कथन किया है और अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्वारा आरडीओ के समक्ष तथा साथ ही विचारण के दौरान दिए गए अभिसाक्ष्य पर संपूर्ण रूप से विचार करते हुए और साथ ही अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए संपूर्ण पक्षकथन को विचार में लेने के पश्चात् तथा विवाह के समय दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि तथा आभूषणों की 40 स्वर्ण मुद्राएं दिए जाने, जिसे संपूर्ण रूप से प्रदर्श डी-1 द्वारा नकार दिया गया है, के प्रतिनिर्देश से और जब अभि. सा. 6 द्वारा स्वयं यह स्वीकार किया गया है कि मृतका और प्रथम अभियुक्त अपने विवाह की तारीख से 3 माह की अवधि तक प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे और साथ ही दिल्ली बाबु (अभि. सा. 5) द्वारा दिए गए इस अभिसाक्ष्य को विचार में लेते हुए कि मृतका ने उस समय अपने वैवाहिक जीवन के संबंध में उससे किसी भी प्रकार की कोई शिकायत नहीं की थी जब उसने त्योहार के दौरान उससे उसके वैवाहिक जीवन के संबंध में प्रश्न किया था, इन सब बातों को एक साथ विचार में लेते हुए यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियोजन साक्षियों, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 ने यह मिथ्या पक्षकथन प्रस्तुत किया है कि अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग की गई थी और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किया गया था और इस प्रकार अभियुक्तों ने उनके विरुद्ध विरचित आरोपों के अनुसार अपराधों को कारित किया है ।

17. जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा सही रूप से अवधारित किया गया है कि विवाह के समय दिए जाने वाले दहेज और अभियुक्त कुटुंब द्वारा अतिरिक्त दहेज की मांग के संबंध में केवल नातेदार ही बेहतर रूप में कथन कर सकते हैं । इस संबंध में यह प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 के साक्ष्य का अवलंब लिया है जो मृतका के माता-पिता और भाई हैं । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि मामले के प्रारंभिक समय पर ही आरडीओ के समक्ष अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्वारा

इस संबंध में कोई कथन प्रस्तुत नहीं किया गया था और प्रदर्श डी-1 के माध्यम से 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की मांग के संबंध में अस्पष्ट रूप से कहानी तैयार की गई और जब अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 विनिर्दिष्ट रूप से अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान उक्त पक्ष के संबंध में कथन करने में असफल रहे हैं तो इन सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत किया गया यह प्रतिवाद सही प्रतीत होता है कि इन परिस्थितियों में अन्वेषण अधिकारी को अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में अन्य साक्षियों की परीक्षा करने का प्रयास करना चाहिए था। यद्यपि अभियोजन पक्ष अर्थात्, अन्वेषण अधिकारी ने स्वयं इस तथ्य को स्वीकार किया है कि अभियुक्तों के निवास स्थान के आस-पास अनेक घर स्थित हैं फिर भी अन्वेषण अधिकारी ने उसे सर्वोत्तम रूप से ज्ञात कारणों से यह अभिनिश्चित करने के लिए पड़ौसियों की परीक्षा करने का विकल्प नहीं लिया कि क्या अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज की मांग के कारण दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित किया गया था। यद्यपि अन्वेषण अधिकारी ने यह स्वीकार किया है कि भिन्न-भिन्न अड़ोसी-पड़ौसी उपलब्ध थे फिर भी उसने उनकी परीक्षा न करने का विकल्प लिया क्योंकि उसके अनुसार किसी भी पड़ौसी ने अभियोजन पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से अभिसाक्ष्य देने का प्रस्ताव नहीं किया था। उसी समय उसने इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि उसने किसी भी अड़ोस-पड़ौस के व्यक्ति को उसके समक्ष प्रस्तुत होने और कथन प्रस्तुत करने के लिए कोई सूचना नहीं दी थी। अतः इस चर्चा से यह निष्कर्ष निकलता है कि मृतका अपने विवाह की तारीख से अभियुक्तों के साथ ओथापई स्थित एक गृह में निवास कर रही थी और अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 आसपास निवास नहीं कर रहे थे और अभियोजन द्वारा यह पक्षकथन प्रस्तुत किया गया है कि अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग की जा रही थी और इसके परिणामस्वरूप मृतका के साथ दुर्व्यवहार

तथा उसे प्रताड़ित किया जा रहा था किंतु यह पक्षकथन स्वीकार्य और विश्वसनीय सामग्री द्वारा समर्थित नहीं है और दूसरी ओर अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 ने शव-समीक्षा के दौरान आरडीओ के समक्ष इस प्रभाव का कोई कथन प्रस्तुत नहीं किया था तथा जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है जब आरडीओ ने पंचायतरों की परीक्षा की थी तो उन्होंने भी अभियुक्त द्वारा दहेज की मांग किए जाने संबंधी कोई कथन नहीं किया था और इसके विपरीत उन्होंने स्पष्ट रूप से यह प्रकथन किया है कि प्रथम अभियुक्त तथा मृतका एकसाथ प्रसन्नतापूर्वक रह रहे थे किंतु वास्तविक समस्या उस समय आरंभ हुई जब मृतका ने एक पृथक् निवास स्थापित करने पर जोर दिया, विशिष्ट रूप से उस समय जब यह उल्लेख किया गया है कि अभियुक्त सं. 3 जो अभियुक्त सं. 2 का भाई और अभियुक्त सं. 1 का मामा है, कुष्ठ रोग से पीड़ित है और इसके अतिरिक्त यह भी पाया गया है कि मृतका के माता-पिता के अनुसार अभियुक्त ने रेलवे में अपने नियोजन को त्याग दिया था और इस संबंध में मृतका अपने माता-पिता से निरंतर शिकायत कर रही थी और ऊपर स्पष्ट किए गए कारणों से मृतका ने अपने जीवन का अंत करने का निश्चय किया और इसलिए इस कथन कि मृतका ने अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज की मांग के कारण दुर्व्यवहार तथा उसे प्रताड़ित किया गया, आत्महत्या करने का विनिश्चय किया, को इसलिए स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि इन परिस्थितियों की ओर संकेत करने वाला कोई स्वीकार्य और विश्वसनीय साक्ष्य उपलब्ध नहीं है ।

18. अभियोजन पक्ष के साक्षियों द्वारा मुख्य रूप से यह पक्षकथन प्रस्तुत किया गया है कि प्रथम अभियुक्त ने रेलवे में अपने नियोजन को त्याग दिया था । तथापि, अभिलेख पर रखी गई सामग्रियों से यह पता चलता है कि प्रथम अभियुक्त रेल कर्मचारी सहकारी प्रत्यय सोसाइटी में नियोजित है । उपरोक्त तथ्य को प्रथम अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत किए गए पहचान पत्र जिसे प्रदर्श डी-2 के रूप में चिह्नित किया गया है तथा उसकी वेतन पर्चियों जिन्हें प्रदर्श डी-3 के रूप में चिह्नित किया गया है, द्वारा स्थापित किया गया है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है प्रथम अभियुक्त और मृतका के बीच विवाह का आयोजन प्रति. सा. 1 और

अभि. सा. 5 द्वारा किया गया था । इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया गया है । यह तथ्य भी सामने आया है कि प्रति. सा. 1 विवाह से काफी समय पूर्व से अभियुक्तों के कुटुंब से परिचित था । अभि. सा. 5 ने अपने साक्ष्य के दौरान इस बात से अनभिज्ञता अभिव्यक्त की थी कि अभियुक्त सं. 1 और मृतका के बीच विवाह उसकी मध्यस्थता से हुआ था । जब यह पाया गया है कि प्रथम अभियुक्त विवाह के समय रेल कर्मचारी सहकारी प्रत्यय सोसाइटी लि. में नियोजित है तो अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए इस पक्षकथन को कि उसने रेलवे में अपने नियोजन को त्याग दिया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता । दूसरी ओर जैसा कि अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल द्वारा सही रूप से प्रतिवाद किया गया है कि मृतका के माता-पिता ने इस बात का पूर्णतया ज्ञान रखते हुए कि प्रथम अभियुक्त रेल कर्मचारी सहकारी प्रत्यय सोसाइटी लि. में नियोजित है, उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह अनुष्ठापित किया था और मृतका की मृत्यु के पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने एक ऐसी कहानी तैयार की है कि अभियुक्त सं. 1 ने विवाह के समय अपने नियोजन को त्याग दिया था । अभिलेख पर रखी गई सामग्रियों, विशिष्ट रूप से प्रति. सा. 1 और साथ ही अभि. सा. 5 के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह निष्कर्ष सामने आता है कि अभियुक्त ने विवाह के समय अपने नियोजन के संबंध में कोई बात नहीं छिपाई थी और तद्नुसार यह पाया गया है, जैसा कि अभि. सा. 6 द्वारा कथन किया गया है कि विवाह की तारीख से 3 माह तक प्रथम अभियुक्त और मृतका प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे । अत: अभियोजन का यह पक्षकथन कि प्रथम अभियुक्त ने विवाह के समय रेलवे में अपने नियोजन के संबंध में मिथ्य कथन किया था और वह प्रथम अभियुक्त और मृतका के बीच सुखद वैवाहिक जीवन स्थापित न हो पाने के कारणों में से एक था, किसी भी रीति में स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

19. अब अभियुक्तों के अनुसार उन्होंने मृतका से दहेज की कोई मांग नहीं की थी, विशिष्ट रूप से उनके द्वारा 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की कोई मांग प्रस्तुत नहीं की गई थी और उन्होंने मृतका के साथ कोई दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित नहीं किया था । प्रथम अभियुक्त के अनुसार मृतका पेट दर्द से पीड़ित रहती थी और उसने असहनीय पीड़ा

के कारण आत्महत्या की थी । इस प्रतिनिर्देश से प्रथम अभियुक्त जिसकी प्रति. सा. 4 के रूप में परीक्षा की गई है, ने अभिसाक्ष्य प्रस्तुत किया है । नि:संदेह उसने अपने मौखिक साक्ष्य की चिकित्सीय अभिलेखों के माध्यम से पुष्टि नहीं की है । प्रदर्श पी-4 के रूप में चिह्नित शव-परीक्षा प्रमाणपत्र से यह पता चलता है कि मृतका कुपोषित महिला थी और उसकी शारीरिक बनावट अत्यंत कृष थी । शव-परीक्षा करने वाले डाक्टर जिसकी अभि. सा. 9 के रूप में परीक्षा की गई है, ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान मृतका की शारीरिक दुर्बलता के बारे में ऊपर किए गए कथन संबंधी तथ्य को स्वीकार किया है और यह भी परिसाक्ष्य दिया है कि उसका कारण समुचित रूप से उपयुक्त आहार ग्रहण न करना था । अत: अभियुक्त के अनुसार मृतका प्राय: पेट दर्द से पीड़ित रहती थी और वह उस संबंध में उपचार भी प्राप्त कर रही थी । इस तथ्य के प्रतिनिर्देश से केवल प्रति. सा. 4 ने ही अभिसाक्ष्य प्रस्तुत किया है और मृतका के पिता (अभि. सा. 1) ने भी यह कथन किया है कि मृतका उसे बार-बार आने वाले बुखार के संबंध में उपचार प्राप्त कर रही थी । इस संबंध में तथ्य कुछ भी हो हमें शासकीय अधिवक्ता का यह प्रतिवाद सही प्रतीत होता है कि इस संबंध में कोई स्पष्ट साक्ष्य विद्‌यमान नहीं है कि मृतका ने पेट दर्द के कारण आत्महत्या की थी । वहीं समान रूप से यह भी अभिनिर्धारित करना होगा कि यह संकेत करने वाला भी कोई स्पष्ट साक्ष्य विद्‌यमान नहीं है कि अभियुक्तों द्‌वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त नकद राशि की मांग के चलते मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया गया था । अभियोजन पक्ष का यह कर्तव्य है कि वह उसके द्‌वारा प्रस्तुत पक्षकथन को सभी सुसंगत संदेहों से परे भलीभांति स्थापित करे और जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है कि इस मामले में अभिलेख पर रखा गया साक्ष्य अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं करता है विशेष रूप से दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए नकद राशि की मांग और उस मांग के परिणामस्वरूप अभियुक्तों द्‌वारा मृतका से दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित किए जाने के आरोपों का समर्थन नहीं करता है और इसके अतिरिक्त अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्‌वारा दिया गया साक्ष्य भी अभियोजन के उपरोक्त पक्षकथन का समर्थन नहीं करता है तो मामले की इन सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मेरी सुविचारित राय में विचारण न्यायालय ने

अभियोजन पक्षकथन को सही ठहराकर त्रुटि की है और साथ ही उसने अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 498क तथा 304ख के अधीन सिद्धदोष ठहराकर तथा उनके विरुद्ध दंडादेश पारित करके त्रुटि की है । मात्र इस कारण से कि मृतका ने अपने विवाह के 7 वर्ष के भीतर, वर्तमान मामले में विवाह की तारीख से 170 दिन के भीतर आत्महत्या कर ली तो यह नहीं माना जा सकता कि मृतका से दहेज की मांग की गई थी और इस कारण उसने आत्महत्या की है । अभियोजन पक्ष द्वारा सामने रखे गए उपरोक्त पक्षकथन के प्रतिनिर्देश से जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है हमारे पास कोई अकाट्य, विश्वसनीय और स्वीकार्य साक्ष्य उपलब्ध नहीं है, अत: मैं विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और उन पर अधिरोपित दंडादेश की अभिपुष्टि करने में असमर्थ हूं ।

20. जैसा कि अभियोजन पक्ष द्वारा अभिकथित किया गया है यदि वास्तव में ही दहेज की मांग के संबंध में मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किया गया होता तो जैसा कि अभियुक्तों के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल ने प्रतिवाद किया है मृतका ने केवल उस कारण से ही आत्महत्या की होती । जब विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों/ अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध से दोषमुक्त किए जाने का विकल्प लिया है और जब अभियोजन द्वारा प्रस्तुत पक्षकथन के अनुसार अपीलार्थियों द्वारा अतिरिक्त दहेज की मांग किए जाने और इस संदर्भ में मृतका से परिणामत: दुर्व्यवहार या उसे प्रताड़ित किए जाने की ओर संकेत करने वाली कोई विश्वसनीय सामग्री उपलब्ध नहीं है और जब यह पाया गया है कि अभियोजन साक्ष्य, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 1, अभि.सा. 2 और अभि. सा. 6 ने बिना किसी समुचित आधार के दिन प्रतिदिन अपने कथन में परिवर्तन किए हैं और तद्नुसार यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 की, अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 द्वारा प्रस्तुत अविश्वसनीय और अस्वीकार्य साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि और उन पर अधिरोपित दंडादेशों को कायम नहीं रखा जा सकता ।

21. अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी प्रतिवाद किया है कि मृतका का भाई अदिकेसेवन (अभि. सा. 2) पुलिस उप निरीक्षक के

रूप में नियोजित है और उसे पश्चात्वर्ती रूप से पुलिस निरीक्षक के पद पर प्रोन्नत भी कर दिया गया है । इस संबंध में प्रति. सा. 1 और प्रति. सा. 2 द्वारा भी अपने साक्ष्य में कथन किए गए हैं । अत: अभियुक्तों के विद्वान् काउंसेल के अनुसार उपरोक्त अदिकेसेवन के प्रभाव को विचार में लेते हुए अभियोजन साक्षियों विशेष रूप से अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 ने अभियुक्तों द्वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि की मांग किए जाने और इसके परिणामस्वरूप मृतका से दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किए जाने संबंधी पक्षकथन तैयार किया है । जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है अभियुक्तों के विरुद्ध प्रस्तुत किए गए उपरोक्त पक्षकथन को साबित करने हेतु कोई स्पष्ट, विश्वसनीय और स्वीकार्य साक्ष्य विद्यमान नहीं हैं और इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए अभियुक्तों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत इस तर्क से इनकार नहीं किया जा सकता कि अदिकेसेवन ने अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 6 की सोच को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है ।

22. वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी ने आरडीओ को साक्षी बनाए बिना और साथ ही अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में प्रस्तुत किए जाने वाले दस्तावेजों में शव-समीक्षा रिपोर्ट को सम्मिलित न करते हुए अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल करने का विकल्प लिया है । इसके अतिरिक्त, अन्वेषण अधिकारी ने आरडीओ से शव-समीक्षा रिपोर्ट की प्राप्ति के प्रतिनिर्देश से असंगत साक्ष्य भी प्रस्तुत किया है । यह पाया गया है कि विचारण के दौरान एक प्रकीर्ण याचिका के माध्यम से आरडीओ को अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में एक अतिरिक्त साक्षी के रूप में सम्मिलित किया गया और परिणामत: उसकी परीक्षा की गई । उसके द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट को भी वर्तमान मामले में चिह्नित किया गया । अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल ने वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा किए गए अक्षम अन्वेषण के प्रतिनिर्देश से उपरोक्त तथ्यों को प्रस्तुत किया है । इस बात में कोई संदेह नहीं है कि वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा समुचित अन्वेषण नहीं किया गया है । तथापि, केवल इस कारण से हम संपूर्ण अभियोजन पक्षकथन को मिथ्या के रूप में अवधारित नहीं कर सकते । अत: विचारण न्यायालय द्वारा दी गई इस तर्कणा कि अन्वेषण के दौरान की

गई त्रुटियां संपूर्ण अभियोजन पक्षकथन को प्रभावित नहीं करती हैं, को अस्वीकार नहीं किया जा सकता ।

23. उपरोक्त परिचर्चा के आधार पर जब अभियोजन पक्ष द्वारा दहेज के रूप में 5,00,000/- रुपए की नकद राशि की मांग और परिणामत: मृतका के साथ दुर्व्यवहार और उसे प्रताड़ित किए जाने के संबंध में कोई विश्वसनीय और स्वीकार्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सका है और मामले की इस परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए जब अभियोजन पक्षकथन गंभीर संदेहों, दोषों, असफलताओं, त्रुटियों, तथा आशंकाओं से ग्रस्त है और जब अभियोजन पक्ष उपरोक्त कारकों को नकारने हेतु कोई सुसंगत स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने में असफल रहा है तो इसके परिणामस्वरूप संदेह का लाभ अभियुक्तों को प्रदान किया जाना चाहिए । इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मैं यह अभिनिर्धारित करता हूं कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 498क तथा 304ख के अधीन अधिरोपित आरोपों को स्थापित करने में असफल रहा है और इसके परिणामस्वरूप मैं अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को उपरोक्त अपराधों से दोषमुक्त करता हूं ।

ऊपर कथित कारणों से महालिर नीति मंदरम (त्वरित महिला न्यायालय, तिरुवल्लूर) की फाइल पर 2010 के सेशन मामला सं. 255 में अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 498क और 304ख के अधीन सिद्धदोष ठहराते हुए पारित किए गए तारीख 9 जनवरी, 2014 के निर्णय को अपास्त किया जाता है और परिणामत: अपीलार्थियों/अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2 को दंड संहिता की धारा 498क और 304ख के अधीन अपराधों से दोषमुक्त किया जाता है और तद्नुसार वर्तमान दांडिक अपील को मंजूर किया जाता है । अभियुक्तों द्वारा निष्पादित जमानत बंधपत्रों को उन्मोचित किया जाता है । अभियुक्तों द्वारा संदत्त जुर्माने की कोई रकम, यदि कोई हो, उन्हें प्रतिदत्त की जाएगी ।

अपील मंजूर की गई ।

पु.

कन्हैया लाल

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

(1999 की दांडिक अपील सं. 1046)

तारीख 21 मई, 2020

न्यायमूर्ति गौतम चौधरी

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 212 – किसी अपराधी को संश्रय देना और उसे दंड से प्रतिच्छादित करना – हत्या के मामले में संलिप्त अभियुक्त का फरार हो जाना – फरार अपराधी के पिता/वर्तमान अपीलार्थी पर अपने पुत्र को संश्रय दिए जाने का आरोप लगाया जाना – केवल यह तथ्य कि अपीलार्थी, अभियुक्त का पिता है, यह उपधारणा बनाए जाने का आधार नहीं हो सकता कि उसने अपने पुत्र को संश्रय देकर उसे दंड से प्रतिच्छादित करने का प्रयास किया है – अत: अभियोजन पक्ष दंड संहिता की धारा 212 के अधीन समुचित रूप से अपराध का गठन करने में असफल रहा है और अभियुक्त दोषमुक्ति का हकदार है ।

वर्तमान अपील का निपटारा करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 11 नवम्बर, 1996 को पूर्वाह्न लगभग 10.00 बजे नन्हीराम, काशीराम नामक व्यक्ति को दिए गए ऋण की वसूली के लिए ग्राम घुमा बुडापारा गया था किन्तु जब वह वहां से वापस नहीं आया तो उसकी पत्नी हेमंती बाई काशी राम के घर गई और उसने देखा कि काशी राम तथा एक अन्य व्यक्ति भोज राम उसके पति से गपशप कर रहे थे । हेमंती बाई द्वारा ऋण की वसूली के संबंध में पूछे जाने पर काशी राम ने उसे बताया कि उसने नन्हीराम को 300/- रुपए प्रति मास के हिसाब से उसका प्रतिदाय कर दिया है । उसके पश्चात् पति-पत्नी प्रेम साई नामक एक व्यक्ति के घर गए और उन्होंने उसे 5/- रुपए लौटाने

को कहा किन्तु प्रेम साई ने उसे 'कोसना मदिरा' पीने हेतु आमंत्रित किया । यहां पुन: नन्हीराम लगभग एक घंटे तक रुका और उसके पश्चात् जब नन्हीराम और उसकी पत्नी हेमंती बाई अपने ग्राम वापस आ रहे थे तो मार्ग में उन्हें अभियुक्त व्यक्ति, अर्थात् दाशा राम, सुन्दर लाल और एक फरार अभियुक्त नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) मिले और उन्होंने उनसे मदिरा क्रय करने हेतु धन की मांग की किन्तु नन्हीराम ने उन्हें धन से इनकार कर दिया और वे वापस आ गए । जब नन्हीराम और उसकी पत्नी हेमंती बाई अपने ग्राम घुमाबुडा के समीप पहुंचे तो उक्त तीनों व्यक्तियों ने मृतक पर लातों और घूसों से हमला किया जिसकी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हेमंती बाई है और जो स्वयं भी अभियुक्त व्यक्तियों जिनमें वर्तमान अपीलार्थी-कन्हैया लाल का पुत्र भी सम्मिलित था, द्वारा किए गए हमले में उस समय आहत हो गई जब उसने अपने पति को बचाने के लिए हस्तक्षेप करने का प्रयास किया । उसके पश्चात् वह घटनास्थल से भाग आई और उसने इस संपूर्ण घटना की सूचना आनंद राम और अन्य ग्रामवासियों को दी और जब ग्रामवासी घटनास्थल पर पहुंचे तो वहां नन्हीं राम का मृत शरीर मिला । इस प्रभाव की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और मर्ग हेमंती बाई द्वारा घटना की तारीख को ही अभियुक्तों, अर्थात् दाशा राम, सुन्दर लाल और नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) के विरुद्ध दर्ज की गई । प्रायिक अन्वेषणों के पश्चात् दाशा राम, सुन्दर लाल और कन्हैया लाल के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया जिसमें यह दर्शित किया गया कि अभियुक्त नाहर (नेहरू) फरार है । तथापि, आरोप विरचित करते समय विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों अर्थात् दाशा राम और सुन्दर लाल के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन आरोप विरचित किए जबकि विचारण न्यायालय ने वर्तमान अपीलार्थी-कन्हैया लाल के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 212 के अधीन आरोप विरचित किए । मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराया और उसे दंडादिष्ट किया जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी ने वर्तमान अपील फाइल की है । उच्च न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य और दंड संहिता की धारा 212 के आधारिक घटकों को विचार में लेते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि मात्र इस कारण से कि वर्तमान अपीलार्थी फरार अभियुक्त नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) का पिता है, यह उपधारणा नहीं बनाई जा सकती कि उसने स्वैच्छिक रूप से और जानबूझकर अपने पुत्र को वैध दंड से प्रतिच्छादित करने के आशय से छिपाने या आश्रय देने का प्रयास किया । इस प्रकार, अभियोजन पक्ष अभियुक्त/अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 212 के अधीन अपराध को साबित करने में असफल रहा है । इसके परिणामस्वरूप, अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराने वाले तथा उसे दंडादिष्ट करने वाले तारीख 8 अप्रैल, 1999 के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी को उसके विरुद्ध विरचित आरोप से दोषमुक्त किया जाता है । यह रिपोर्ट किया गया है कि अपीलार्थी जमानत पर है और इसलिए, उसके द्वारा प्रस्तुत जमानत बंधपत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437क के उपबंधों के निबंधनानुसार आज की तारीख से छह माह की अवधि के लिए प्रवर्तन में बना रहेगा । (पैरा 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1992]	1992 क्रिमिनल ला जर्नल 97 : **सुमतिविजय जैन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य** ।	17,18

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 1999 की दांडिक अपील सं. 1046.

अपर सेशन न्यायाधीश सं. 2, रायगढ़ (सीजी) द्वारा सेशन विचारण सं. 65/1997 में तारीख 8 अप्रैल, 1999 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध अपील फाइल की गई है ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री प्रज्ञा पांडे, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री दिनेश तिवारी, उप सरकारी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति गौतम चौधरी – जब इस मामले को सुनवाई हेतु लिया गया तो अपील के संबंध में कार्यवाही करने के लिए अपीलार्थी/अभियुक्त की ओर से कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और विशेष रूप से इस बात को ध्यान में रखते हुए कि यह अपील अत्यधिक लंबे समय से लंबित है, इस न्यायालय के पास इसके अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प नहीं है कि उच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति के पैनल में से अपीलार्थी/अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने के लिए किसी अधिवक्ता को नियुक्त किया जाए ।

2. पूछे जाने पर, सुश्री प्रज्ञा पांडे, उच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति के साथ पैनलबद्ध अधिवक्ताओं में से एक अधिवक्ता हैं, जिन्होंने इस मामले में अपीलार्थी/अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने हेतु पूछे जाने पर अपनी इच्छा व्यक्त की है । अत: न्याय के हित में सुश्री प्रज्ञा पांडे, अधिवक्ता को अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करने के लिए उसके काउंसेल के रूप में नियुक्त किया जाता है ।

3. रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह इस संबंध में अनुपालन और आवश्यक कार्यवाही करने हेतु उच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति को सूचित करे ।

4. वर्तमान अपील अपर सेशन न्यायाधीश सं. 2, रायगढ़ (सीजी) द्वारा सेशन विचारण सं. 65/1997 में तारीख 8 अप्रैल, 1999 को पारित दोषसिद्धि के उस निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा अपीलार्थी/अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 212 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और उसके विरुद्ध 5 वर्ष के कठिन कारावास का दंडादेश पारित किया गया है और साथ ही उस पर 1,000/- रुपए का जुर्माना भी अधिरोपित किया गया है, जिसके संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर उसे तीन मास की अवधि के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया गया है ।

5. अभियोजन पक्षकथन संक्षेप में इस प्रकार है कि तारीख 11 नवम्बर, 1996 को पूर्वाह्न लगभग 10.00 बजे नन्हीराम (मृतक)

काशीराम नामक व्यक्ति को दिए गए ऋण की वसूली के लिए ग्राम घुमा बुडापारा गया था किन्तु जब वह वहां से वापस नहीं आया तो उसकी पत्नी हेमंती बाई काशी राम के घर गई और उसने देखा कि काशी राम तथा एक अन्य व्यक्ति भोज राम उसके पति (नन्हीराम) से गपशप कर रहे थे । हेमंती बाई द्‌वारा ऋण की वसूली के संबंध में पूछे जाने पर काशी राम ने उसे बताया कि उसने नन्हीराम को 300/- रुपए प्रति मास के हिसाब से उसका प्रतिदाय कर दिया है । उसके पश्चात् पति-पत्नी प्रेम साई नामक एक व्यक्ति के घर गए और उन्होंने उसे 5/- रुपए लौटाने को कहा किन्तु प्रेम साई ने उसे 'कोसना मदिरा' पीने हेतु आमंत्रित किया । यहां पुन: नन्हीराम लगभग एक घंटे तक रुका और उसके पश्चात् जब नन्हीराम और उसकी पत्नी हेमंती बाई अपने ग्राम वापस आ रहे थे तो मार्ग में उन्हें अभियुक्त व्यक्ति, अर्थात् दाशा राम, सुन्दर लाल और एक फरार अभियुक्त नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) (वर्तमान अपीलार्थी-कन्हैया लाल का पुत्र) मिले और उन्होंने उनसे मदिरा क्रय करने हेतु धन की मांग की किन्तु नन्हीराम ने उन्हें धन से इनकार कर दिया और वे वापस आ गए । जब नन्हीराम और उसकी पत्नी हेमंती बाई अपने ग्राम घुमाबुडा के समीप पहुंचे तो उक्त तीनों व्यक्तियों ने मृतक पर लातों और घूसों से हमला किया जिसकी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हेमंती बाई (अभि. सा. 4) है और जो स्वयं भी अभियुक्त व्यक्तियों जिनमें वर्तमान अपीलार्थी-कन्हैया लाल का पुत्र भी सम्मिलित था, द्‌वारा किए गए हमले में उस समय आहत हो गई जब उसने अपने पति को बचाने के लिए हस्तक्षेप करने का प्रयास किया । उसके पश्चात् वह घटनास्थल से भाग आई और उसने इस संपूर्ण घटना की सूचना आनंद राम और अन्य ग्रामवासियों को दी और जब ग्रामवासी घटनास्थल पर पहुंचे तो वहां नन्हीं राम का मृत शरीर मिला । इस प्रभाव की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-10) और मर्ग (प्रदर्श पी-11) हेमंती बाई द्‌वारा घटना की तारीख को ही अभियुक्तों, अर्थात् दाशा राम, सुन्दर लाल और नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) के विरुद्ध दर्ज की गई । अन्वेषण के दौरान शव-समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श पी-6) तैयार की गई । अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल का स्थलनक्शा (प्रदर्श पी/4) तैयार किया । अन्वेषण के

दौरान एक टूटी हुई चूड़ी का प्रदर्श पी/7 के माध्यम से अभिग्रहण किया गया । अभिग्रहण ज्ञापन (प्रदर्श पी/8) में यथा उल्लिखित वस्तुओं को घटनास्थल से अभिगृहीत किया गया । के. पी. अवस्थी ने मर्ग संसूचना सं. 49/96 को भी लेखबद्ध किया । अभिगृहीत वस्तुओं को रासायनिक परीक्षा हेतु भेजा गया और न्यायालयिक प्रयोगशाला रिपोर्ट (प्रदर्श पी/15) के अनुसार वस्तु 'सी' धोती पर रक्त चिह्न पाए गए ; वस्तु "डी, ई, एफ और जी" पत्थरों पर भी रक्त चिह्न पाए गए और वस्तु 'एच' कमीज पर भी रक्त चिह्न पाए गए । डा. शैलेन्द्र उपाध्याय (अभि. सा. 1) ने मृतक की शव-परीक्षा की और प्रदर्श-1 के रूप में शव-परीक्षा रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसके अनुसार उन्होंने मृतक के शरीर पर निम्नलिखित क्षतियां पाईं :-

(i) बाईं भौंह के ऊपर 1" × 1" आकार का अस्थि जितना गहरा विदीर्ण घाव पाया गया ।

(ii) दाएं कान के मध्यवर्ती 1" और 1" × 1" आकार का अस्थि जितना गहरा विदीर्ण घाव पाया गया ।

(iii) दाईं भौंह के ऊपर 1" × 1" आकार का अस्थि जितना गहरा विदीर्ण घाव पाया गया, और

(iv) दाईं आंख के पार्श्व 1" और 1 सेंमी. × 1 सेंमी. आकार का अस्थि जितना गहरा विदीर्ण घाव पाया गया ।

उन्होंने मृतक के शरीर पर बाईं ओर 3री, 6ठी, 7वीं और 8वीं पसली में अस्थिभंग और उसी प्रकार दाहिनी ओर 2री, 3री, 4थी, 5वीं और 6ठी पसली में अस्थिभंग पाया ।

चिकित्सक की राय में मृत्यु का कारण छाती और उदर पर बाह्य दबाव के कारण तिल्ली के फट जाने के कारण हुए अत्यधिक आंतरिक और बाह्य रक्तस्राव के कारण होने वाली मूर्छा है । यह प्राक्कलित किया गया कि मृत्यु 18 से 36 घंटे पूर्व हुई थी और वह मानववध की प्रकृति की है ।

6. औपचारिक अन्वेषण के पश्चात् दाशा राम, सुन्दर लाल और

कन्हैया लाल के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया जिसमें यह दर्शित किया गया कि अभियुक्त नाहर (नेहरू) फरार है । तथापि, विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों अर्थात् दाशा राम और सुन्दर लाल के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन आरोप विरचित किए जबकि विचारण न्यायालय ने वर्तमान अपीलार्थी-कन्हैया लाल के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 212 के अधीन आरोप विरचित किए । अभियुक्तों ने उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से इनकार किया और उन्होंने विचारण का अनुरोध किया ।

7. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों/अपीलार्थियों को दोषी सिद्ध करने हेतु 13 साक्षियों, अर्थात् डा. शैलेन्द्र उपाध्याय (अभि. सा. 1), दीलीराम भगत (अभि. सा. 2), आनंदराम (अभि. सा. 3), हेमंती बाई (अभि. सा. 4), राम साई (अभि. सा. 5), रेगाती (अभि. सा. 6), सुभाषो बाई (अभि. सा. 7), आशाराम (अभि. सा. 8), संतराम (अभि. सा. 9), के. पी. अवस्थी (अभि. सा. 10), अमर सिंह (अभि. सा. 11), काशीराम (अभि. सा. 12) और एस. पी. सिंह (अभि. सा. 13) की परीक्षा कराई । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 313 के अधीन अभियुक्त/अपीलार्थियों के कथन लेखबद्ध किए गए जिनमें उन्होंने अभियोजन पक्षकथन में उनके विरुद्ध लाए गए साक्ष्यों और परिस्थितियों से इनकार किया और अपने निर्दोष होने तथा उन्हें झूठा फंसाए जाने का अभिवाक् किया । इसके अतिरिक्त, एक अन्य साक्षी, अर्थात् जानकी राम की भी प्रतिरक्षा साक्षी सं. 1 के रूप में परीक्षा कराई गई ।

8. विचारण न्यायालय ने पक्षकारों के अपने-अपने काउंसेलों की सुनवाई करने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के पश्चात् आक्षेपित निर्णय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थियों को सिद्धदोष ठहराया तथा उनके विरुद्ध निर्णय के प्रारंभिक पैरा में यथा उल्लिखित दंडादेश पारित किया ।

9. यहां यह उल्लेख करना सुसंगत है कि अन्य दो अभियुक्तों, अर्थात् सुन्दर लाल और दाशा राम ने, जिन्हें दंड संहिता की धारा

302/34 के अधीन सिद्धदोष ठहराया गया था तथा उनके विरुद्ध दंडादेश पारित किया गया था, भी पृथक् रूप से इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की है जो वर्ष 1999 की दांडिक अपील सं. 25/52 के रूप में इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई थी और तारीख 5 मई, 2015 को पारित निर्णय द्वारा उक्त अपीलार्थियों की दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन की गई दोषसिद्धि को दंड संहिता की धारा 300/34 के अधीन परिवर्तित करते हुए उक्त अपील भागत: मंजूर की गई और उक्त दोनों अभियुक्तों को उनके द्वारा पहले से ही भोगे गए करावास की अवधि से दंडादिष्ट किया गया ।

10. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अपीलार्थी को प्रश्नगत अपराध में मिथ्या फंसाया गया है क्योंकि अभिलेख पर इस प्रभाव का कोई साक्ष्य नहीं है जो यह दर्शित करे कि अपीलार्थी फरार अभियुक्त नेहरू को शरण देने या उसे छिपाकर रखने का दोषी है और उसे केवल इस कारण से प्रश्नगत अपराध में फंसाया गया है कि वर्तमान अपीलार्थी फरार अभियुक्त नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) का पिता है । उन्होंने यह भी दलील दी है कि दंड संहिता की धारा 212 के आधारिक घटक वर्तमान मामले में मौजूद नहीं है और विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों का समुचित रूप से मूल्यांकन किए बिना आक्षेपित निर्णय द्वारा पूर्वोक्तानुसार अभियुक्त/अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया है तथा उसके विरुद्ध दंडादेश पारित किया है जो कि अपास्त किए जाने का दायी है तथा अभियुक्त/अपीलार्थी उसके विरुद्ध विरचित आरोप से दोषमुक्त किए जाने का हकदार है ।

11. इसके प्रतिकूल राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन करते हुए यह दलील प्रस्तुत की है कि अपीलार्थी इस तथ्य से पूर्णतया अवगत था कि उसका पुत्र मृतक नन्हीराम की हत्या के अपराध में संलिप्त है फिर भी उसने उसे शरण देने या छिपाने की चेष्टा की और उसने आनंद राम (अभि. सा. 3) से यह भी अनुरोध किया कि वह उसके पुत्र (फरार अभियुक्त नेहरू) के

मामले में समझौता कर ले और इसलिए विचारण न्यायालय ने नितांत रूप से न्यायोचित निर्णय लेते हुए अभियुक्त/अपीलार्थी को पूर्वोक्त अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया और उसके विरुद्ध दंडादेश पारित किया ।

12. मैंने पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्‌वान् काउंसेलों की सुनवाई की है तथा निचले न्यायालय के अभिलेख सहित आक्षेपित निर्णय का भी परिशीलन किया है ।

13. विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 212 के अधीन सिद्धदोष ठहराया है जो निम्नानुसार है :-

> "212. जबकि कोई अपराध किया जा चुका हो, तब जो कोई किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसके बारे में वह जानता हो या विश्वास करने का कारण रखता हो कि वह अपराधी है, वैध दंड से प्रतिच्छादित करने के आशय से संश्रय देगा या छिपाएगा ।
>
> यदि अपराध मृत्यु से दंडनीय हो – यदि वह अपराध मृत्यु से दंडनीय हो तो वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ;
>
> यदि अपराध आजीवन कारावास से या कारावास से दंडनीय हो – और यदि वह अपराध आजीवन कारावास से, या दस वर्ष तक के कारावास से, दंडनीय हो, तो वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ;
>
> और यदि वह अपराध एक वर्ष तक, न कि दस वर्ष तक के कारावास से दंडनीय हो, तो वह उस अपराध के लिए उपबंधित भांति के कारावास से, जिसकी अवधि उस अपराध के लिए उपबंधित कारावास की दीर्घतम अवधि की एक-चौथाई तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा ।"

14. दंड संहिता की धारा 212 को पढ़ने मात्र से ही यह पता चलता है कि दंड संहिता की धारा 212 के अधीन किसी व्यक्ति को दोषसिद्ध

किए जाने के लिए निम्नलिखित अनिवार्य घटकों को अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए :–

"(i) अपराध अवश्य ही कारित किया गया हो, अर्थात् पूरा किया गया हो और कोई व्यक्ति 'अपराधी' भी होना चाहिए ;

(ii) अभियुक्त द्वारा ऐसे व्यक्ति को संश्रय दिया गया हो या छिपाया गया हो ;

(iii) अभियुक्त यह तथ्य जानता हो या उसके पास यह विश्वास करने का कारण हो कि इस प्रकार संश्रय दिया गया या छिपाया गया व्यक्ति अपराधी है ; और

(iv) अभियुक्त की ओर से यह आशय दर्शित होना चाहिए कि वह अपराधी को वैध दंड से प्रतिच्छादित करना चाहता है ।"

15. इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं है कि सिवाय आनंद राम (अभि. सा. 3) के, अन्य सभी साक्षियों, अर्थात् डा. शैलेन्द्र उपाध्याय (अभि. सा. 1), दीलीराम भगत (अभि. सा. 2), हेमंती बाई (अभि. सा. 4) रामसाई (अभि. सा. 5), रेगाती (अभि. सा. 6), सुभाषो बाई (अभि. सा. 7), आशाराम (अभि. सा. 8), संतराम (अभि. सा. 9), के. पी. अवस्थी (अभि. सा. 10), काशीराम (अभि. सा. 12) और एस. पी. सिंह (अभि. सा. 13) ने अभियुक्त-अपीलार्थी कन्हैया के संबंध में कोई कथन नहीं किया है या यह तथ्य प्रकट नहीं किया है कि अपीलार्थी ने अपने पुत्र को छिपाने या संश्रय देने का प्रयास किया था ।

16. आनंद राम (अभि. सा. 3) ने अपने कथन के पैरा 2 में यह कहा है कि घटना के तीन दिन पश्चात् वर्तमान अपीलार्थी-कन्हैया उसके पास आया और उसने उससे यह अनुरोध किया कि वह उसके पुत्र नेहरू (फरार अपराधी) के मामले में समझौता कर ले । इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष ने इस तथ्य के संबंध में कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि अपीलार्थी ने भलीभांति यह जानते हुए कि उसका पुत्र-अभियुक्त-नेहरू उक्त अपराध कारित किए जाने में संलिप्त था, अपने पुत्र अभियुक्त-नेहरू को बचाने के आशय से उसे संश्रय देने या छिपाने का प्रयास किया । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष यह

साबित करने में पूर्णत: असफल रहा है कि वर्तमान अपीलार्थी ने अपने पुत्र को दंड से बचाने के आशय से उसे छिपाने या संश्रय देने का प्रयास किया है ।

17. **सुमतिविजय जैन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 212 के अधीन अपराध के संबंध में कार्यवाही करते हुए निम्नानुसार संप्रेक्षण किया है :-

> "8. किसी अपराधी को संश्रय देने से संबंधित दंड संहिता की धारा 212 के अधीन किसी अपराध के संबंध में यह साबित करना आवश्यक है कि अपराधी ने किसी व्यक्ति को यह जानते हुए या ऐसा विश्वास करने का कारण रखते हुए कि ऐसा व्यक्ति अपराधी है, उक्त अपराधी को संश्रय दिया है या छिपाया है और इस प्रकार संश्रय दिया जाना या छिपाया जाना उक्त अपराधी को वैध दंड से प्रतिच्छादित करने के आशय से किया गया है । अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री प्रथमदृष्ट्या रूप से ही यह उपदर्शित नहीं करती कि सुमतिविजय ने मुकेश और मनिया को संश्रय दिया है या उन्हें छिपाया है । केवल साक्ष्यों द्वारा यह राय अभिव्यक्त की गई है कि सुमतिविजय के पास अपराधियों को संश्रय देने या उन्हें छिपाने का हेतु विद्यमान है और उसने ऐसा किया हो सकता है । आवेदक सुमतिविजय के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 212 के अधीन आरोप विरचित करने के लिए भी साक्ष्य पर्याप्त नहीं है । जैसा कि निरंजन सिंह करमसिंह पंजाबी, अधिवक्ता, **बनाम** महाराष्ट्र राज्य और जितेन्द्रनाथ भीमराज बिज्जा और अन्य [ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 1962 = 1990 क्रिमिनल ला जर्नल 1869] वाले मामले में यह संप्रेक्षण किया गया है कि न्यायालय को आरोप विरचित किए जाने के समय यह निष्कर्ष निकालने हेतु अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का मूल्यांकन करना होगा कि यदि उससे सामने आने वाले तथ्यों को सत्य माना जाता है तो क्या वे तथ्य ऐसे

[1] 1992 क्रिमिनल ला जर्नल 97.

घटकों की विद्‌यमानता को प्रकट करते हैं जिनसे यह निष्कर्ष निकलता हो कि वे अभिकथित अपराध का गठन करते हैं । स्पष्ट रूप से सेशन न्यायाधीश ऐसा करने में असफल रहे हैं । पुलिस द्‌वारा अभियुक्त सुमतिविजय के विरुद्ध एकत्रित की गई सामग्री को सत्य मान लिया जाए तो भी वह ऐसे घटकों की विद्‌यमानता को प्रकट नहीं करती है जो दंड संहिता की धारा 120ख और धारा 212 के अधीन अपराधों का गठन करते हों । अत:, आवेदक के विरुद्ध विरचित दोनों आरोप आधारहीन हैं और अपास्त किए जाने चाहिए ।"

18. वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य और दंड संहिता की धारा 212 के आधारिक घटकों तथा **सुमतिविजय जैन** (उपरोक्त) वाले मामले को विचार में लेते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि मात्र इस कारण से कि वर्तमान अपीलार्थी, फरार अभियुक्त नाहर **उर्फ** घाशिया (नेहरू) का पिता है, यह उपधारणा नहीं बनाई जा सकती कि उसने स्वैच्छिक रूप से और जानबूझकर अपने पुत्र को दंड से बचाने के आशय से छिपाने या आश्रय देने का प्रयास किया । इस प्रकार, अभियोजन पक्ष अभियुक्त/अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 212 के अधीन अपराध साबित करने में असफल रहा है ।

19. इसके परिणामस्वरूप, अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराने वाले तथा उसे दंडादिष्ट करने वाले तारीख 8 अप्रैल, 1999 के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी को उसके विरुद्ध विरचित आरोप से दोषमुक्त किया जाता है । यह बताया गया है कि अपीलार्थी जमानत पर है और इसलिए, उसके द्‌वारा प्रस्तुत जमानत बंधपत्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437क के उपबंधों के निबंधनानुसार आज की तारीख से छह माह की अवधि तक प्रभावी रहेगा ।

अपील मंजूर की गई ।

पु.

उत्तम सिंह

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

[2020 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका (एम) सं. 806]

तारीख 10 जुलाई, 2020

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 439 के अधीन जमानत याचिका – याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 452, धारा 376, धारा 506, धारा 323 और धारा 34 के अधीन मामला रजिस्टर किए जाने पर याची को गिरफ्तार किया जाना – अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से पीड़िता (आयु लगभग 45 वर्ष) के कक्ष में घुसकर उस पर यौन हमला किया जाना – इसी दौरान अभियुक्त की पत्नी का एक अन्य महिला के साथ पीड़िता के कक्ष में प्रवेश करना और पीड़िता की पिटाई करना – पीड़िता की चीख-पुकार सुनकर उसकी पुत्रवधु द्वारा उसके कक्ष से आकर उसे बचाया जाना – परिस्थितियों से यह प्रतीत होता है कि पीड़िता और अभियुक्त के बीच पूर्व में निकट संबंध थे क्योंकि पीड़िता हमले के समय घर पर अकेली नहीं थी और उसकी पुत्रवधु घर पर मौजूद थी और इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि यौन हमले के समय पीड़िता ने कोई चीख-पुकार नहीं की थी अन्यथा उसकी पुत्रवधु पहले ही उसके कक्ष में आ जाती – इसके अतिरिक्त चिकित्सा रिपोर्ट में भी प्रवेशनात्मक यौन हमले की संभावना से इनकार किया गया है और न्यायालय में चालान भी प्रस्तुत कर दिया गया है तथा अभियुक्त से किसी प्रकार की बरामदगी भी नहीं की जानी है, अतः इन सभी परिस्थितियों में अभियुक्त को जमानत दिया जाना साधारण नियम है और जमानत से इनकार करना एक अपवाद और साथ ही न्यायशास्त्र के इस सिद्धांत को भी सर्वोपरि रखते हुए कि कोई व्यक्ति

तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक उसका अपराध साबित न कर दिया जाए, अभियुक्त को जमानत मंजूर करना न्यायोचित है ।

वर्तमान जमानत याचिका का निपटारा करने के लिए संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि पीड़िता/अभियोक्त्री, आयु 45 वर्ष ने पुलिस थाना, पधार, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश में तारीख 19 फरवरी, 2020 को एक शिकायत दर्ज कराई थी जिसमें यह अभिकथित किया गया है कि जमानत याची ने अप्राधिकृत रूप से उसके कक्ष में प्रवेश किया और उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर यौन हमला किया । पीड़िता/अभियोक्त्री ने पुलिस के समक्ष यह तथ्य प्रकट किया है कि अभिकथित घटना के दिन उसकी पुत्रवधु भी उसके घर में मौजूद थी किंतु वह रात्रि का भोजन करने के पश्चात् भूतल स्थित एक कक्ष में सोने के लिए चली गई थी । उसने यह अभिकथन किया है कि रात्रि लगभग 8.10 बजे जमानत याची उसके कमरे में प्रविष्ट हुआ और उसने उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर यौन हमला किया किंतु उसी दौरान जमानत याची की पत्नी और एक महिला, अर्थात् शांता देवी भी कक्ष में आ गई और उन्होंने मिलकर उसकी पिटाई की जिसके पश्चात् भूतल पर सो रही उसकी पुत्रवधु उसकी चीख-पुकार सुनने के पश्चात् घटनास्थल पर पहुंची । उसने यह भी अभिकथन किया है कि उसकी पुत्रवधु ने जमानत याची की पत्नी और अन्य महिला के चंगुल से उसे मुक्त किया । पूर्वोक्त पृष्ठ भूमि में वर्तमान प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसके ब्यौरे ऊपर दिए गए हैं, तारीख 22 फरवरी, 2020 को जमानत याची के विरुद्ध दर्ज की गई जिसके परिणामस्वरूप जमानत याची को गिरफ्तार किया गया और वह उसी समय से अभिरक्षा/कारावास में है । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह कहना आवश्यक नहीं है कि जमानत का उद्देश्य विचारण के दौरान अभियुक्त की उपस्थिति को सुनिश्चित करना है और इस प्रश्न का समाधान करने के लिए कि क्या जमानत मंजूर की जानी चाहिए अथवा उससे इनकार किया जाना चाहिए, उचित रूप से यह देखा जाना चाहिए कि क्या इस बात की संभावना है कि पक्षकार अपने विरुद्ध

विचारण का सामना करने के लिए न्यायालय में उपस्थित होगा । अन्यथा दंड के रूप में जमानत से इनकार नहीं किया जा सकता क्योंकि यह एक प्रकार का दंडादेश होगा । अन्यथा भी जमानत एक सामान्य नियम है न कि कारावास में भेजा जाना । न्यायालय को आरोपों की प्रकृति, उनका समर्थन करने वाले साक्ष्य की प्रकृति, ऐसे दंड की गंभीरता जो दोषसिद्धि के परिणामस्वरूप अधिरोपित किया जाएगा, अभियुक्त का चरित्र/आचार, वे परिस्थितियां जिनके अधीन अभियुक्त विशिष्ट रूप से उस अपराध में संलिप्त हुआ, आदि पर विचार करना चाहिए । परिणामत: ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए वर्तमान जमानत याचिका मंजूर की जाती है । याची के संबंध में यह आदेश दिया जाता है कि उसके द्वारा 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) की राशि के निजी बंधपत्र और समान रकम की एक प्रतिभूति विद्वान् विचारण न्यायालय के समाधानप्रद रूप में प्रस्तुत किए जाने के अधीन रहते हुए और साथ ही निम्नलिखित शर्तों के अधीन रहते हुए उसे जमानत पर निर्मुक्त कर दिया जाए, – क. वह पूछताछ के प्रयोजन के लिए यदि इस प्रकार की अपेक्षा की जाए तो स्वयं को उपलब्ध कराएगा तथा सुनवाई की प्रत्येक तारीख पर नियमित रूप से विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा और यदि किसी कारण से वह ऐसा करने से निवारित होता है तो वह उपयुक्त आवेदन फाइल करके निजी रूप से उपस्थित होने से छूट प्रदान करने का अनुरोध करेगा ; ख. वह किसी अभियोजन साक्ष्य से छेड़छाड़ नहीं करेगा और न ही किसी भी रीति में मामले के अन्वेषण में कोई हस्तक्षेप करेगा ; ग. वह मामले के तथ्यों से परिचित किसी व्यक्ति को किसी प्रकार का कोई प्रलोभन, धमकी या वचन नहीं देगा जिससे वह उसे न्यायालय या किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष कतिपय तथ्यों को प्रकट न करने हेतु मना सके ; और घ. वह न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना भारत के राज्य क्षेत्र को नहीं छोड़ेगा । यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि याची अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करता है या उस पर अधिरोपित किन्हीं शर्तों का उल्लंघन करता है तो अन्वेषण अभिकरण उसकी जमानत को रद्द करने हेतु इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही करने हेतु स्वतंत्र होगा । यहां ऊपर किए गए किसी संप्रेक्षण के बारे में

यह नहीं समझा जाएगा कि वह मामले के गुणागुण के संबंध में कोई टिप्पणी है और उपरोक्त संप्रेक्षण इस आवेदन के निपटारे तक ही सीमित होंगे । (पैरा 10, 12, 13 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2018]	ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 980 : **दाताराम सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	8
[2012]	(2012) एस. सी. सी. 40 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 830 : **संजय चंद्रा** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ;	9
[2010]	(2010) 14 एस. सी. सी. 496 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 274 : **प्रशांता कुमार सरकार** बनाम **आशीष चटर्जी और अन्य** ।	11

मूल (दांडिक) अधिकारिता : 2020 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका (एम) सं. 806.

वर्तमान जमानत याचिका पुलिस थाना पधार, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश में रजिस्ट्रीकृत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 28/2020 वाले मामले में नियमित जमानत मंजूर करने हेतु उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई है ।

याची की ओर से श्री रितेश भारद्वाज

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अरविन्द शर्मा, सहायक महाधिवक्ता और कुणाल ठाकुर, उप महाधिवक्ता

आदेश

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – जमानत याची, अर्थात् उत्तम सिंह जो तारीख 21 फरवरी, 2020 से अभिरक्षा/कारागार में है, ने दंड प्रक्रिया

संहिता, 1973 की धारा 439 के अधीन वर्तमान कार्यवाहियां फाइल करते हुए इस न्यायालय से संपर्क किया है और उसके द्वारा इस न्यायालय से यह प्रार्थना की गई है कि उसे पुलिस थाना पधार, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश में भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 452, 376, 506, 323 और 34 के अधीन रजिस्ट्रीकृत मामले जो, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 28/2020, तारीख 22 फरवरी, 2020 से संबंधित है, में नियमित जमानत मंजूर करने हेतु प्रार्थना की गई है ।

2. तारीख 30 जून, 2020 के आदेश के निबंधनानुसार फाइल की गई प्रास्थिति रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि पीड़िता/अभियोक्त्री, आयु 45 वर्ष (उसकी पहचान गुप्त रखने के लिए नाम प्रकट नहीं किया गया है) ने पुलिस थाना, पधार, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश में तारीख 19 फरवरी, 2020 को एक शिकायत दर्ज की थी जिसमें यह अभिकथन किया गया है कि जमानत याची ने अप्राधिकृत रूप से उसके कक्ष में प्रवेश किया और उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर यौन हमला किया । पीड़िता/अभियोक्त्री ने पुलिस के समक्ष यह तथ्य प्रकट किया है कि अभिकथित घटना के दिन उसकी पुत्रवधु भी उसके घर में मौजूद थी किंतु वह रात्रि का भोजन करने के पश्चात् भूतल स्थित एक कक्ष में सोने के लिए चली गई थी । उसने यह अभिकथन किया है कि रात्रि लगभग 8.10 बजे जमानत याची उसके कमरे में प्रविष्ट हुआ और उसने उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर यौन हमला किया किंतु उसी दौरान जमानत याची की पत्नी और एक महिला, अर्थात् शांता देवी भी कक्ष में आ गई और उन्होंने मिलकर उसकी पिटाई की जिसके पश्चात् भूतल पर सो रही उसकी पुत्रवधु उसकी चीख-पुकार सुनने के पश्चात् घटनास्थल पर पहुंची । उसने यह भी अभिकथन किया है कि उसकी पुत्रवधु ने जमानत याची की पत्नी और अन्य महिला के चंगुल से उसे मुक्त किया । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में वर्तमान प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसके ब्यौरे ऊपर दिए गए हैं, तारीख 22 फरवरी, 2020 को जमानत याची के विरुद्ध दर्ज की गई जिसके परिणामस्वरूप जमानत याची को गिरफ्तार किया गया और वह उसी समय से अभिरक्षा/कारावास में है ।

3. श्री कुणाल, विद्वान् उप महाधिवक्ता ने सक्षम न्यायालय में चालान फाइल किए जाने संबंधी तथ्य को स्वीकार करते हुए यह प्रतिवाद किया है कि अभियुक्त द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए वह किसी प्रकार की दया का पात्र नहीं है और इस प्रकार उसकी ओर से जमानत मंजूर किए जाने हेतु की गई प्रार्थना को नामंजूर किया जाए । उन्होंने यह भी प्रतिवाद किया है कि यद्यपि इस मामले में अन्वेषण पूरा हो चुका है और जमानत याची से किसी भी प्रकार की कोई बरामदगी होना भी शेष नहीं है, फिर भी चूंकि इस मामले में अनुपूरक चालान जिसके साथ चिकित्सा अधिकारी द्वारा दी गई राय और साथ ही न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट को भी संलग्न किया जाना है, अभी सक्षम न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया गया है इसलिए इस प्रक्रम पर जमानत याची को जमानत पर छोड़ना न्याय के हित में नहीं होगा ।

4. पक्षकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुना तथा इस न्यायालय को उपलब्ध कराई गई मामला प्रास्थिति रिपोर्ट का परिशीलन किया और तदोपरान्त यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अभिकथित घटना की तारीख को पीड़िता/अभियोक्त्री अपने घर में अकेली नहीं थी । इसके बजाय उसकी पुत्रवधु भूतल पर सो रही थी और इस तथ्य को देखते हुए यह विश्वास करना कठिन है कि पीड़िता/अभियोक्त्री ने उस समय चीख-पुकार की होगी जब जमानत याची उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर यौन हमला कर रहा था । यदि पीड़िता/अभियोक्त्री ने चीख-पुकार की होती तो अवश्य ही भूतल पर सो रही उसकी पुत्रवधु उसे बचाने के लिए उसके कक्ष में आती किंतु वर्तमान मामले में जब पीड़िता/अभियोक्त्री जमानत याची के साथ कक्ष में मौजूद थी उस समय जमानत याची की पत्नी एक अन्य महिला, अर्थात् शांता देवी के साथ उसके कक्ष में आई और उन्होंने मिलकर उसकी पिटाई की क्योंकि स्वयं पीड़िता/अभियोक्त्री के स्वयं के कथनानुसार उसकी पुत्रवधु ने ही उसकी चीख-पुकार सुनकर उसे जमानत याची की पत्नी और शांता देवी नामक अन्य महिला के चंगुल से छुड़ाया था । इस प्रकार पीड़िता/अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत की गई कहानी जैसा कि यहां ऊपर

उल्लेख किया गया है, अत्यधिक अविश्वसनीय प्रतीत होती है और इस प्रकार यह न्यायालय याची का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत किए गए इस प्रतिवाद से सहमत होने के लिए आबद्ध है कि पीड़िता/अभियोक्त्री की जमानत याची के साथ पूर्व में कोई निकट संबंध थे ।

5. इन सब बातों को यदि छोड़ दिया जाए तब भी अभिलेख पर प्रस्तुत चिकित्सीय साक्ष्य से अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं होता है । अभिकथित घटना के पश्चात् पीड़िता/अभियोक्त्री की जांच करने वाले डाक्टर ने यह राय व्यक्त की है कि पीड़िता/अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाह्य और आंतरिक क्षति नहीं पाई गई है । चिकित्सा अधिकारी ने अपनी अंतिम रिपोर्ट में यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि इस प्रकार का कोई चिह्न विद्यमान नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि योनि में प्रवेशन किया गया है किंतु यौन हमले से पूरी तरह इनकार नहीं किया जा सकता ।

6. यद्यपि मामले के पूर्वोक्त पहलुओं पर विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अन्वेषण अभिकरण की ओर से अभिलेख पर रखे जाने वाले संपूर्ण साक्ष्यों के आधार पर विचार किया जाएगा और तद्नुसार वह अपना विनिश्चय देगा किंतु मामले के पूर्वोक्त पहलुओं पर विचार करने पर इस न्यायालय को ऐसा कोई कारण प्रतीत नहीं होता है जिसके लिए विचारण के दौरान अनिश्चित अवधि के लिए जमानत याची को कारागार में बंद रखा जाए, विशेष रूप से उस समय जब सक्षम न्यायालय के समक्ष चालान फाइल कर दिया गया है और जमानत याची से किसी भी प्रकार की कोई बरामदगी की जानी शेष नहीं है ।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय और साथ ही इस न्यायालय द्वारा भी अनेकानेक मामलों में बार-बार यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी व्यक्ति को उस समय तक निर्दोष समझा जाता है जब तक कि उसका दोष विधि के अनुसार साबित न कर दिया जाए । वर्तमान मामले में जमानत याची का दोष, यदि कोई है, अभी विधि के अनुसार साबित नहीं किया गया है ।

8. हाल ही में माननीय उच्चतम न्यायालय ने दांडिक अपील सं. 227/2018, **दाताराम सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में जिसका विनिश्चय तारीख 6 फरवरी, 2018 को किया गया है, स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि निर्दोष होने की उपधारणा दांडिक न्यायशास्त्र का मूलभूत सिद्धांत है जिससे यह अभिप्रेत है कि किसी व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि वह दोषी न पाया जाए । जमानत मंजूर करने के अनुरोध पर विचार करते समय माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि इस बात को अभिनिश्चित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है कि क्या अभियुक्त ने अन्वेषण प्रक्रिया में अन्वेषण अधिकारी के समाधानप्रद रूप में भाग लिया है और वह फरार नहीं हुआ या अन्वेषण अधिकारी द्वारा अपेक्षा किए जाने पर उसके समक्ष उपस्थित नहीं हुआ । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि यदि कोई अभियुक्त अन्वेषण अधिकारी से स्वयं को नहीं छिपा रहा या उत्पीड़न के वास्तविक और अभिव्यक्त भय से स्वयं को छिपा रहा है तो किसी न्यायाधीश के लिए यह एक ऐसा कारक होगा जिस पर समुचित मामले में विचार किए जाने की आवश्यकता होगी । पूर्वोक्त निर्णय के सुसंगत पैराओं को यहां नीचे उद्धृत किया गया है :–

> "2. दांडिक न्यायशास्त्र का मूलभूल सिद्धांत निर्दोष होने संबंधी उपधारणा है जिससे यह अभिप्रेत है कि किसी व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि उसे दोषी न पाया जाए । तथापि, हमारी दांडिक विधि में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहां कतिपय विनिर्दिष्ट अपराधों के संबंध में स्वयं को निर्दोष साबित करने का भार अभियुक्त को वहन करना होता है और इस प्रकार यह सिद्धांत विलोमतः कार्य करता है किंतु यह एक अन्य विषय है और यह अन्य अपराधों के संबंध में उक्त मूलभूत सिद्धांत से विचलन अनुज्ञात नहीं करता । हमारे दांडिक न्यायशास्त्र का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि जमानत मंजूर किया जाना एक साधारण नियम है और किसी व्यक्ति को कारागार या सुधार गृह (इनमें से चाहे किसी भी अभिव्यक्ति का उपयोग किया जाए) में रखना एक

[1] ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 980.

अपवाद है । दुर्भाग्यवश ऐसा प्रतीत होता है कि इन मूल सिद्धांतों में से कुछ सिद्धांत समय के साथ असंगत हो गए हैं जिसका परिणाम यह है कि अधिकाधिक व्यक्तियों को कारावास में डाला जा रहा है और वह भी लंबी अवधियों के लिए । यह हमारे दांडिक न्यायशास्त्र और हमारे समाज के लिए उपयुक्त नहीं है ।

3. इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जमानत मंजूर करना या उससे इनकार करना संपूर्ण रूप से किसी मामले पर विचार करने वाले न्यायाधीश का विवेकाधिकार है किंतु देश में इस न्यायालय और लगभग प्रत्येक उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए बड़ी संख्या में निर्णयों द्वारा इस न्यायिक विवेकाधिकार के प्रयोग को सीमित किया गया है । फिर भी कभी-कभार न्यायालय को इस बात पर विचार करना आवश्यक है कि क्या किसी अभियुक्त को जमानत दिए जाने से इनकार करना उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार उचित है ।

4. इस प्रकार का आत्ममंथन करते हुए ऐसे कारकों में से, जिन पर विचार किए जाने की आवश्यकता है, एक कारक यह है कि क्या अभियुक्त को अन्वेषणों के दौरान उस समय गिरफ्तार किया गया था जब शायद उस व्यक्ति के पास साक्ष्य से छेड़छाड़ करने या साक्षियों को प्रभावित करने का सर्वोत्तम अवसर था । यदि अन्वेषण अधिकारी अन्वेषणों के दौरान किसी अभियुक्त को गिरफ्तार करना आवश्यक नहीं समझता है तो आरोप पत्र फाइल किए जाने के पश्चात् उस व्यक्ति को न्यायिक अभिरक्षा में रखे जाने के लिए सुदृढ़ मामला बनाया जाना चाहिए । इस प्रकार यह अभिनिश्चित करना भी महत्वपूर्ण है कि क्या अभियुक्त अन्वेषण अधिकारी के समाधानप्रद रूप में अन्वेषणों में भाग ले रहा था और वह फरार नहीं हुआ था या अन्वेषण अधिकारी द्वारा अपेक्षा किए जाने पर उसके समक्ष उपस्थित नहीं हो रहा था । निश्चित रूप से यदि कोई अभियुक्त अन्वेषण अधिकारी से स्वयं को छिपा नहीं रहा है या उत्पीड़न के किसी अभिव्यक्त और वास्तविक भय के कारण

स्वयं को अन्वेषण अधिकारी से छिपा रहा है तो यह भी एक ऐसा कारक होगा जिसे न्यायाधीश को किसी उपयुक्त मामले में विचार में लेना आवश्यक होगा । न्यायाधीश के लिए इस बात पर भी विचार करना आवश्यक है कि क्या अभियुक्त ने पहली बार कोई अपराध किया है और यदि ऐसा है तो ऐसे अपराधों की प्रकृति क्या है और उसका साधारण आचरण कैसा है । किसी अभियुक्त की निर्धनता या मानित दीनहीनता भी एक अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है और संसद ने भी इस कारक पर विचार किया है और उसे दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 436 में एक स्पष्टीकरण के रूप में अंत:स्थापित किया है । संसद् ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में धारा 436क अंत:स्थापित करके कारावास भेजे जाने के संबंध में एक साम्यापूर्ण नर्म दृष्टिकोण अपनाया है ।

5. संक्षेप में किसी न्यायाधीश द्वारा किसी संदिग्ध या अभियुक्त को पुलिस अभिरक्षा या न्यायिक अभिरक्षा में भेजे जाने संबंधी आवेदन पर कार्यवाही करते समय मानवीय दृष्टिकोण अपनाया जाना अपेक्षित है । इस प्रकार के दृष्टिकोण को अपनाने के लिए अनेक कारण विद्यमान हैं जिनके अंतर्गत अभियुक्त के आत्म-सम्मान को अक्षुण्ण रखना भी है, तथापि, चाहे ऐसा व्यक्ति कितना भी दरिद्र क्यों न हो, इसके अतिरिक्त, संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन भी यही अपेक्षा की गई है और इस तथ्य को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि कारागारों में पहले ही अत्यधिक भीड़ है जिसके कारण सामाजिक और अन्य समस्याएं सामने आ रही हैं जैसा कि इस न्यायालय द्वारा 1382 कारागारों में विद्यमान अमानवीय परिस्थितियों के संबंध में उल्लेख किया गया है ।"

9. माननीय उच्च न्यायालय ने **संजय चंद्रा** बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[1] वाले मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :-

[1] (2012) एस. सी. सी. 40 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 830.

"जमानत का उद्देश्य, जमानत के संबंध में एक युक्तियुक्त रकम तय करके किसी अभियुक्त द्वारा उसके विरुद्ध चलाए जा रहे विचारण में उसकी उपस्थिति को सुनिश्चित करना है । जमानत का उद्देश्य न तो शास्तिक है और न ही निवारक । किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता को समाप्त किए जाने को तब तक एक दंड के रूप में माना जाना चाहिए जब तक कि यह सुनिश्चित करने की अपेक्षा की जा सकती हो कि कोई अभियुक्त, जब उसे ऐसा करने के लिए कहा जाए तो वह उसके विरुद्ध चलाए जा रहे विचारण का सामना करेगा । न्यायालयों को इस सिद्धांत को मौखिक रूप से अधिक सम्मान देना होगा कि दंड दोषसिद्धि के पश्चात् आरंभ होता है और प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाता है जब तक कि उसके विरुद्ध सम्यक् रूप से विचारण का संचालन करके उसे सम्यक् रूप से दोषी न पाया जाए । विचारण के लंबित रहने के दौरान किसी व्यक्ति को अभिरक्षा में निरुद्ध करना अत्यधिक कठिनाई का कारण है । समय-समय पर आवश्यकता यह मांग करती है कि कुछ ऐसे व्यक्तियों जिन्हें अभी सिद्धदोष नहीं ठहराया गया है, को विचारण के दौरान उनकी उपस्थिति को सुनिश्चित करने हेतु विचारण लंबित रहने के दौरान अभिरक्षा में रखा जाना चाहिए किंतु ऐसे मामलों में 'आवश्यकता' एक प्रचालनात्मक परीक्षा है । भारत में यह संविधान में समाविष्ट निजी स्वतंत्रता की निजी अवधारणा से बिल्कुल प्रतिकूल होगा कि किसी व्यक्ति को किसी ऐसे मामले के संबंध में दंडित किया जाए जिसके संबंध में उसे सिद्धदोष नहीं ठहराया गया है या यह कि किन्हीं परिस्थितियों में उसे केवल इस विश्वास के आधार पर उसकी निजी स्वतंत्रता से वंचित रखा जाए कि यदि उसे निर्मुक्त कर दिया जाए तो वह साक्ष्य और साक्षियों के साथ छेड़छाड़ करेगा, सिवाय अत्यधिक असामान्य परिस्थितियों के इस प्रकार का विनिश्चय उचित नहीं है । जमानत से इनकार करने का उद्देश्य निवारक प्रकृति का है, इस प्रकार के प्रश्न के अलावा किसी व्यक्ति को इस तथ्य की अनेदेखी नहीं करनी चाहिए कि दोषसिद्धि से पूर्व किए गए किसी कारावास में

सारवान् रूप से शास्तिक अन्तर्वस्तु सम्मिलित है और किसी भी न्यायालय के लिए किसी पूर्व आचार को अननुमोदित करते हुए जमानत से इनकार करना अनुचित होगा चाहे अभियुक्त को उसके लिए सिद्धदोष ठहराया गया है अथवा नहीं या फिर किसी व्यक्ति को सबक सिखाने के लिए कारावास में रखे जाने के प्रयोजन के लिए किसी सिद्धदोष न ठहराए गए व्यक्ति को जमानत से इनकार करना पूर्णतया अनुचित है ।"

10. यह कहना आवश्यक नहीं है कि जमानत का उद्देश्य विचारण के दौरान अभियुक्त की उपस्थिति को सुनिश्चित करना है और इस प्रश्न का समाधान करने के लिए कि क्या जमानत मंजूर की जानी चाहिए अथवा उससे इनकार किया जाना चाहिए, उचित रूप से इस परीक्षा को लागू किया जाना चाहिए कि क्या इस बात की संभावना है कि पक्षकार उसके विरुद्ध विचारण का सामना करने के लिए न्यायालय में उपस्थित होगा । अन्यथा दंड के रूप में जमानत से इनकार नहीं किया जा सकता क्योंकि यह एक प्रकार का दंडादेश होगा । अन्यथा भी जमानत एक सामान्य नियम है न कि कारावास में भेजा जाना । न्यायालय को आरोपों की प्रकृति, उनका समर्थन करने वाले साक्ष्य की प्रकृति, ऐसे दंड की गंभीरता जो दोषसिद्धि के परिणामस्वरूप अधिरोपित किया जाएगा, अभियुक्त का चरित्र/आचार, वे परिस्थितियां जिनके अधीन अभियुक्त विशिष्ट रूप से उस अपराध में संलिप्त हुआ, आदि पर विचार करना चाहिए ।

11. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **प्रशांता कुमार सरकार** बनाम **आशीष चटर्जी और अन्य**[1] वाले मामले में जमानत संबंधी किसी याचिका का विनिश्चय करते समय विचार में लिए जाने वाले निम्नलिखित सिद्धांतों को अधिकथित किया है :–

"(i) क्या यह विश्वास करने के लिए कोई प्रथमदृष्ट्या या युक्तियुक्त आधार विद्यमान है कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है ;

---

[1] (2010) 14 एस. सी. सी. 496 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 274.

(ii) आरोपों की प्रकृति और उनकी गंभीरता ;

(iii) दोषसिद्धि की दशा में दंड की कठोरता ;

(iv) यदि अभियुक्त को जमानत पर निर्मुक्त कर दिया जाता है तो उसके फरार होने या भाग जाने का खतरा ;

(v) अभियुक्त का आचार, व्यवहार, उसके पास मौजूद साधन, उसकी हैसियत और प्रतिष्ठा ;

(vi) उसके द्वारा अपराध को दोहराए जाने की संभावना ;

(vii) साक्षियों को प्रभावित करने की युक्तियुक्त संभावना ; और

(viii) अंत में निःसंदेह रूप से जमानत मंजूर किए जाने पर न्याय न हो सकने का खतरा ।"

12. परिणामतः ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए वर्तमान जमानत याचिका मंजूर की जाती है । याची के संबंध में यह आदेश दिया जाता है कि उसके द्वारा 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) की राशि के निजी बंधपत्र और समान रकम की एक प्रतिभूति विद्वान् विचारण न्यायालय के समाधानप्रद रूप में प्रस्तुत किए जाने के अधीन रहते हुए और साथ ही निम्नलिखित शर्तों के अधीन रहते हुए उसे जमानत पर निर्मुक्त कर दिया जाए, :-

क. वह पूछताछ के प्रयोजन के लिए यदि इस प्रकार की अपेक्षा की जाए तो स्वयं को उपलब्ध कराएगा तथा सुनवाई की प्रत्येक तारीख पर नियमित रूप से विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा और यदि किसी कारण से वह ऐसा करने से निवारित होता है तो वह उपयुक्त आवेदन फाइल करके निजी रूप से उपस्थित होने से छूट प्रदान करने का अनुरोध करेगा ;

ख. वह किसी अभियोजन साक्ष्य से छेड़छाड़ नहीं करेगा और न ही किसी भी रीति में मामले के अन्वेषण में कोई हस्तक्षेप करेगा ;

ग. वह मामले के तथ्यों से परिचित किसी व्यक्ति को किसी

प्रकार का कोई प्रलोभन, धमकी या वचन नहीं देगा जिससे वह उसे न्यायालय या किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष कतिपय तथ्यों को प्रकट न करने हेतु मना सके ; और

घ. वह न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना भारत के राज्य क्षेत्र को नहीं छोड़ेगा ।

13. यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि याची अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करता है या उस पर अधिरोपित किन्हीं शर्तों का उल्लंघन करता है तो अन्वेषण अभिकरण उसकी जमानत को रद्द करने हेतु इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही करने हेतु स्वतंत्र होगा ।

14. यहां ऊपर किए गए किसी संप्रेक्षण के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह मामले के गुणागुण के संबंध में कोई टिप्पणी है और उपरोक्त संप्रेक्षण इस आवेदन के निपटारे तक ही सीमित होंगे ।

तद्नुसार इस जमानत याचिका का निपटारा किया जाता है ।

जमानत मंजूर की जाती है ।

पु.

संसद् के अधिनियम

दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961[1]

(1961 का अधिनियम संख्यांक 28)

[20 मई, 1961]

दहेज का देना या लेना प्रतिषिद्ध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के बारहवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ - (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख[2] को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. "दहेज" की परिभाषा - इस अधिनियम में, "दहेज" से कोई ऐसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति अभिप्रेत है जो विवाह के समय या उसके पूर्व [3][या पश्चात् किसी समय] -

(क) विवाह के एक पक्षकार द्वारा विवाह के दूसरे पक्षकार को ; या

(ख) विवाह के किसी भी पक्षकार के माता-पिता द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विवाह के किसी भी पक्षकार को या किसी अन्य व्यक्ति को,

---

[1] 1968 के अधिनियम सं. 26 की धारा 3 और अनुसूची भाग 1 द्वारा पांडिचेरी पर विस्तारित ।

[2] 1 जुलाई, 1961 (भारत का राजपत्र, असाधारण, भाग 2, अनुभाग 3(ii), पृष्ठ 1005 पर मुद्रित अधिसूचना सं. का. आ. 1410, तारीख 20-6-1961 देखिए) ।

[3] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 2 द्वारा (19-11-1986 से) "या पश्चात्" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[1][उक्त पक्षकारों के विवाह के संबंध में] या तो प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: दी गई है या दी जाने के लिए करार की गई है, किन्तु उन व्यक्तियों के संबंध में जिन्हें मुस्लिम स्वीय विधि (शरीयत) लागू होती है, मेहर इसके अंतर्गत नहीं है ।

[2]* * * * *

स्पष्टीकरण 2 – "मूल्यवान प्रतिभूति" पद का वही अर्थ है जो भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 30 में है ।

3. दहेज देने या दहेज लेने के लिए शास्ति – [3][(1) यदि कोई व्यक्ति, इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात्, दहेज देगा या लेगा अथवा दहेज देना या लेना दुष्प्रेरित करेगा [4][तो वह कारावास से, जिसकी अवधि [5][पांच वर्ष से कम की नहीं होगी, और जुर्माने से, जो पन्द्रह हजार रुपए से या ऐसे दहेज के मूल्य की रकम तक का, इनमें से जो भी अधिक हो, कम नहीं होगा,] दण्डनीय होगा :

परन्तु न्यायालय, ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से जो निर्णय में लेखबद्ध किए जाएंगे, [6][पांच वर्ष] से कम की किसी अवधि के कारावास का दण्डादेश अधिरोपित कर सकेगा ।]

[7][(2) उपधारा (1) की कोई बात, –

(क) ऐसी भेंटों को, जो वधू को विवाह के समय (उस

---

[1] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 2 द्वारा (2-10-1985 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 2 द्वारा (2-10-1985 से) लोप किया गया ।

[3] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 3 द्वारा (2-10-1985 से) धारा 3 को उसकी उपधारा (1) के रूप में पुनः संख्यांकित किया गया ।

[4] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 3 द्वारा (2-10-1985 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[5] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 3 द्वारा (19-11-1986 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[6] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 3 द्वारा (19-11-1986 से) "छह मास" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित

[7] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 3 द्वारा (2-10-1985 से) अंतःस्थापित ।

निमित्त कोई मांग किए बिना) दी जाती है या उनके संबंध में लागू नहीं होंगी :

परन्तु यह तब तक कि ऐसी भेंटें इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार रखी गई सूची में दर्ज की जाती हैं ;

(ख) ऐसी भेंटों को जो वर को विवाह के समय (उस निमित्त कोई मांग किए बिना) दी जाती हैं या उनके संबंध में लागू नहीं होगी :

परन्तु यह तब जब कि ऐसी भेंटें, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार रखी गई सूची में दर्ज की जाती हैं :

परन्तु यह और कि जहां ऐसी भेंटें जो वधू द्वारा या उसकी ओर से या किसी व्यक्ति द्वारा जो वधू का नातेदार है दी जाती हैं वहां ऐसी भेंटें रूढ़िगत प्रकृति की हैं और उनका मूल्य, ऐसे व्यक्ति की वित्तीय प्रास्थिति को ध्यान में रखते हुए, जिसके द्वारा या जिसकी ओर से ऐसी भेंटें दी गई हैं अधिक नहीं हैं ।]

[1][**4. दहेज मांगने के लिए शास्ति** – यदि कोई व्यक्ति, यथास्थिति, वधू या वर के माता-पिता या अन्य नातेदार या संरक्षक से किसी दहेज की प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से मांग करेगा तो वह कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी, किन्तु दो वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से जो दस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा :

परन्तु न्यायालय ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णय में उल्लिखित किए जाएंगे, छह मास से कम की किसी अवधि के कारावास का दण्डादेश अधिरोपित कर सकेगा ।]

[2][**4क. विज्ञापन पर पाबंदी** – यदि कोई व्यक्ति –

---

[1] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 4 द्वारा (2-10-1985 से) धारा 4 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 4 द्वारा (19-11-1986 से) अंतःस्थापित ।

(क) अपने पुत्र या पुत्री या किसी अन्य नातेदार के विवाह के प्रतिफलस्वरूप किसी समाचारपत्र, नियतकालिक पत्रिका, जरनल या किसी अन्य माध्यम से, अपनी संपत्ति या किसी धन के अंश या दोनों के किसी कारबार या अन्य हित में किसी अंश की प्रस्थापना करेगा ;

(ख) खण्ड (क) में निर्दिष्ट कोई विज्ञापन मुद्रित करेगा या प्रकाशित करेगा या परिचालित करेगा,

तो वह कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी, किन्तु जो पांच वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से, जो पन्द्रह हजार रुपए तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा :

परन्तु न्यायालय, ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से जो निर्णय में लेखबद्ध किए जाएंगे, छह मास से कम की किसी अवधि के कारावास का दंडादेश अधिरोपित कर सकेगा ।]

5. दहेज देने या लेने के लिए करार का शून्य होना – दहेज देने या लेने के लिए करार शून्य होगा ।

6. दहेज का पत्नी या उसके वारिसों के फायदे के लिए होना – (1) जहां कोई दहेज ऐसी स्त्री से भिन्न, जिसके विवाह के संबंध में वह दिया गया है, किसी व्यक्ति द्वारा प्राप्त किया जाता है, वहां वह व्यक्ति, उस दहेज को, –

(क) यदि वह दहेज विवाह से पूर्व प्राप्त किया गया था तो विवाह की तारीख के पश्चात् [1][तीन मास] के भीतर ; या

(ख) यदि वह दहेज विवाह के समय या उसके पश्चात् प्राप्त किया गया था, तो उसकी प्राप्ति की तारीख के पश्चात् [1][तीन मास] के भीतर ; या

(ग) यदि वह उस समय जब स्त्री अवयस्क थी तब प्राप्त किया गया था तो उसके अठारह वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् [1][तीन मास] के भीतर,

---

[1] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 3 द्वारा (2-10-1985 से) "एक वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

स्त्री को अन्तरित कर देगा और ऐसे अन्तरण तक उसे न्यास के रूप में स्त्री के फायदे के लिए धारण करेगा ।

[1][(2) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) द्वारा अपेक्षित किसी संपत्ति का, उसके लिए विनिर्दिष्ट परिसीमा काल के भीतर [2][या उपधारा (3) द्वारा अपेक्षित] अन्तरण करने में असमर्थ रहेगा तो वह कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी किन्तु दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, [3][जो पांच हजार रुपए से कम का नहीं होगा किन्तु दस हजार रुपए तक का हो सकेगा] या दोनों से, दंडनीय होगा ।]

(3) जहां उपधारा (1) के अधीन किसी संपत्ति के लिए हकदार स्त्री की उसे प्राप्त करने के पूर्व मृत्यु हो जाती है, वह स्त्री के वारिस उसे तत्समय धारण करने वाले व्यक्ति से दावा करने के हकदार होंगे :

[2][परन्तु जहां ऐसी स्त्री की मृत्यु उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर प्राकृतिक कारणों से अन्यथा हो जाती है वहां ऐसी संपत्ति, –

(क) यदि उसकी कोई संतान नहीं है तो उसके माता-पिता को अंतरित की जाएगी, या

(ख) यदि उसकी संतान है तो उसकी ऐसी संतान को अंतरित की जाएगी और ऐसे अंतरण तक ऐसी संतान के लिए न्यास के रूप में धारण की जाएगी ।]

[4][(3क) जहां उपधारा (1) [2][या उपधारा (3)] द्वारा अपेक्षित संपत्ति का अंतरण करने में असफल रहने के लिए, उपधारा (2) के अधीन सिद्धदोष ठहराए गए किसी व्यक्ति ने, उस उपधारा के अधीन उसके सिद्धदोष ठहराए जाने के पूर्व, ऐसी संपत्ति का, उसके लिए हकदार स्त्री

---

[1] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 5 द्वारा (2-10-1985 से) उपधारा (2) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 5 द्वारा (19-11-1986 से) अंतःस्थापित ।

[3] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 5 द्वारा (19-11-1986 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 5 द्वारा (2-10-1985 से) अंतःस्थापित ।

को या, यथास्थिति, [1][उसके वारिसों, माता-पिता या संतान] को अंतरण नहीं किया है वहां न्यायालय, उस उपधारा के अधीन दण्ड अधिनिर्णीत करने के अतिरिक्त, लिखित आदेश द्वारा, यह निदेश देगा कि ऐसा व्यक्ति, ऐसी संपत्ति का, यथास्थिति, ऐसी स्त्री या [1][उसके वारिसों, माता-पिता या संतान] को ऐसी अवधि के भीतर जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, अंतरण करे और यदि ऐसा व्यक्ति ऐसे निदेश का इस प्रकार विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर अनुपालन करने में असफल रहेगा तो संपत्ति के मूल्य के बराबर रकम उससे ऐसे वसूल की जा सकेगी मानो वह ऐसे न्यायालय द्वारा अधिरोपित जुर्माना हो और उसका, यथास्थिति, उस स्त्री या [1][उसके वारिसों, माता-पिता या संतान] को संदाय किया जा सकेगा ।]

(4) इस धारा की कोई बात धारा 3 या धारा 4 के उपबंधों पर प्रभाव नहीं डालेगी ।

[2][**7. अपराधों का संज्ञान** – (1) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, –

(क) महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय से अवर कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का विचारण नहीं करेगा ;

(ख) कोई न्यायालय, इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान, –

(i) अपनी जानकारी पर या ऐसे अपराध को गठित करने वाले तथ्यों को पुलिस रिपोर्ट पर, या

(ii) अपराध से व्यथित व्यक्ति या ऐसे व्यक्ति के माता-पिता या अन्य नातेदार द्वारा अथवा किसी मान्यताप्राप्त कल्याण संस्था या संगठन द्वारा किए गए परिवाद पर,

---

[1] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 5 द्वारा (19-11-1986 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 6 द्वारा (2-10-1985 से) धारा 7 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

ही करेगा, अन्यथा नहीं ;

(ग) महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराए गए किसी व्यक्ति के विरुद्ध, इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत कोई दण्डादेश पारित करे ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, "मान्यताप्राप्त कल्याण संस्था या संगठन" से कोई ऐसी समाज कल्याण संस्था या संगठन अभिप्रेत है जिसे इस निमित्त केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा मान्यता दी गई है ।

(2) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 36 की कोई बात इस अधिनियम के अधीन दण्डनीय किसी अपराध को लागू नहीं होगी ।]

[1][(3) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में किसी बात के होते हुए भी, अपराध से व्यथित व्यक्ति द्वारा किया गया कोई कथन ऐसे व्यक्ति को इस अधिनियम के अधीन अभियोजन का भागी नहीं बनाएगा ।]

[2][**8. अपराधों का कुछ प्रयोजनों के लिए संज्ञेय होना तथा जमानतीय और अशमनीय होना** – (1) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) इस अधिनियम के अधीन अपराधों को वैसे ही लागू होगी मानो वे –

(क) ऐसे अपराधों के अन्वेषण के प्रयोजनों के लिए ; और

(ख) निम्नलिखित से भिन्न विषयों के प्रयोजनों के लिए –

(i) उस संहिता की धारा 42 में विनिर्दिष्ट विषय ; और

(ii) किसी व्यक्ति को वारण्ट के बिना या मजिस्ट्रेट के किसी आदेश के बिना गिरफ्तारी, संज्ञेय अपराध हों ।

(2) इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक अपराध [3][अजमानतीय] और

---

[1] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 6 द्वारा (19-11-1986 से) अंतःस्थापित ।

[2] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 7 द्वारा (2-10-1985 से) धारा 8 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 7 द्वारा (19-11-1986 से) "जमानतीय" शब्द के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

अशमनीय होगा ।]

[1][**8क. कुछ मामलों में सबूत का भार** – जहां कोई व्यक्ति धारा 3 के अधीन कोई दहेज लेने या दहेज का लेना दुष्प्रेरित करने के लिए या धारा 4 के अधीन दहेज मांगने के लिए अभियोजित किया जाता है वहां यह साबित करने का भार उसी पर होगा कि उसने उन धाराओं के अधीन कोई अपराध नहीं किया है ।

8ख. दहेज प्रतिषेध अधिकारी – (1) राज्य सरकार उतने दहेज प्रतिषेध अधिकारी नियुक्त कर सकेगी जितने वह ठीक समझे और वे क्षेत्र विनिर्दिष्ट कर सकेगी जिनकी बाबत वे अपनी अधिकारिता और शक्तियों का प्रयोग इस अधिनियम के अधीन करेंगे ।

(2) प्रत्येक दहेज प्रतिषेध अधिकारी निम्नलिखित शक्तियों का प्रयोग और कृत्यों का पालन करेगा, अर्थात् :-

(क) यह देखना कि इस अधिनियम के उपबंधों का अनुपालन किया जाता है ;

(ख) दहेज देने या दहेज लेने को दुष्प्रेरित करने या दहेज मांगने को यथासंभव रोकना ;

(ग) इस अधिनियम के अधीन अपराध करने वाले व्यक्तियों के अभियोजन के लिए ऐसा साक्ष्य एकत्र करना जो आवश्यक हो ; और

(घ) ऐसे अतिरिक्त कार्य करना जो राज्य सरकार द्वारा उसे सौंपे जाएं या इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों में विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

(3) राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा दहेज प्रतिषेध अधिकारी को किसी पुलिस अधिकारी की ऐसी शक्तियां प्रदत्त कर सकेगी जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाएं और वह ऐसी शक्तियों का प्रयोग ऐसी परिसीमाओं और शर्तों के अधीन रहते हुए करेगा जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विनिर्दिष्ट की जाएं ।

---

[1] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 8 द्वारा (19-11-1986 से) अंतःस्थापित ।

(4) राज्य सरकार दहेज प्रतिषेध अधिकारी को इस अधिनियम के अधीन उसके कृत्यों के दक्ष पालन में सलाह देने और सहायता करने के प्रयोजन के लिए, एक सलाहकार बोर्ड नियुक्त कर सकेगी जिसमें उस क्षेत्र से, जिसकी बाबत ऐसा दहेज प्रतिषेध अधिकारी उपधारा (1) के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करता है, पांच से अनधिक समाज कल्याण कार्यकर्ता होंगे (जिनमें से कम से कम दो महिलाएं होंगी) ।]

9. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकती है ।

[1][(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) वह प्ररूप जिसमें और वह रीति जिससे और ऐसे व्यक्ति जिनके द्वारा धारा 3 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट भेंटों की कोई सूची रखी जाएगी और उनसे संबंधित सभी अन्य विषय ; और

(ख) इस अधिनियम के प्रशासन की बाबत नीति और कार्रवाई का बेहतर समन्वय ।]

[2][(3)] इस धारा के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष जब वह सत्र में हो, तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा [3][यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व] दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा किन्तु नियम के

---

[1] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 8 द्वारा (2-10-1985 से) अंतःस्थापित ।

[2] 1984 के अधिनियम सं. 63 की धारा 8 द्वारा (2-10-1985 से) पुनःसंख्यांकित ।

[3] 1983 के अधिनियम सं. 20 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा (15-3-1984 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

[1][**10. राज्य सरकार की नियम बनाने की शक्ति** – (1) राज्य सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजन को कार्यान्वित करने के लिए, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) दहेज प्रतिषेध अधिकारियों द्वारा धारा 8ख की उपधारा (2) के अधीन पालन किए जाने वाले अतिरिक्त कृत्य ;

(ख) वे परिसीमाएं और शर्तें जिनके अधीन रहते हुए दहेज प्रतिषेध अधिकारी धारा 8ख की उपधारा (3) के अधीन अपने कृत्यों का प्रयोग कर सकेंगे ।

(3) राज्य सरकार द्वारा इस धारा के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखा जाएगा ।]

---

[1] 1986 के अधिनियम सं. 43 की धारा 9 द्वारा (19-11-1986 से) धारा 10 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

नियम

*दहेज प्रतिषेध (वर-वधू भेंट सूची) नियम, 1985

सा. का. नि. 664(अं) – केन्द्रीय सरकार, दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 (1961 का 28) की धारा 9 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, निम्नलिखित नियम बनाती है :–

1. संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ – (1) इन नियमों का संक्षिप्त नाम दहेज प्रतिषेध (वर-वधू भेंट सूची) नियम, 1985 है ।

(2) ये 2 अक्तूबर, 1985 को प्रवृत्त होंगे जो दहेज प्रतिषेध (संशोधन) अधिनियम, 1984 (1984 का 63) के प्रवृत्त होने के लिए नियत की गई तारीख है ।

2. नियम जिनके अनुसार भेंटों की सूचियां रखी जानी हैं – (1) विवाह के समय जो भेंटें वधू को दी जाती हैं उनकी एक सूची वधू रखेगी ।

(2) विवाह के समय जो भेंटें वर को दी जाती हैं उनकी एक सूची वर रखेगा ।

(3) उपनियम (1) या उपनियम (2) में निर्दिष्ट भेंटों की प्रत्येक सूची, –

(क) विवाह के समय या विवाह के पश्चात् यथासंभव शीघ्र तैयार की जाएगी ;

(ख) लिखित में होगी ;

(ग) उसमें होगा –

(i) प्रत्येक भेंट का संक्षिप्त विवरण ;

(ii) भेंट का अनुमानित मूल्य ;

(iii) उस व्यक्ति का नाम जिसने भेंट दी है ; और

(iv) यदि वह व्यक्ति जिसने भेंट दी है वधू या वर का

---

* भारत के राजपत्र, असाधारण भाग 2, खण्ड 3(i) में सा. का. नि. 664(अं) तारीख 19 अगस्त, 1985 के अधीन प्रकाशित ।

नातेदार है तो ऐसी नातेदारी का विवरण ;

(घ) वर और वधू दोनों द्वारा हस्ताक्षरित होगी ।

स्पष्टीकरण 1 – जहां वधू हस्ताक्षर करने में असमर्थ है, वहां वह उसे सूची पढ़कर सुनाई जाने के पश्चात् और उस व्यक्ति के, जिसने सूची में दी गई विशिष्टियों को इस प्रकार पढ़कर सुनाया है, उस सूची पर हस्ताक्षर प्राप्त करने के पश्चात् अपने हस्ताक्षर करने के बदले अपने अंगूठे का निशान लगा सकेगी ।

स्पष्टीकरण 2 – जहां वर हस्ताक्षर करने में असमर्थ है, वहां वह उसे सूची पढ़कर सुनाई जाने के पश्चात् और उस व्यक्ति के, जिसने सूची में दी गई विशिष्टियों को इस प्रकार पढ़कर सुनाया है, उस सूची पर हस्ताक्षर प्राप्त करने के पश्चात् अपने हस्ताक्षर करने के बदले अपने अंगूठे का निशान लगा सकेगा ।

(4) वर या वधू, यदि ऐसा चाहे तो उपनियम (1) या उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूचियों में से किसी एक पर या दोनों पर अपने किसी नातेदार या किन्हीं नातेदारों या विवाह के समय उपस्थित किसी अन्य व्यक्ति या किन्हीं व्यक्तियों के हस्ताक्षर प्राप्त कर सकती है ।

उपाबंध

भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) से उद्धरण

* * * * *

अध्याय 20क

पति या पति के नातेदारों द्वारा क्रूरता के विषय में

498क. किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उसके प्रति क्रूरता करना – जो कोई, किसी स्त्री का पति या पति का नातेदार होते हुए, ऐसी स्त्री के प्रति क्रूरता करेगा, वह कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डित किया जाएगा और जुर्माने से भी दण्डनीय होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "क्रूरता" से निम्नलिखित अभिप्रेत है :–

(क) जानबूझकर किया गया कोई आचरण जो ऐसी प्रकृति का है जिससे उस स्त्री को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित करने को या उस स्त्री के जीवन, अंग या स्वास्थ्य को (जो चाहे मानसिक हो या शारीरिक) गंभीर क्षति या खतरा कारित करने की संभावना है ; या

(ख) किसी स्त्री को इस दृष्टि से तंग करना कि उसको या उसके किसी नातेदार को किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की कोई मांग पूरी करने के लिए प्रपीड़ित किया जाए या किसी स्त्री को इस कारण तंग करना कि उसका कोई नातेदार ऐसी मांग पूरी करने में असफल रहा है ।

* * * * *

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का अधिनियम संख्यांक 2) से उद्धरण

* * * * *

174. आत्महत्या आदि पर पुलिस का जांच करना और रिपोर्ट देना – (1) जब पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी, या राज्य सरकार द्वारा उस निमित्त विशेषतया सशक्त किए गए किसी अन्य पुलिस अधिकारी

को यह इत्तिला मिलती है कि किसी व्यक्ति ने आत्महत्या कर ली है, अथवा कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति द्वारा या जीवजंतु द्वारा या किसी यंत्र द्वारा या दुर्घटना द्वारा मारा गया है, अथवा कोई व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में मरा है जिनसे उचित रूप से यह संदेह होता है कि किसी अन्य व्यक्ति ने कोई अपराध किया है तो वह मृत्यु समीक्षाएं करने में सशक्त निकटतम कार्यपालक मजिस्ट्रेट को तुरन्त उसकी सूचना देगा और जब तक राज्य सरकार द्वारा विहित किसी नियम द्वारा या जिला या उपखंड मजिस्ट्रेट के किसी साधारण या विशेष आदेश द्वारा अन्यथा निर्दिष्ट न हो वह उस स्थान को जाएगा जहां ऐसे मृत व्यक्ति का शरीर है और वहां पड़ोस के दो या अधिक प्रतिष्ठित निवासियों की उपस्थिति में, अन्वेषण करेगा और मृत्यु के दृश्यमान कारण की रिपोर्ट तैयार करेगा जिसमें ऐसे घावों, अस्थिभंगों, नीलों और क्षति के अन्य चिह्नों का, जो शरीर पर पाए जाएं, वर्णन होगा और यह कथन होगा कि ऐसे चिह्न किस प्रकार से और किस आयुध या उपकरण द्वारा (यदि कोई हो) किए गए प्रतीत होते हैं ।

(2) उस रिपोर्ट पर ऐसे पुलिस अधिकारी और अन्य व्यक्तियों द्वारा, या उनमें से इतनों द्वारा जो उससे सहमत हैं, हस्ताक्षर किए जाएंगे और वह जिला मजिस्ट्रेट या उपखंड मजिस्ट्रेट को तत्काल भेज दी जाएंगी ।

(3) जब –

(i) मामले में किसी स्त्री द्वारा उसके विवाह की तारीख के सात वर्ष के भीतर आत्महत्या अंतर्वलित है ; या

(ii) मामला किसी स्त्री की उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर ऐसी परिस्थितियों में मृत्यु से संबंधित है, जो यह युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न करती है कि किसी अन्य व्यक्ति ने ऐसी स्त्री के संबंध में कोई अपराध किया है ; या

(iii) मामला किसी स्त्री की उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर मृत्यु से संबंधित है और उस स्त्री के किसी नातेदार ने उस निमित्त निवेदन किया है ; या

(iv) मृत्यु के कारण की बाबत कोई संदेह है ; या

(v) किसी अन्य कारण पुलिस अधिकारी ऐसा करना समीचीन समझता है, तब ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए, जो राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त विहित किए जाएं, वह अधिकारी यदि मौसम ऐसा है और दूरी इतनी है कि रास्ते में शरीर के ऐसे सड़ने की जोखिम के बिना, जिससे उसकी परीक्षा व्यर्थ हो जाए, उसे भिजवाया जा सकता है तो शरीर को उसकी परीक्षा की दृष्टि से, निकटतम सिविल सर्जन के पास या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त नियुक्त अन्य अर्हित चिकित्सक के पास भेजेगा ।

(4) निम्नलिखित मजिस्ट्रेट मृत्यु-समीक्षा करने के लिए सशक्त है, अर्थात् कोई जिला मजिस्ट्रेट या उपखंड मजिस्ट्रेट और राज्य सरकार द्वारा या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा इस निमित्त विशेषतया सशक्त किया गया कोई अन्य कार्यपालक मजिस्ट्रेट ।

* * * * *

176. मृत्यु के कारण की मजिस्ट्रेट द्वारा जांच -- (1) जब कोई व्यक्ति पुलिस की अभिरक्षा में रहते हुए मर जाता है या जब मामला धारा 174 की उपधारा (3) के खंड (i) या खंड (ii) में निर्दिष्ट प्रकृति का है तब मृत्यु के कारण की जांच, पुलिस अधिकारी द्वारा किए जाने वाले अन्वेषण के बजाय या उसके अतिरिक्त वह निकटतम मजिस्ट्रेट करेगा जो मृत्यु-समीक्षा करने के लिए सशक्त है और धारा 174 की उपधारा (1) में वर्णित किसी अन्य दशा में इस प्रकार सशक्त किया गया कोई भी मजिस्ट्रेट कर सकेगा, और यदि वह ऐसा करता है तो उसे ऐसी जांच करने में वे सब शक्तियां होंगी जो उसे किसी अपराध की जांच करने में होती ।

(2) ऐसी जांच करने वाला मजिस्ट्रेट उसके संबंध में लिए गए साक्ष्य को इसमें इसके पश्चात् विहित किसी प्रकार से, मामले की परिस्थितियों के अनुसार अभिलिखित करेगा ।

(3) जब कभी ऐसे मजिस्ट्रेट के विचार में यह समीचीन है कि

किसी व्यक्ति के, जो पहले ही गाड़ दिया गया है, मृत शरीर की इसलिए परीक्षा की जाए कि उसकी मृत्यु के कारण का पता चले तब मजिस्ट्रेट उस शरीर को निकलवा सकता है और उसकी परीक्षा करा सकता है ।

(4) जहां कोई जांच इस धारा के अधीन की जानी है वहां मजिस्ट्रेट, जहां कहीं साध्य है, मृतक के उन नातेदारों को, जिनके नाम और पते ज्ञात हैं, इत्तिला देगा और उन्हें जांच के समय उपस्थित रहने की अनुज्ञा देगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा में "नातेदार" पद से माता-पिता, संतान, भाई-बहिन और पति या पत्नी अभिप्रेत हैं ।

* * * * *

198क. भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराधों का अभियोजन – कोई न्यायालय भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 498क के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान ऐसे अपराध को गठित करने वाले तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर अथवा अपराध से व्यथित व्यक्ति द्वारा या उसके पिता, माता, भाई, बहिन या उसके पिता अथवा माता के भाई या बहिन द्वारा किए गए परिवाद पर या रक्त, विवाह या दत्तक ग्रहण द्वारा उससे संबंधित किसी अन्य व्यक्ति द्वारा न्यायालय की इजाजत से किए गए परिवाद पर ही करेगा अन्यथा नहीं ।

* * * * *

पहली अनुसूची

* * * * *

1. भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराध

धारा	अपराध	दंड	संज्ञेय या असंज्ञेय	जमानतीय या अजमानतीय	किस न्यायालय द्वारा विचारणीय है

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
अध्याय 20क – पति या पति के नातेदारों द्वारा क्रूरता के विषय में					
498क	किसी विवाहित स्त्री के प्रति क्रूरता करने के लिए दंड	तीन वर्ष के लिए कारावास और जुर्माना	संज्ञेय यदि अपराध किए जाने से संबंधित इत्तिला पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को अपराध से व्यथित व्यक्ति	अजमानतीय	प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट

Cover iii

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-
5. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

Cover iv

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 47259/88

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन https://bharatkosh.gov.in/product/ product पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in